72वां अंक – जून, 2024

पर्यावरण

सत्यमेव जयते

भारत सरकार

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

नई दिल्ली

एक पेड़ माँ के नाम

विश्व पर्यावरण दिवस, 2024 के अवसर पर दिनांक 05.06.2024 को पौधरोपण करते हुए माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी उनके साथ माननीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेन्द्र यादव और दिल्ली के उप राज्यपाल श्री विनय कुमार सक्सेना

दिनांक 20.06.2024 को पौधरोपण करते हुए माननीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री, राज्य मंत्री तथा दिल्ली के उप राज्यपाल और सचिव, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

मंत्री
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन
भारत सरकार

MINISTER
ENVIRONMENT, FOREST AND CLIMATE CHANGE
GOVERNMENT OF INDIA

सत्यमेव जयते

भूपेन्द्र यादव
BHUPENDER YADAV

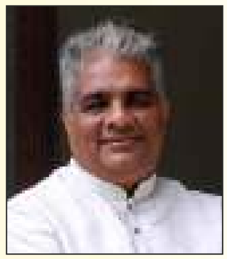

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की 'पर्यावरण पत्रिका' का 72वां अंक प्रकाशित किया जा रहा है। पत्रिका में पर्यावरण से संबंधित ज्ञानवर्धक एवं सारगर्भित सामग्री का समावेश है। आशा है कि पत्रिका में शामिल की गई रचनाएं पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण, वनों, वन्यजीवों, पेड़-पौधों और पर्यावरण की अन्य महत्वपूर्ण वैश्विक चुनौतियों के संबंध में जनमानस के लिए मार्गदर्शक का कार्य करेगी।

आशा करता हूं कि यह पत्रिका अपने उद्देश्यों में सफल होगी। पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए संपादक मंडल को मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

दिनांक : 06 .07.2024

(भूपेन्द्र यादव)

पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली-110003, फोन : 011-20819190, 011-20819187, फैक्स: 011-20819299
Paryavaran Bhawan, Jor Bagh Road, New Delhi-110003, Tel.: 011-20819190, 011-20819187, Fax : 011-20819299
ईमेल / E-mail : mefcc@gov.in

कीर्तवर्धन सिंह
KIRTI VARDHAN SINGH

एक कदम स्वच्छता की ओर

सत्यमेव जयते

राज्य मंत्री
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन
विदेश मंत्रालय
भारत सरकार
MINISTER OF STATE
ENVIRONMENT, FOREST AND CLIMATE CHANGE
EXTERNAL AFFAIRS
GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय अपनी हिंदी पत्रिका 'पर्यावरण' का 72वां अंक प्रकाशित करने जा रहा है। पत्रिका में मंत्रालय के साथ-साथ इसके अधीनस्थ कार्यालयों के अधिकारियों की रचनाओं को शामिल किया गया है। पत्रिका में पर्यावरण से संबंधित अनेक प्रकार की महत्वपूर्ण सूचनाओं के साथ-साथ हिमालयी क्षेत्रों के पर्यावरण के संबंध में जानकारी उपलब्ध कराई गई है जो काफी उपयोगी और ज्ञानवर्धक है। मैं अपनी ओर से पत्रिका के रचनाकारों और संपादक मंडल के सदस्यों को इसके सफल प्रकाशन के लिए शुभकामनायें संप्रेषित करता हूं।

(कीर्तवर्धन सिंह)

कार्यालय : 5वां तल, आकाश विंग, इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली-110003, दूरभाष: 011-20819418, 011-20819421, फैक्स: 011-20819207, ई-मेल : mos.kvs@gov.in
Office : 5th Floor, Aakash Wing, Indira Paryavaran Bhawan, Jor Bagh Road, New Delhi-110003, Tel.: 011-20819418, 011-20819421, Fax: 011-20819207, E-mail: mos.kvs@gov.in
कार्यालय : कमरा नं. 111, साउथ ब्लॉक, नई दिल्ली-110001, दूरभाष : 011-23011141, 23014070, 23794337, फैक्स : 011-23011425, ई-मेल : mos.kvs@gov.in
Office : Room No. 111, South Block, New Delhi-110001, Tel.: 011-23011141, 23014070, 23794337, Fax: 011-23011425, E-mail: mos.kvs@gov.in

लीना नन्दन
LEENA NANDAN

सचिव
भारत सरकार
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
SECRETARY
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF ENVIRONMENT, FOREST AND CLIMATE CHANGE

संदेश

यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय अपनी हिंदी पत्रिका 'पर्यावरण' का 72वां अंक प्रकाशित करने जा रहा है। इस अंक में पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण, वन एवं वन्यजीव संरक्षण, जैव विविधता के साथ-साथ कैक्टस का अनोखा संसार, प्राकृतिक वनस्पतियां, पादप जड़ी बूटियां, कीट-पतंग, भारत में पाए जाने वाले औषधीय वृक्ष, जलवायु परिवर्तन का भारतीय परिवेश पर असर आदि से संबंधित सारगर्भित लेखों एवं पर्यावरण से जुड़ी कुछ भावपूर्ण कविताओं को शामिल किया गया है। यह भी अच्छी बात है कि अब यह पत्रिका छमाही आधार पर प्रकाशित की जाएगी। इस पत्रिका का उद्देश्य पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर एक साथ नवीनतम जानकारी उपलब्ध कराना है।

मुझे आशा है कि यह पत्रिका पर्यावरण के प्रति हमारे दृष्टिकोण एवं ध्येय 'प्रकृतिः रक्षति रक्षिता' को प्रतिबिंबित करेगी। पत्रिका के उद्देश्यों की सफलता के लिए मेरी शुभकामनाएं।

(लीना नंदन)

नई दिल्ली
11 जुलाई, 2024

इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली-110 003 फोन: (011) 2081 9408, 2081 9308, फैक्स: 011-2081 9238
INDIRA PARYAVARAN BHAWAN, JOR BAGH ROAD, NEW DELHI-110 003, Ph.: 011-2081 9408, 2081 9308, Fax: 011-2081 9238
E-mail : secy-moef@nic.in, Website : moef.gov.in

सत्यजित मिश्रा
संयुक्त सचिव
SATYAJIT MISHRA
JOINT SECRETARY

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF ENVIRONMENT, FOREST
& CLIMATE CHANGE

संदेश

यह खुशी की बात है कि पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की पत्रिका 'पर्यावरण' का 72वां अंक पर्यावरण के विभिन्न विषयों पर नवीनतम जानकारी उपलब्ध कराने के लिए समर्पित है। पर्यावरण पत्रिका के माध्यम से हमारा यह प्रयास रहता है कि मंत्रालय और इसके क्षेत्रीय व अधीनस्थ कार्यालयों के कार्यकलापों और नवीन अनुसंधानों की जानकारी आमजन तक हिंदी भाषा में पहुंचे।

पत्रिका के इस अंक में हमारे मंत्रालय और इसके क्षेत्रीय एवं अधीनस्थ कार्यालयों सहित भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों व विभागों के अधिकारियों/कर्मचारियों द्वारा लिखे गए पर्यावरण विषयक उत्कृष्ट लेखों एवं कुछ भावपूर्ण कविताओं को शामिल किया गया है। मैं उन सभी अधिकारियों और कर्मचारियों को शुभकामनाएं देता हूं जिन्होंने इस पत्रिका में अपने लेख के माध्यम से जनमानस तक पर्यावरण विषयक जानकारी पहुंचाने का प्रयास किया है। पत्रिका के लिए राजभाषा प्रभाग का महत्वपूर्ण योगदान भी प्रशंसनीय है। आशा है कि पत्रिका का यह अंक वन्यजीव, पेड़-पौधे, पर्यावरण संरक्षण, औषधीय पौधों में रुचि रखने वाले व्यक्तियों के लिए काफी उपयोगी होगा।

पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए मेरी ओर से शुभकामनाएं। मैं आशा करता हूं कि पत्रिका का यह अंक अपने उद्देश्यों को पूरा करते हुए भावी पीढ़ी के लिए पथप्रदर्शक और प्रेरणादायी होगा।

स. मिश्रा

(सत्यजित मिश्रा)

प्रथम तल, अग्नि विंग, इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली-110003
दूरभाष: 011-20819232, फैक्स: 011-20819137, ईमेल : satyajit.mishra@nic.in
1st Floor, Agni-Wing, Indira Paryavaran Bhawan, Jor Bagh Road, New Delhi-110003
Tel.: 011-20819232, Fax : 011-20819137, E-mail : satyajit.mishra@nic.in

प्रधान संपादक की कलम से

प्रिय पाठक,

मंत्रालय की 'पर्यावरण' पत्रिका का 72वां अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है।

आज प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन वैश्विक समस्या बनते जा रहे हैं। पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ रहा है। सभी मौसमों में परिवर्तन देखने को मिल रहा है। विश्व भर में बाढ़, सूखा, तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। ऐसे में पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने के लिए जरूरी है कि हम प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और उपयोग संतुलित मात्रा में करें। 'पर्यावरण' पत्रिका का उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशील बनाना है।

'पर्यावरण' के इस अंक में पर्यावरण संरक्षण, पारिस्थितिकी, प्रदूषण, वानिकी, जलवायु परिवर्तन, कीट पतंग, औषधीय वृक्ष, फल-फूल, कैक्टस, वन एवं वन्यजीव संरक्षण, जैव विविधता आदि पर ज्ञानवर्धक और उत्कृष्ट लेखों को संकलित किया गया है।

यह बेहद खुशी की बात है कि दिनांक 20 दिसम्बर, 2023 को माननीय मंत्री जी की अध्यक्षता में आयोजित मंत्रालय की हिंदी सलाहकार समिति की बैठक में समिति के सदस्यों द्वारा 'पर्यावरण' पत्रिका के 71वें अंक की प्रशंसा की गई और पत्रिका को वर्ष में दो बार प्रकाशित करने का सुझाव दिया गया। माननीय मंत्री महोदय के निदेशानुसार अब 'पर्यावरण' पत्रिका का प्रकाशन छमाही आधार पर किया जाएगा। इस क्रम में वर्ष 2024 की प्रथम छमाही का अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है।

इस अंक के संकलन, संपादन और प्रकाशन के लिए मैं संपादक मंडल के सभी सदस्यों को बधाई देती हूं जिन्होंने अपने राजभाषा संबंधी दायित्वों के निर्वहन के साथ-साथ पत्रिका के प्रकाशन से संबंधित कार्यों को संपन्न करने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया। मैं पत्रिका में संकलित लेखों के लेखकों को भी उपयोगी और ज्ञानवर्धक लेख उपलब्ध कराने के लिए बधाई देती हूं। आशा करती हूं कि यह अंक आप सभी का ज्ञानवर्धन करने में सफल होगा।

पत्रिका के इस अंक के बारे में प्रबुद्ध पाठकों के सुझाव सादर आमंत्रित हैं। मेरा अनुरोध है कि मंत्रालय की इस महत्वपूर्ण पत्रिका को और अधिक रोचक, ज्ञानवर्धक और सारगर्भित बनाने में अपना बहुमूल्य सहयोग और सुझाव दें।

(उर्मिला हरित)

पर्यावरण

(पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की पत्रिका) (72वां अंक जून, 2024)

संरक्षक

सुश्री लीना नंदन

सचिव, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

मार्गदर्शन

श्री सत्यजित मिश्रा

संयुक्त सचिव एवं राजभाषा प्रभारी

प्रधान संपादक

सुश्री उर्मिला हरित

निदेशक (राजभाषा)

संपादक

श्री चांद किरण बेदी

उप निदेशक (राजभाषा)

उप–संपादक

श्री नारायण मत्या एल.

सहायक निदेशक (राजभाषा)

संपादन सहयोग

श्री परमानन्द शर्मा, परामर्शी (राजभाषा)

श्री प्रवीण कुमार, वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी

श्री ताराचंद यादव, कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी

टंकण सहयोग

श्री किरणपाल, कार्यालय सहायक

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल उनके विचारों से सहमत हो। लेख/कविताओं की मौलिकता एवं प्रमाणिकता के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	रचना	रचनाकार (सर्वश्री / श्रीमती / सुश्री)	लेख / कविता	पृष्ठ
1.	पर्यावरण संरक्षण और जीविकोपार्जन में बांस का महत्व	रवि शंकर प्रसाद, रिकेश कुमार, मंजुएल जोजो	लेख	1
2.	हमारे सच्चे और अच्छे मित्र पेड़–पौधे – मेहंदी के संदर्भ में	दिपाली मोहन	लेख	5
3.	ग्रामीण अंचल के आर्थिक विकास में कृषि वानिकी की भूमिका	डॉ. प्रतिमा पटेल	लेख	8
4.	छोटे–छोटे कीटों में छुपा है बहुत सारा अद्भुत विज्ञान और रहस्य : ओलेपा जेडएसआई कलावटे 2020 एक उदाहरण	अपर्णा एस. कलावटे	लेख	11
5.	कैक्टस का अनोखा संसार	डॉ. नवीन कुमार बैहरा	लेख	13
6.	भांग (कैनाबिस सैटाईवा) : बहुपयोगी पौधा	डॉ. जोगिंदर सिंह, अक्षिता शर्मा, डॉ. जगदीश सिंह	लेख	19
7.	सतत भूमि प्रबंधन प्रथाओं पर वैज्ञानिक गतिविधियों और नीतियों पर एक दृष्टिकोण	डॉ. निवेदिता गुरू	लेख	22
8.	विश्व पर्यावरण दिवस	उत्तम कुमार मिश्र	कविता	25
9.	ब्रेसिका परागणक : ट्रू बग (हेमिप्टेरा: हेटेरोप्टेरा) रेपसीड–सरसों के संभाव्य परागणकर्ता	श्वेतापदमा दाश, अमर्त्य पाल, राहुल मंडल	लेख	27
10.	पूर्वोत्तर भारत में बांस की प्ररोहों का महत्व	सोनकेश्वर शर्मा, परिस्मिता हाजरिका	लेख	31
11.	अगरवुड : उत्तर–पूर्व भारत का सुगंधित खजाना	राजीब कुमार बोरा, निमिषा बरुआ	लेख	34
12.	पतंग भोजन : असम की विभिन्न जनजातियों की पारंपरिक भोजन आदतें	अरबिन्द डेका	लेख	37
13.	फूलों की घाटी (वैली ऑफ फ्लावर्स) की जैव–विविधता	विपिन राव	लेख	43
14.	स्टीविया – एक औषधीय जड़ी बूटी	अखिल कुमार	लेख	52
15.	भारतीय परिप्रेक्ष्य में पनसीरा का स्थान	डॉ. अश्वनी कुमार, मनोज कुमार	लेख	54
16.	जलवायु परिवर्तन : इक्कीसवीं शताब्दी की सबसे बड़ी चुनौती	सोनी कुमारी	लेख	57
17.	प्रदूषण का बढ़ता प्रभाव	स्मृति पंवार	कविता	60
18.	संदेसे आते हैं	गिरिजा अरोड़ा	लेख	62

क्र.सं.	रचना	रचनाकार (सर्वश्री / श्रीमती / सुश्री)	लेख / कविता	पृष्ठ
19.	प्रिंसेपिया यूटिलिस (भिकल): एक महत्वपूर्ण जंगली खाद्य और औषधीय प्रजाति	डॉ. स्वर्ण लता	लेख	65
20.	जंगलों से बाजारों तक: जनजातीय आजीविका के लिए जंगली फलों का मूल्य संवर्धन	मनीष कुमार विजय	लेख	68
21.	बदलता पर्यावरण	नैन्सी कुमारी	लेख	71
22.	राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय	नाज रिज़्वी, हरप्रीत कौर कालरा	लेख	74
23.	गंभीर रूप से संकटग्रस्त – गोडावन (ग्रेट इंडियन बस्टर्ड–GIB)	दत्तात्रय बिभीषण शेरे	लेख	78
24.	हिमाचल प्रदेश के मनाली वन्यजीव अभयारण्य पर पर्यावरणीय व मानवजनित प्रभाव	ट्विंकल ठाकुर, केसर चंद	लेख	80
25.	प्रकृति का संतुलन	शिवाजी चरण पण्डा	कविता	84
26.	हिमाचल प्रदेश : पारिस्थितिकी तंत्र, स्थानीय संबंध, संरक्षण और विकास	सुमति राठौर, राकेश कुमार सिंह	लेख	86
27.	महाराष्ट्र की रॉबर्स गुफा : एक छिपा हुआ जैव खजाना	अपर्णा एस. कलावदे, पूजा कुमार मिसाल	लेख	89
28.	भोजन के रूप में कीटों का उपयोग: सतत उपयोग और प्रसंस्करण	ऋषि ऋचा, शबनम शौकत, देवांशु गुप्ता, रोहिताश्व कुमार और धृति बनर्जी	लेख	91
29.	जल प्रदूषण	डा. वासंती रामचंद्रन	लेख	97
30.	ग्रेविमेट्रिक विश्लेषणात्मक प्रयोगों में उच्च दक्षता के सफलतम प्रयास	मयंक निम्बार्क	लेख	101
31.	प्रदूषण	आकाश गुलशन	लेख	113
32.	धरती की व्यथा	आशा. एस.	कविता	116
33.	एक नया जीवन या एक अंत	करन कुमार	लेख	117
34.	प्रदूषण की समस्या के कारण एवं रोकने हेतु सुझाव	अनिल कुमार	लेख	120
35.	हिमाचल प्रदेश में जल–मौसमिक आपदाएं : समस्या, प्रभाव और संभावित समाधान	साक्षी ठाकुर, राकेश कुमार सिंह और रेनू लता	लेख	124
36.	पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय में राजभाषा नीति का कार्यान्वयन	राजभाषा प्रभाग	रिपोर्ट	127

पर्यावरण संरक्षण और जीविकोपार्जन में बांस का महत्व

रवि शंकर प्रसाद, मुख्य तकनीकी अधिकारी
रिकेश कुमार, सीनियर रिसर्च फेलो
मंजुएल जोजो, प्रोजेक्ट असिस्टेंट
भारतीय वानिकी अनुसन्धान एवं शिक्षा परिषद्,
वन उत्पादकता संस्थान, रांची, झारखण्ड

बांस, गरीब आदमी की लकड़ी, पूरे भारत में व्यापक रूप से सुलभ सबसे महत्वपूर्ण वानिकी प्रजातियों में से एक है। देश के अधिकांश राज्यों में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कायम रखने में बांस का बड़ा योगदान रहा है। बांस लाखों ग्रामीण लोगों की आजीविका को बनाए रखने के लिए आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत रहा हैं। बांस का बड़ी मात्रा में उपयोग कच्चे माल के रूप में कागज और लुगदी उद्योगों, हस्तशिल्प, आवास, ग्रामीण और कृषि अनुप्रयोगों और पैकिंग उद्योग आदि में किया जाता है। भारत दुनिया में बांस का सबसे बड़ा क्षेत्र और दूसरा सबसे बड़ा भंडार है। यह जम्मू और कश्मीर को छोड़कर सभी राज्यों में ज्यादातर नम और पर्णपाती जंगलों में पाया जाता है। भारत के कुल वन क्षेत्र 67.7 मिलियन हेक्टेयर में से, बांस (प्राकृतिक और रोपित दोनों) लगभग 11.4 मिलियन हेक्टेयर में फैला हुआ है। यह देश के कुल वन क्षेत्र का 16.7 प्रतिशत और भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र (329 मिलियन हेक्टेयर) का 3.4 प्रतिशत है (पीएसआई, 2003)। बड़े संसाधन होने के बावजूद, भारत वैश्विक बाजार में केवल 4 प्रतिशत हिस्सेदारी का योगदान है। इसका मुख्य कारण प्रति हेक्टेयर लगभग 0.4 यूनिट की कम उत्पादकता है, जो चीन, जापान और मलेशिया जैसे अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है, जो दुनिया के लगभग 80 प्रतिशत हिस्सेदारी का योगदान करते हैं। बांस शिल्प की उत्पत्ति, सभ्यता की शुरुआत से मानी जाती है जब मनुष्य ने हजारों साल पहले खाद्य फसलों की खेती शुरू की थी। बांस कई उद्योगों के लिए कच्चे माल के एक प्रमुख स्रोत के रूप में उभर रहा है। जैसे बांस की चटाई, टोकरी, कृषि उपकरण, कंघी, सुप, टोपी, बांसुरी, कुमनी, बंसी, बोतल, तीर धनुष, लाठी, चॉपिंग बॉर्ड, लुगदी और कागज, पैनल इत्यादि। विश्व में बांस की 1250 प्रजातियाँ पायी जाती हैं परन्तु भारत में इसकी कुल 136 प्रजातियां मिलती हैं जिसमें 125 स्वदेशी और 11 विदेशी हैं। जो 23 जेनेरा के अंतर्गत आते हैं। 136 प्रजातियों में से 58 केवल उत्तर पूर्वी भारत में पायी जाती हैं।

सभ्यता की शुरुआत से ही बांस ने भारत में लोगों के दैनिक जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बांस शिल्प सबसे पुराने कुटीर उद्योगों में से एक है, जिसका मुख्य कारण बांस की बहुमुखी प्रतिभा, मजबूती, हल्कापन और सरल हाथ के औजारों से आसान काम करने की क्षमता है। बांस का उपयोग निर्माण से लेकर घरेलू उपयोगिताओं तक विभिन्न अनुप्रयोगों के लिए किया जाता है और कागज और लुगदी निर्माण में एक महत्वपूर्ण उपयोग सहित 1,000 से अधिक प्रलेखित उपयोग हैं। आवश्यक उपयोगों की अधिकता के कारण, इसे उपयुक्त रूप से ''गरीब आदमी की लकड़ी'', ''लोगों का मित्र'', ''हरा सोना'' और ''हरित गैसोलीन'' के रूप में वर्णित किया गया है। बांस के महत्व को देखते हुए भारत सरकार ने भारतीय वन अधिनियम 1917 की धारा 2(17) में संशोधन करके गैर–वन क्षेत्र में उगने वाले बांस को भारतीय वन संशोधन अध्यादेश, 2017 के अनुसार परिवहन और आर्थिक उपयोग हेतु कटाई/पारगमन परमिट की आवश्यकता से मुक्त कराया है।

इसमें कोई शक नहीं कि यह दुनिया भर में सबसे महत्वपूर्ण कृषि संयंत्रों में से एक है। यह बायोमास उत्पादन की नायाब दर के साथ तेजी से बढ़ने वाला प्राकृतिक संसाधन है। बांस की 1,200 से अधिक विभिन्न प्रजातियाँ, जो पृथ्वी को 200 बार लपेटने के लिए पर्याप्त हैं, दुनिया भर में पहचानी गई हैं। बांस के मुख्य स्टैंड चीन और भारत में पाए जाते हैं। इसका उपयोग पारिस्थितिक उद्देश्यों जैसे मिट्टी स्थिरीकरण, पहाड़ी पर उत्सर्जन की रोकथाम के लिए किया जाता है। बांस पर बढ़ते शोध का जबरदस्त आर्थिक प्रभाव पड़ा है। कई निर्यात बाजार खोले गए हैं और नवीन उत्पादों का विकास एक सतत प्रक्रिया है। बांस की उपयोगिता का विस्तार हुआ है और इसमें विभिन्न संरचनात्मक समग्र पैनलों में इसका परिवर्तन भी शामिल है। बांस पारिस्थितिक सुरक्षा को बढ़ावा देता है और ग्रामीण विकास, पर्यावरणीय लाभ और आपदा से बचाव में योगदान देता है और सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार करता है। 1945 में हिरोशिमा में परमाणु विस्फोट के बाद पुनर्जीवित होने तथा चारों तरफ हरियाली विकसित करने का इसे गौरव प्राप्त है। इस कारण बांस का अत्यधिक रोपण किया जा रहा है तथा कार्बन फुटप्रिंट और वैश्विक तापन को कम करने में यह अहम भूमिका निभा रहा है।

बांस अपने विशेष गुणों के कारण जलवायु परिवर्तन को कम करने में अहम भूमिका निभा रहा है। बांस कई पौधों की तुलना में अधिक पानी अवशोषित करता है, जिससे मिट्टी की स्थिरता बनाए रखने में मदद मिलती है। यह हवा से प्रति हेक्टेयर 12 मीट्रिक टन हानिकारक कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करता है, जो समान आकार के जंगल से दोगुना है और अधिकांश पौधों की तुलना में 35–45 प्रतिशत अधिक लाभकारी ऑक्सीजन पैदा करता है। एक हेक्टेयर में बांस का रोपण करने से यह प्रतिवर्ष लगभग 18 टन कार्बन अवशोषित करता है, जो पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में अहम भूमिका निभाता है। यह ग्रामीण आजीविका का एक महत्वपूर्ण साधन है। बांस प्रकृति की अदभुत देन है, ये जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य के काम आता है इसकी महत्ता को देखते हुए प्रति वर्ष 18 सितम्बर को विश्व बांस दिवस मनाया जाता है।

हस्तशिल्प क्षेत्र प्रति वर्ष 2.55 मिलियन टन बांस का उपयोग करता है, जिसका उपयोग अगरबत्ती, आइसक्रीम की छड़ें, चॉपस्टिक, खेतों में कृषि उपकरण, सीढ़ी, लाठी, छड़ी, मछली पकड़ने की छड़ें, नाव के मस्तूल बनाने के लिए भी किया जाता है। इसलिए ऐसा कहा गया है कि बांस का उपयोग जन्म से लेकर मृत्यु तक किया जाता है (Cradle to Coffin)। भारत में केवल पूर्वोत्तर क्षेत्र में लगभग 90 मिलियन टन कच्चे बांस का उत्पादन होता है जिसका कुल मूल्य 5,000 करोड़ रूपये आंका गया है। बांस की आधुनिक उपयोगिता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि आज बांस के अवरोधक बनाए जा रहे हैं। भारत में पहली बार इसका निर्माण वानी–वरोडा राजमार्ग, विदर्भ, महाराष्ट्र में किया गया है। इसमें भालू बांस (Bammbusa balcooa) का उपयोग किया गया है, क्योंकि यह सबसे मजबूत बांस होता है। यह विश्व का पहला बांस निर्मित अवरोधक है। इसके अलावा बेंगलुरु में केम्पेगौड़ा अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा टर्मिनल 2 का निर्माण पहली बार बांस के इस्तेमाल से किया गया है। इसमें मोसो बांस (Phyllostachys edulis) का इस्तेमाल किया गया है। यह अपने आप में बांस की अहम भूमिका को दर्शाता है।

बांस के कुछ आधुनिक अनुप्रयोग हैं: खाद्य प्रसंस्करण उद्योग, लकड़ी का प्रतिस्थापन, बुनियादी ढांचे, हस्तशिल्प में संरचनात्मक अनुप्रयोग, अगरबत्ती उद्योग, निर्माण, लुगदी और कागज, फर्नीचर और घरेलू सामान, खाद्य और पोषण, स्वास्थ्य और दवा उद्योग वैकल्पिक ऊर्जा, रेशा बनाने में (धागा), बांस चारकोल साबुन, आभूषण, चूड़ी, बाली, हेयर क्लिप, कंघी इत्यादि। बांस आज एक प्रमुख गैर–लकड़ी वन उत्पाद और लकड़ी का विकल्प है और सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। स्वास्थ्यवर्धक सब्जी (बांस की कोंपल) के रूप में इसका उपयोग भी पिछले कुछ वर्षों में बढ़ रहा है। 'गरीब आदमी के पेड़' से उच्च तकनीक वाले औद्योगिक कच्चे माल और लकड़ी के विकल्प के रूप में अपनी छवि को तेजी से बदलते हुए बांस को अब विश्व स्तर पर गरीबी उन्मूलन और आर्थिक और पर्यावरणीय विकास में एक महत्वपूर्ण आर्थिक संपत्ति के रूप में मान्यता दी गई है। भारत में बांस किसानों की आय में काफी वृद्धि करता है। बांस की कोपलें

चीन द्वारा जापान, अमेरिका, जर्मनी, सऊदी अरब और डेनमार्क को निर्यात की जाती हैं और भारत में संधना (Tender bamboo shoots) के रूप में ताजा और किण्वित उत्पाद घरेलू खपत के लिए तैयार किए जाते हैं। राष्ट्रीय वन नीति, 1988 में लोगों की आजीविका बढ़ाने का प्रावधान है। अपने बहुमुखी अनुप्रयोगों के कारण बांस को 'हरा सोना' भी कहा जाता है और इसमें ग्रामीण आबादी को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने की क्षमता है। घरेलू बांस अर्थव्यवस्था को उत्पादन से उपभोग तक विकसित करने में आने वाली चुनौतियों और कार्यों को संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण बांस की अधिकांश प्रजातियाँ एक शताब्दी में केवल 2 से 3 बार ही बीज देती हैं और बीज व्यवहार्यता केवल अल्प अवधि के लिए होती है। रोपण सामग्री के रूप में प्रकंद का मौजूदा उपयोग न केवल अपर्याप्त और महंगा है, बल्कि अधिकांश बांस में झुरमुट बनाने से विकास के बजाय स्थानांतरण हो रहा है।

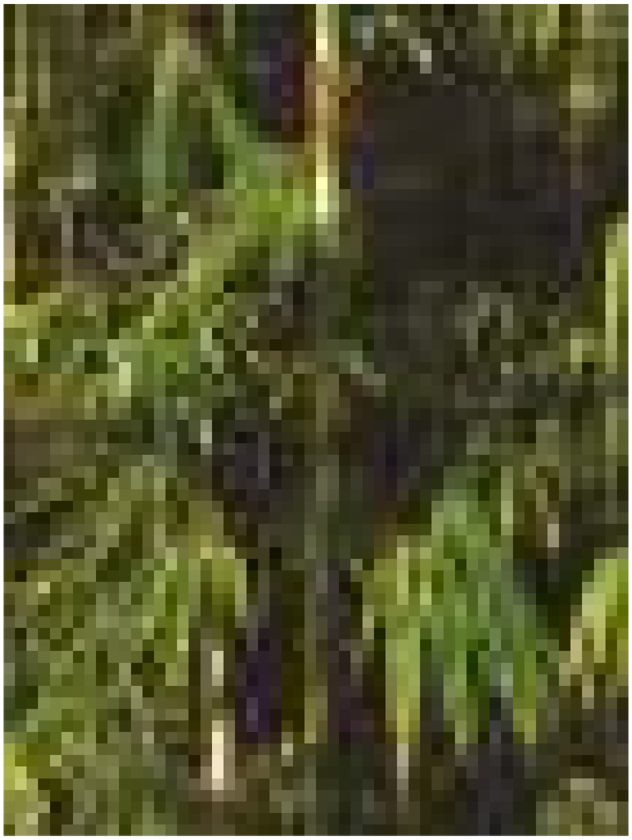

*****

हमारे सच्चे और अच्छे मित्र पेड़–पौधे–मेहंदी के संदर्भ में

श्रीमती दिपाली मोहन
नेरीवालम, तेजपुर, असम

**दोस्ती और मेहंदी में फर्क नहीं होता, दोनों एक काम कर जाती हैं।
जिंदगी की खुशियां में रंग भर देती है, और खुद फना हो जाती हैं।**

हमारे चारों तरफ पाया जाने वाला हम सबका जाना पहचाना, एक ऐसा पौधा है जिसका नाम है–मेहंदी। भारत के घर–घर में मेहंदी का प्रयोग होता है। मेहंदी एक प्रकृति से मिला हुआ श्रृंगार का वरदान है जो हर नारी का प्रिय है। इसे हाथों, पैरों, बाजुओं आदि पर लगाया जाता है। एक वाक्य में कहा जाए तो मेहंदी खुद को मिटाकर हमारी एक सच्चे और अच्छे दोस्त का फर्ज निभाती है।

मेंहदी डाई का सबसे पहला उपयोग प्राचीन बेबिलोन और मिस्र में देखा जा सकता है। भारत में इसका प्रयोग चौथी शताब्दी तक प्रचलित था, जिसका प्रमाण दक्कन क्षेत्र की गुफा कलाओं से मिलता है। मेहंदी का एक अस्थायी शारीरिक कला रूप है, जिसे मेहंदी का उपयोग करके त्वचा पर चित्रित किया जाता है। मेंहदी का उपयोग बालों, नाखूनों और कपड़ों को रंगने के लिए भी किया जा सकता है और एक समृद्ध और अस्थायी व स्थायी रंग बनाने के लिए इसे एक पौधे से प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार की शारीरिक कला की उत्पत्ति मूल रूप से प्राचीन मिस्र में हुई थी लेकिन यह भारत में त्वचा पर उपयोग की जाने वाली चीज बन गई। मेहंदी की रस्म की परंपरा वैदिक काल से ही चली आ रही है। ऐसा माना जाता है कि खूबसूरत राजकुमारी क्लयोपेट्रा ने अपने शरीर को रंगने के लिए मेहंदी का इस्तेमाल किया था। तभी से मेहंदी की रस्म की परंपरा की शुरुआत हुई है।

ऐसा भी माना जाता है कि भारत में मेहंदी का आगाज बारहवीं सदी में मुगल सल्तनत के आगमन के साथ हुआ। मुगल रानियां मेहंदी से अपने हाथों को सजाना पसंद करती थीं। मेहंदी, जिसे हिना भी कहा जाता है, का 1990 के दशक से पश्चिमी देशों में भी प्रचलन होने लगा है। पश्चिम में मेहंदी को आमतौर पर मेहंदी टैटू के रूप में जाना जाता है। अरबी में कहे जाने वाले 'हिना' या 'हीना' एक पुष्पीय पौधा होता है, जिसका वैज्ञानिक नाम लॉसोनिया इनर्मिस है। इसे त्वचा, बाल, नाखून, चमड़ा और ऊन रंगने के काम में प्रयोग किया जाता है। इससे ही मेहंदी भी लगायी जाती है।

भारतीय घरों में त्योहारों और शुभ कार्यों के अवसर पर हाथों और पैरों में मेहंदी लगाई जाती है। तीज, त्योहार और विवाहोत्सव में अक्सर भारतीय घरों की महिलाएं हाथों में मेहंदी रचाती हैं। ऐसा कहा जाता है कि मेहंदी की खुशबू से ही तीज–त्योहार और कोई भी कार्य कितना शुभ होगा, इसका पता चल जाता है। शादी से पहले दूल्हा और दुल्हन को मेहंदी लगाना सबसे पुरानी भारतीय परंपराओं में से एक है। मेहंदी सौभाग्यवती होने की निशानी मानी जाती है। यह दूल्हा–दुल्हन और उनके परिवारों के बीच प्रेम–भावना को दर्शाती है। इसके अलावा दुल्हन की मेहंदी का रंग होने वाली दुल्हन और उसकी सास के बीच भावनात्मक प्रेम को भी दिखाता है। भारत में महिलाएं करवाचौथ, वटपूर्णिमा, दीपावली, भाईदूज, नवरात्रि, दुर्गा पूजा और तीज, ईद–उल फितर और ईदअल–अधा जैसे त्योहारों के दौरान मेहंदी रचाकर आनंदित होती हैं।

दरअसल मेहंदी के पत्तों में लॉसोन नामक पदार्थ पाया जाता है, जिसे हैनोटेनिक एसिड के नाम से भी जाना जाता है। यह कंपाउंड मनुष्य की त्वचा के संपर्क में आते ही उसमें मौजूद केराटिन नामक एक प्रोटीन से प्रतिक्रिया करने लगता है। इसी प्रतिक्रिया के कारण मेहंदी का रंग लाल हो जाता है। शुरुआत में मेहंदी लगाने के बाद मेहंदी का रंग हल्का नजर आता है। लेकिन ज्यादा देर तक लगे रहने से ये काला पड़ जाता है। लॉसोन नामक वर्णक के कारण ऐसा होता है। ये गहरे भूरे–काले रंग देने के लिए त्वचा की कोशिकाओं, कोलेजनी और केराटिनी (नाखूनों और बालों में) के साथ बंध जाता है।

हम सभी जानते हैं कि हाथों को रंग देने के अलावा भी मेहंदी एक बहुत ही शक्तिशाली औषधीय जड़ी–बूटी भी है। मेहंदी को संस्कृत में 'मदयन्तिका' कहा गया है, 'सुश्रुत संहिता' में इसका जिक्र औषधि के रूप में किया गया है।

- मेहंदी लगाने से त्वचा संबंधी कई रोग दूर हो जाते हैं। साथ ही त्वचा की खुश्की भी दूर होती है।
- मेहंदी तिक्त, कषकषा और शीतवीर्य होने से पित्त का नाश करती है, जिससे शरीर में होने वाले दाह और संताप शांत हो जाते हैं।
- यह बालों का झड़ना, बालों का टूटना कम करती है।
- नाखूनों का टूटना आदि समस्या में भी मेहंदी बहुत लाभकारी औषधि है।
- स्कैल्प को आराम देती है, संवेदनशील स्कैल्प के लिए यह बहुत ही उपयुक्त है।

मेरी दादी माँ कहती हैं, मेहंदी सिर्फ लगाने ही नहीं बल्कि खाने के भी काम आती है।

मेहंदी का सेवन करने से शरीर को कई बीमारियों से दूर रखा जा सकता है।

- मेहंदी के पत्तों की तासीर ठंडी होती है। इसमें पर्याप्त मात्रा में पोटाशियम, कैल्शियम, आयरन, मैग्नेशियम, मैंगनीज और फासफोरस पाया जाता है। विटामिन सी पाए जाने के कारण इसका सेवन करने से हिमोग्लोबीन बढ़ाने और शरीर में खून की कमी को दूर किया जा सकता है।
- बदलती लाइफ स्टाइल और गलत खानपान की वजह से आजकल कई लोगों को किडनी स्टोन की समस्या देखने को मिलती है। ऐसे में मेहंदी का सेवन करना किडनी स्टोन से राहत दिलाने में मददगार साबित होता है।
- मेहंदी पारंपरिक औषधि के तौर पर भी काम करती है। इसमें कुछ ऐसे पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो शरीर में एंटीपायरेटिक प्रॉपर्टीज में काम करती हैं। बुखार और शरीर का ताप बढ़ने की समस्या में पैरों और हाथों पर मेहँदी के ताजे पत्ते की पट्टी बांधने की सलाह दी जाती है। मेहंदी की तासीर ठंडी होती है, जो बुखार होने पर शरीर के तापमान को कम करने में मददगार साबित होती है।
- मेहंदी में पर्याप्त मात्रा में एंटीबैक्टीरियल गुण पाए जाते हैं। अगर घाव या शरीर में किसी तरह का फंगल इंफेक्शन हो गया है, तो उस पर मेहंदी के पत्तों को पीसकर लगाने की सलाह दी जाती है।
- मेहंदी में कुछ ऐसे पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो पेट से संबंधित बीमारियों को ठीक करने में

मददगार हैं। पाचन तंत्र को मजबूत करने के लिए मेहंदी के पत्तों को पीसकर हल्के गुनगुने पानी के साथ पीने की सलाह दी जाती है।

मेहंदी या मेंहदी के रूप में प्रचलित इस पौधे को वैज्ञानिकों ने लॉसोनिया इनर्मिस नाम दिया है। यह घनी शाखाओं वाला एक झाड़ीदार या छोटा पेड़ है, इसकी खेती इसके विभिन्न भागों (तने की छाल, जड़ें, फूल और बीज) के लिए की जाती है जिनका उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में किया जाता है। यह उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगता है। अभी भी बहुत से अनुसंधानकर्ता मेहंदी के उपयोग पर शोध कर रहे हैं। इस पर बहुत सी किताबें भी लिखी जा चुकी हैं जिनसे हम मेहंदी के प्रयोग के फायदों के बारे में जान सकते हैं और दूसरों को जानकारी दे सकते हैं।

विवाह बंधन के प्रतीक के रूप में शगुन माने जाने वाली मेहंदी प्रकृति से प्राप्त एक ऐसा वरदान है जो हमें अपने श्रृंगार और अपने शरीर को स्वस्थ बनाने में बहुत ही लाभदायक है। मेहंदी की तरह ही बहुत से पेड़–पौधें हैं जो हमारी जिंदगी में एक अच्छे मित्र की तरह काम आते हैं। हमें भी उनके साथ एक अच्छे दोस्त की तरह पेश आना चाहिए और ऐसे पेड़–पौधों को हमारे घर के बगीचे में, कार्यालयों में, सामाजिक पार्क आदि में स्थान देना चाहिए। ऐसे पेड़–पौधों के संरक्षण की पूरी तरह व्यवस्था तथा जिम्मेदारी हम सभी भारतीय नागरिकों को लेनी चाहिए जो हमारे जीवन तथा देश की मूल्यवान सम्पदा में एक है।

*****

ग्रामीण अंचल के आर्थिक विकास में कृषि वानिकी की भूमिका

डा. प्रतिमा पटेल,
परीक्षा नियंत्रक / वैज्ञानिक–ई
वन.अ.स.सम विश्वविद्यालय,
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

पुरातन काल से ही हमारे देश में कृषि फसलों एवं पशुओं के साथ वृक्षों को शामिल किया जाता रहा है। कृषि क्षेत्र में कृषि–वानिकी एक उपयोगी और कृषकों के लिये सहायक कृषि पद्धति थी, हरित क्रांति के दौर में इस पद्धति के महत्व को अनदेखा किया गया या भुला दिया गया था। पिछले कुछ दशकों से पुनः इसके महत्व को स्वीकार किया गया। आज के युग में भी किसानों और लघु उद्यमियों द्वारा कृषि वानिकी पद्धति को अपनाकर कृषि और वन उत्पाद से दोहरा लाभ कमाया जा सकता है।

जनसंख्या वृद्धि और शहरीकरण से कृषि योग्य भूमि के क्षेत्रफल संकुचित हुए हैं और पशुओं के चारागाह और चारे में भी कमी आयी है। इमारती और जलाऊ लकड़ी एवं अन्य लघु वन उत्पादों के उत्पादन स्तर में भी गिरावट की संभावना बढ़ी है। कृषि रसायनों के बढ़ते प्रयोग से भूमि की उपजाऊ क्षमता में गिरावट के कारण भविष्य में मनुष्य के लिये खाद्यान्न और पशुओं के लिए चारे की समस्या हो सकती है।

कृषि–वानिकी को अपनाकर खेती योग्य भूमि एवं वनों पर बढ़ती हुई जनसंख्या के दबाव को कम किया जा सकता है एवं मृदा क्षरण और पर्यावरण प्रदूषण को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

कृषि वानिकी का परिचय :

कृषि वानिकी एकीकृत भूमि प्रबंधन के कई रूपों को लागू करने एक व्यवहारिक और कम लागत वाली प्रणाली है। यह प्रणाली वृक्षारोपण, फसल उत्पादन और पशुपालन को एकीकृत करती है जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अत्यंत उपयुक्त है। यह एक गतिशील, पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने वाली प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन प्रणाली है।

कृषि वानिकी की पद्धतियां कृषि वानिकी के अंतर्गत खेत के चारों ओर मेडों पर और खेतों के अंदर दो या तीन पंक्तियों में एक निश्चित दूरी में फसलों के साथ वृक्षों को रोपित किया जाता है। रोपित वृक्षों के मध्य दूरी इस तरह से रखी जाती है कि उसके मध्य कृषि फसलों झाड़ियों व अन्य जड़ी बूटियों आदि को रोपित किया जा सके तथा पशुपालन व अन्य कृषि कार्य आसानी से किए जा सकें।

स्थानीय पर्यावरण, उपलब्ध स्थान और स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कृषि वानिकी पद्धति को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है।

मैदानी क्षेत्र में कृषि–वानिकी पद्धति

पहाड़ी क्षेत्र में कृषि–वानिकी पद्धति

1 कृषि–वानिकी पद्धति
2 कृषि–बागवानी पद्धति
3 कृषि–बागवानी–वानिकी पद्धति
4 मत्स्य पालन–वानिकी पद्धति
5 पुष्प बागवानी–कृषि एंव वानिकी पद्धति
6 सब्जी–वानिकी पद्धति
7 चारागाह–वानिकी पद्धति
8 जड़ी बूटी–कृषि वानिकी पद्धति

प्रजातियों की विशेषताएँ

कृषि वानिकी के उचित लाभ प्राप्त करने के लिए नीचे दिए गए प्रकार की प्रजातियों को रोपित करना चाहिए।

1. **शीघ्र बढ़ने वाला**:– कृषि वानिकी के अन्तर्गत ऐसे वृक्षों को उगाना चाहिए जो बहुत तेज बढ़ने वाले हों, जिससे कृषक कम समय में ही उपज प्राप्त कर सकें।

2. **सीधा तना**:– कृषि वानिकी में रोपण हेतु सीधे तने, कम शाखाओं, विरल छत्र व शाख तराशी सहने वाली वृक्ष प्रजातियों के चयन में प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

3. **गहरी जड़ें**:– कृषि वानिकी में लम्बी जड़ों वाले वृक्षों को उगाना बहुत लाभदायक होता है। ये जड़ें भूमि में जाकर नीचे से लाभदायक पदार्थ ऊपर लाती हैं जिससे कृषि फसलों को फायदा पहुंचता है। वृक्षों की मूसला जड़ों की बढ़त इस प्रकार हो कि ये जल से खनिज लवणों के अवशोषण व फसलों की आवश्यकता के साथ सामंजस्य स्थापित कर सकें।

4. **द्विदलीय वाले बीजीय वृक्ष**:– कृषि वानिकी के अन्तर्गत द्विदलीय बीज वाले वृक्ष उगाना अधिक लाभदायक है क्योंकि ऐसे वृक्ष भूमि में नाइट्रोजन जमा करते हैं जो कृषि फसलों द्वारा इस्तेमाल किया जाता है।

आर्थिक विकास में कृषि वानिकी किस प्रकार सहयोगी है।

प्राकृतिक आपदा, बाढ़ व सूखे से फसल नष्ट होने पर कृषकों को आर्थिक क्षति पहुँचती है तथा उनकी अर्थव्यवस्था चरमरा जाती है। उत्पादन अधिक होने पर मूल्य न्यून हो जाने से कृषक को लागत भी प्राप्त नही होती है। कृषि के साथ वृक्ष रोपित करने से उपयुक्त समय व बाजार मूल्य प्राप्त होने पर काटने व बेचने की सुविधा होती है। कृषि वानिकी अपनाकर, कृषक खेती में विविधता लाकर अनाज के साथ ही जलौनी, कृषि औजारों की लकड़ी, पशुओं के लिए चारा आदि निवास के समीप खेतों से प्राप्त कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साथ ही अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर सकते हैं। ईंधन के रूप में प्रयुक्त किए जाने वाले गोबर को जलाने से बचाकर खाद के रूप में प्रयुक्त किए जाने से कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ ही रासायनिक उर्वरक में व्यय होने वाली धनराशि की बचत कर सकते हैं। संक्षेप में कृषि वानिकी अपनाने के निम्नलिखित कारण हैं–

1. कृषि उत्पादन बढ़ाने व आर्थिक उन्नति के साथ रोजगार के प्रत्यक्ष व परोक्ष अवसर प्रदान करने में सहायता करने हेतु।
2. वर्तमान में कृषि कार्य के अयोग्य भूमि के सुधार व उसकी उत्पादकता में वृद्धि हेतु।
3. उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग कर अधिकतम व बहु उत्पाद प्राप्त करने हेतु।
4. बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी एवं कुटीर व लघु उद्योगों हेतु कच्चे माल की कमी निवारण हेतु।
5. उत्पादों की विविधता, प्राकृतिक आपदाओं व अन्न के अधिक उत्पादन के कारण विक्रय मूल्य में कमी से सुरक्षा हेतु।

6. उपलब्ध प्राकृतिक वनों पर जैविक दबाव कम करने हेतु।

7. प्रति इकाई भूमि से अधिक पैदावार प्राप्त करने व भूमि की उत्पादकता में वृद्धि हेतु।

8. वृक्षों की संख्या में वृद्धि कर भूमि व जल संरक्षण एवं पर्यावरण संतुलन स्थापित करने हेतु।

9. ग्रामीण अंचल में उद्यमियों को प्रोत्साहन देने तथा वन आधारित लघु कुटीर उद्योगों की अर्थव्यवस्था सशक्त करने हेतु।

निष्कर्ष

कृषि वानिकी भारतीय अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है। भारत का कृषि क्षेत्र और वन उत्पाद सबसे बड़ा उद्योग है। भारत में लगभग 70 प्रतिशत लोग व्यवसाय के रूप में किसान या श्रमिक हैं लेकिन जीडीपी का हिस्सा महज 18 फीसदी है। यह देश के लगभग 50 प्रतिशत कार्यबल को रोजगार प्रदान करता है। यह भारत में लगभग 135 करोड़ लोगों को भोजन उपलब्ध कराता है। कृषि–वानिकी की एकीकरण प्रणाली से उत्पादन में वृद्धि, विविधता और संवहनीयता आती है जिससे जनमानस को आर्थिक व सामाजिक सहयोग प्राप्त होता है। अतः कृषि–वानिकी देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण कारक है।

*****

छोटे–छोटे कीटों में छुपा है बहुत सारा अद्भुत विज्ञान और रहस्य : ओलेपा जेडएसआई कलावटे 2020 एक उदाहरण

अपर्णा एस. कलावटे
भारतीय प्राणी सर्वेक्षण,
पश्चिमी प्रादेशिक केंद्र,
विद्या नगर, सेक्टर–29, पी.सी.एन.टी. (पीओ),
रावेत रोड, अकुर्डी, पुणे, महाराष्ट्र 411044, भारत

कीड़े मानव जाति के लिए छिपा हुआ खजाना हैं। मैंने ऐसा इसलिए कहा क्योंकि जब हम छोटे थे तो हमें फूड वेब और फूड चेन का महत्त्व सिखाया गया। लेकिन जैसे–जैसे हम बड़े होते गए हम अपने पारिस्थितिकी तंत्र में इन छोटे जीवों की भूमिका को भूलते गए। मैं एक कीटक वैज्ञानिक हूँ और मुझे इनके बारे में नई चीजें खोजना और उनकी भाषा समझना पसंद है। मैं अपने इस लेख से आप सभी को, ऐसे ही एक कीड़े, जिसे हम रात्रि के पतंग यानि 'मॉथ' कहते हैं, के बारे में बताऊँगी।

'मॉथ' वैसे तो तितलियों की प्रजाति है पर इन्हें अक्सर इनके तेजतर्रार भाई तितलियों से कम सराहा गया है। मॉथ तितलियों से कई अधिक संख्या में पाए जाते हैं। दुनिया भर में मॉथ की लगभग 1,60,000 प्रजातियाँ हैं और सैकड़ों की पहचान अभी तक नहीं की जा सकी है। दुनिया का सबसे छोटा मॉथ 'पैग्मी सॉरेल मॉथ' है जिसके पंखों का फैलाव मात्र 2.65 मिलीमीटर है। एटलस मॉथ, जिसके पंखों का फैलाव 27 सेंटीमीटर (लगभग मनुष्य के पंजे से बड़ा) है, दुनिया का सबसे बड़ा मॉथ है। भारत में मॉथ की लगभग 10,000 प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से प्रत्येक का आकार, पैटर्न और रंग अलग–अलग है।

मेरे शोध के दौरान मुझे एक क्रिप्टिक मॉथ का संग्रह मिला, जिसे मैंने पहचानने की कोशिश की। यह मॉथ मुझे वर्ष 2019 में भारतीय प्राणी सर्वेक्षण (जेडएसआई), पुणे के परिसर से मिला था। भारतीय प्राणी सर्वेक्षण संगठन को सम्मानित करने के लिए मैंने इस मॉथ का नाम ओलेपा जेडएसआई रखा है। इन समूह के कीड़ों को क्रिप्टिक (गुप्त) प्रजाति माना गया है जिनकी केवल रूपात्मक लक्षणों और रंग के आधार पर पहचान करना काफी मुश्किल है। चूंकि यह एक क्रिप्टिक मॉथ की प्रजाति है अतः इन्हें एम टी (माइटोकॉन्ड्रियल) सीओआई डीएनए बारकोड (mitochondrial COI DNA Barcode) अध्ययन के लिए रखा गया।

खोज क्यों महत्वपूर्ण है?

ओलेपा मॉथ के लार्वा आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण फसलें जैसे कपास, अरंडी, सूरजमुखी, तिल, मक्का, कुंदरू, बैंगन, शकरकंद, केला आदि को खाते हैं। इसके अलावा कीट को नियंत्रित करने के लिए क्षेत्र में किसी भी नियंत्रण उपाय का उपयोग करने से पहले व्यक्ति को प्रजातियों (नाम और पहचान) का उचित ज्ञान होना चाहिए। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि कोई विशेष प्रजाति एक छोटा कीट है और आर्थिक सीमा स्तर (ईटीएल) को पार नहीं करता है, तो किसी भी

नियंत्रण उपाय को लागू करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्रकृति का अपना संतुलन है। इस पृथ्वी पर पोषण स्तर को बनाए रखने और खाद्य श्रृंखला को संतुलित करने के लिए प्रत्येक प्रजाति महत्वपूर्ण है और इसलिए प्रजातियों का संरक्षण भी महत्वपूर्ण है। हम प्रजातियों का संरक्षण तभी कर सकते हैं जब हमें इसके बारे में उचित जानकारी होगी। मेगा–फौना पर अध्ययन को केंद्रित करने की प्रक्रिया में कीड़ों जैसे सूक्ष्म–फौना पर अध्ययन की उपेक्षा की जाती है जिसमें सूक्ष्म–जीवों की विविधता अधिक है। वे पारिस्थितिकी तंत्र के प्रमुख घटक हैं और इन पर ज्यादा से ज्यादा अध्ययन होना जरूरी है।

डीएनए बारकोड अध्ययन के परिणामों से पता चला कि प्रजातियों के भीतर रूपात्मक रूप से भिन्न दिखने वाले कुछ मॉथ एक समान ही हैं, जो प्रजातियों के भीतर 'मॉर्फोटाइप्स' के घटन का स्पष्ट प्रमाण प्रदान करते हैं। लेखक ने मॉथ के अध्ययन में पहली बार **'मोर्फोटाइप'** शब्द का प्रयोग किया। किसे पता था कि एक दिन जो मॉथ मैं रोज देखती थी वो एक नई प्रजाति के रूप में विख्यात होगा।

मॉथ का महत्व?

मॉथ को निवास स्थान और पर्यावरण का संकेतक माना जाता है क्योंकि वे निवास स्थान विशिष्ट होते हैं, इसके अतिरिक्त वे कृषि, बागवानी, वृक्ष, औषधीय और वानिकी पौधों के कीट हैं और रात में खिलने वाले पौधों के परागणकों के रूप में कार्य करते हैं। वे मकड़ियों, घुन, चींटियों, ततैया, पक्षियों, सरीसृपों, उभयचरों, चमगादड़ों आदि जैसे द्वितीयक उपभोक्ताओं के लिए महत्वपूर्ण खाद्य संसाधन हैं।

चित्रः ओलेपा जेडएसआई कलावटे, 2020

*****

कैक्टस का अनोखा संसार

डॉ. नवीन कुमार बौहरा
प्लॉट नं. 389, गली नं.10,
मिल्कमेन कोलानी,
पॉल रोड जोधपुर (राज.)

कैक्टस प्रभाग मैगनोलियोफाइडा एवं परिवार कैक्टेसी के सदस्य हैं। इनका सामान्यतः सजावटी पौधों के रूप में उपयोग किया जाता है, परन्तु कई प्रकार के कैक्टस की खेती फसल पौधे के रूप में भी की जाती है। ये मूलरूप से उत्तरी अमेरिका के हैं तथा दक्षिण अमेरिका, वेस्ट इंडीज, भारत के शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में कुछ स्थानों पर जंगली पौधों के रूप में उगाए जाते हैं।

कैक्टस आमतौर पर कांटेदार होता है तथा इसकी लगभग 130 जीनस एवं 1500 प्रजातियां होती हैं कैक्टस कई प्रकार के आकार एवं आकृतियों में मिलते हैं। इसका लम्बा सदस्य **''पचीसेरियस प्रिगलेई''** है जो 19.2 मीटर तक ऊँचा है तथा सबसे छोटा **''ब्लास्फेल्डिया लिलिपुटियाना''** है जो परिपक्वता के समय मात्र 1 से.मी. व्यास का होता है।

कैक्टस के फूल बड़े होते हैं और इनमें कांटों की तरह एरोल्स से शाखाएं निकलती हैं। अनेक कैक्टस प्रजातियां रात में खिलती हैं क्योंकि वे रात के समय कीड़ों या छोटे जीवों मुख्यतः पंतगों एवं चमगादड़ों द्वारा परागित होती हैं। इनमें इचिनोप्सिस, मम्मिलारिया एवं सरेस के सदस्य शामिल हैं। **''ओपन्शिया फिक्स–इंडिका''** आज कृषि में सबसे महत्वपूर्ण कैक्टस प्रजाति एवं प्रथम फल–फसल है जो विशेष रूप से अर्ध शुष्क एवं गैर सिंचित भूमि के लिए अनुकूल है। इसकी भोजन, चारा, डाई आदि के साथ ऊर्जा के स्रोत के तंत्र सुधार में प्रमुख भूमिका है। कैक्टस की प्रजातियाँ अनेक औषधीय महत्व की भी हैं।

मैक्सिको, अमेरिका, स्पेन, इटली एवं उत्तरी अफ्रीका में कैक्टस लोगों की आहार आवश्यकता का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। ताजे फलों की उत्कृष्ट गुणवत्ता और स्वाद के साथ इसकी नई पत्तियां पौष्टिक सब्जी एवं सलाद के रूप में भी काम में ली जाती हैं।

भारत में आबादी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा वर्षा आधारित शुष्क क्षेत्रों में बसा हुआ है जहाँ पर सूखा प्रतिरोधी एवं आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पौधों का उपयोग कर वनस्पतियों से भूमि का कटाव भी रोकते हैं। इस हेतु **''कैक्टस''** आजीविका बनाए रखने, गरीबी कम करने और रोजगार के अवसर पैदा करने हेतु एक उपयुक्त विकल्प प्रतीत होता है। कैक्टस अपनी कार्बन डाई ऑक्साइड स्थिरीकरण क्षमता (CAM) के कारण सूखा सहिष्णु है तथा शुष्क क्षेत्रों में वैकल्पिक भोजन और चारे के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसे भारत में कृषि की रक्षा के लिए जीवन्त बाड़ के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। कीटों एवं बाढ़ आदि के कारण पौधरोपण नष्ट हुआ है।

कैक्टस की खेती शुरू करने हेतु 1980 के दशक के अंत में प्रयास शुरू किए गए। **(सिंह 2006)** पिटाया **(स्टेनोसेरियस ग्रिसियस)** नामक एक कैक्टस फल है जिसका उपयोग दक्षिणी मैक्सिको में प्राचीन काल से आहार के पूरक के रूप में उपयोग में किया जाता रहा है। इस क्षेत्र में अमेरिला, जर्रा, मेलोन, केमा और ओला जैसे लगभग 30 प्रकार के कैक्टस की पहचान की गई है। ओला एवं जर्रा सर्वोतम गुणवत्ता एवं प्रसंस्कृत बाजार में ताजा फल वाले गुणों के लिए पहचाने जाते हैं। आस्ट्रेलिया जैसे कुछ देशों में जल प्रतिबंधों के

चलते सूखा प्रतिरोधी कैक्टस अधिक लोकप्रिय हो रहे हैं।

औषधीय उपयोग :– कैक्टस मुख्यतः पारम्परिक रूप से एक मूल्यवान स्वास्थ्य सहायक पोषक तत्व के रूप में उपयोग किया जाता है। ओपन्शिया प्रजाति के वानस्पतिक भागों का आधुनिक शोषण और चिकित्सा के रूप में इनका उपयोग कम किया जाता है तथा इसका अनुप्रयोग फार्मास्यूटीकल उद्योगों में भी होता है। इसी प्रकार पिपोट (लोफोफोरा विलियम्साई) नामक कैक्टस का अर्क केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को उत्तेजित करने, रक्तचाप, नींद, भूख और प्यास आदि को नियंत्रित करने से जुड़ा हुआ है। लोफोफोरा विलियम्साई में मनो–सक्रिय गुण भी होते हैं। इसी प्रकार **''ओपन्शिया स्ट्रेप्टाकाथा''** डायलायस्टे को गैर–इंसुलिन निर्भर मधुमेह मेलिटस (NIDDM) के ईलाज में एक नए दृष्टिकोण के रूप में माना जा सकता है। कांटेदार कैक्टस का व्यापक रूप से जले हुए घाव, सूजन और अपच के लिए दवा के रूप में उपयोग किया जाता है और यह भी पाया गया है कि फल के अर्क का प्रभाव तने के अर्क की तुलना में बेहतर होता है। कैक्टस फल में विटामिन सी एवं सफाई के गुण होते हैं। इसके फल के सेवन से शरीर के रेडॉक्स संतुलन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसके लिपिड़ में ऑक्सीडेन्ट क्षति कम हो जाती है एवं एन्टी ऑक्सीडेन्ट क्षति में सुधार होता है विटामिन–सी की पूरक डोज एंटीआक्सीडेन्ट सुरक्षा को बढ़ावा देती है लेकिन शरीर के ऑक्सीडेटिव तनाव को प्रभावित नहीं करती है।

कैक्टस के फलों में एन्टीऑक्सीडेन्ट यौगिकों के अध्ययन के अनुसार बैंगनी छिलके वाली किस्मों में कैम्फेरोल एवं हरी छिलके वाली किस्मों में आइसोरहैमनेटिन पाया जाता है। लाल छिलके वाले फलों में सबसे अधिक एस्कार्बिक एसिड होता है एवं पीले छिलके वाले फलों में सबसे अधिक कैरोटीनोइड होता है। थर्मल उपचार से इन पिगमेन्ट की निष्कर्षण क्षमता में वृद्धि हुई एवं फिनोलिक सामग्री कम हुई परन्तु इससे एन्टीऑक्सीडेन्ट गतिविधि पर बहुत कम प्रभाव पड़ा।

एक अध्ययन के अनुसार कैक्टस फलों के अर्क (CPCE) को बढ़ाने से एन्टीऑक्सीडेन्ट एवं डी.एन.ए. क्षति घटाने वाली दोनों गतिविधियां बढ़ जाती हैं। यह दर्शाता है कि फार्मास्यूटिकल एवं कार्यात्मक खाद्य उद्योगों के लिए कच्चे माल के संभावित स्रोत के रूप में (CPFE) घटकों की एंटीऑक्सीडेन्ट एवं डी.एन.ए. क्षति घटाने हेतु यह प्रभावकारी है। एरिजोना कैक्टस के अर्क से चूहों पर किए गए प्रयोग में कैंसररोधी प्रभावों की जानकारी मिली है तथा इस पर विस्तार से अध्ययन की जरूरत है।

कार्डन कैक्टस (पचीसेरियस प्रिंगलेई) के बीच खाने योग्य एवं अत्यधिक पौष्टिक होते हैं और पौधों का उपयोग पारम्परिक चिकित्सा में किया जाता है। (होल्गुइन एट ऑल 1993) इसी प्रकार कैक्टस तेल या कैक्टस के बीज से सीरम कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में (चूहों पर अध्ययन) सहायता मिली है। एक नवीन खाद्य उत्पाद (Neopuntia R – बायो सेरड लेबोरेटरीज का एक ट्रेडमार्क) जो कैक्टस 'ओपन्शिया फिकस–इंडिका की निर्जलित पत्तियों से बने घुलनशील एवं अघुलनशील दोनों फाइबरों का मिश्रण है, इसमें हाइपोल्पेमिक गुण पाए जाते हैं अतः यह लिपिड चयापचय वाले रोगियों के लिए उपयोगी है। सेलेनिकेरियस ग्रैंडिफ्लोरस एवं अन्य प्रजातियों के तनों में एक ग्लूकोसाइड होता है, जो अर्क के रूप में या टिंचर में एक मूत्रवर्धक होता है, जिसमें हृदय सम्बन्धी गुण भी होते हैं। बकहार्न चोला के तनों को जलाकर उसकी राख को कटे एवं जले हुए पर लगाने पर उपयोगी पाया गया है।

फल के रूप में :–

कांटेदार नाशपाती एवं हाइक्लोसेरियस जैसे कैक्टस खाने योग्य फल होते हैं जो ड्रैगन फ्रूट पैदा करते हैं। ओपन्शिया फिकस–इडिका के फल व्यापक रूप से जाने जाते हैं फिर भी कैक्टस के सबसे मीठे फल का उत्पादन करते हुए भी यह एकमात्र फल वाली कैक्टस प्रजाति नहीं है। ओपन्शिया की अन्य प्रजातियां यथा ओपन्शिया ट्यूना, स्ट्रेप्टाकैन्था और कार्डोना की भी आमतौर पर इसी उद्देश्य से खेती की जाती है। विभिन्न सेरेस प्रजातियों और हिलोसेरियस अण्डैट्स के फलों का भी सेवन किया जाता है। **'मायर्टिलोकैक्टस जियोमेट्रिजन्स'** के नीले जामुन मैक्सिकन बाजार में **'गरमबुलोस'** के नाम से बेचे जाते हैं।

कार्नेडी गिगेटीन के फल भी उत्कृष्ट गुणवत्ता के माने जाते हैं। कूबो (सेरेस पेरुवियनस) एक व्यावसायिक रूप में उगाया जाने वाला स्तंभाका कैक्टस है, जो सेब के आकार का बेरी जैसा खाने योग्य फल पैदा करता है। इस फल की अनूठी सुगन्ध मुख्य रूप से **'एस–लिनलूल'** एवं **'लिनालूल'** अव्यव के कारण है। हरे अपरिपक्व फलों के विकास के साथ एवं भंडारण के दौरान फलों में अव्यव बढ़ गया। (स्ट्रिट एट ऑल, 2004) जोतिला, कैक्टस के पेड़ का एक फल **''एस्कोन्ट्रिया चिओटिला''** खट्टा मीठा स्वाद वाला एक गैर–क्लाइमेटिक फल है जिसका पी.एच. 4.2 है तथा 10–12 डिग्री ब्रिक्स का है जो इसे प्राकृतिक मिठाई, न्यूनतम संसाधित उत्पाद मय चीनी स्वादिष्ट बनाता है तथा इसके विश्लेषण द्वारा मुख्यतः जैम आदि उत्पादों के लिए इसकी उपयुक्तता निर्धारित करता है।

कैक्टस गर्म शुष्क क्षेत्रों के सबसे विशिष्ट पौधे हैं। ये अपने विभिन्न रूपों की विविधता तथा विषम पारिस्थितिकी में पनपने की अपनी क्षमता के लिए उल्लेखनीय माने जाते हैं। कैक्टस का उपयोग मृदा अपरदन रोकने में, जीवित बाड़ के रूप में विकसित करने तथा अपनी अद्वितीय विशेषताओं के साथ एक वाणिज्यिक फसल के रूप में किया जाता है। कैक्टस को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है तदनुसार, वे असामान्य शारीरिक एवं रूपात्मक विशेषताएँ प्रदर्शित करते हैं। कैक्टस को कई उपयोगी रासायनिक यौगिकों के रूप में जाना जाता है जिनमें पोषण और औषधीय गुण होते हैं।

सब्जी के रूप में उपयोगः– कैक्टस के विभिन्न भागों का उपयोग सब्जी के रूप में एवं सलाद के रूप में भी किया जाता है। हिस्पैनिक लोगों द्वारा लैन्ट के दौरान जंगली कैक्टस के युवा कोमल भागों का बड़े पैमाने पर सेवन किया गया (इसैल एण्ड फैल्कर, 1987) नेपालिटी उत्पादन हेतु कांटेरहित कैक्टस के बागान स्थापित किए गए हैं। वर्ष भर अधिक उत्पादन, कांटों की कमी ग्लोसिड (लगभग सूक्ष्म कांटों) की कमी एवं कम **''लेष्मा वाली एक उन्नत नेपालिटो किस्म''** टेक्सास – ए एवं एम 1308 के रूप में उपलब्ध है। नेपलिटो उत्पादन हेतु ओपन्शिया रोपण केंद्रीय मैक्सिको (मिल्पा अल्टा) में है। इसके क्लोन 1308 से 80–90 टन / हेक्टेयर / वर्ष तक जैवभार उत्पादन हो सकता है। कुछ अमेरिकी एवं अफ्रीकी देशों में इसकी उपज का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है।

चारे के रूप में :– कांटेदार ओपन्शिया उस भूमि पर एक अच्छी वैकल्पिक चारा फसल हो सकती है जो वर्तमान में अन्य फसलों के लिए सीमांत मानी जाती है। (मॉड्रैगन एवं पेरेज 2001) मवेशियों को खाना खिलाने से पहले कांटो को जलाया जाता है। मैक्सिको एवं दक्षिण पश्चिम टैक्सास में मैक्टस बर्नर के रूप में प्रोपेन टार्च का उपयोग कैक्टस स्पाइन को जलाने के लिए किया जाता है।

कैक्टस की पत्तियों में प्रीओटिन्स की मात्रा कम होती है लेकिन वे रुक्षेज के एक बहुत अच्छे स्रोत के रूप में काम कर सकते हैं। विशेष रूप से वर्षा आधारित एवं सूखा संभावित क्षेत्रों में नोपेलिया कोचेनिलिफेरा (ओपन्शिया कोचेनिलिफेरा) प्रजाति का व्यापक रूप से

अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में चारे की फसल के रूप में उपयोग किया जाता है।

बाजार में नहीं बिकने वाली सामग्री का उपयोग डेयरी पशुओं के चारे के रूप में किया जा रहा है। यह दूध को बेहतर स्वाद एवं गुणवत्ता प्रदान करने के साथ मक्खन भी अच्छा बनाता है। एक अध्ययन के अनुसार मकई एवं टिफटन घास के स्थान पर कैक्टस का उपयोग करने से दूध उत्पादन एवं खपत प्रभावित नहीं होती परन्तु कैक्टस के अनुपात में वृद्धि से मध्यम एवं लम्बी श्रृंखला वाले फैटी एसिड के दूध प्रोफाइल में महत्वपूर्ण परिवर्तन पाए गए। टेक्सास में कैक्टस का उपयोग सूखे के समय होता है। 40 किलोग्राम कैक्टस, 0.5 किलोग्राम खनिज लवण एवं 0.5 किलोग्राम प्रोटीन अनुपूरक का प्रयोग मवेशियों के लिए उपयुक्त होता है। (माल्ट्सबर्गर, 1991) दो स्तम्भ वाले कैक्टस, कार्डन डेटो (स्टेनोसेरियस ग्रिसियस) और कार्डन लेफारिया (सेरेस रिपेन्डस) के फल शुष्क क्षेत्रों में भोजन एवं चारे के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

अन्य उपयोग :– इससे मॉक घेरकिस, जैम एवं सिरप तथा पत्तियों से साबुन, मादक पेय बीजों से शहद तथा चीज बनाया जाता है। ओपन्शिया स्ट्रिक्टा को प्राकृतिक लाल रंगों का एक संभावित स्रोत माना जाता है। स्ट्राबेरी की गुणवत्ता बनाए रखने हेतु कोटिंग के रूप में कैक्टस म्यूसिलेज का उपयोग किया जाता है। कैक्टस जीन्स ओपन्शिया का व्यापक रूप से म्यूसिलेज के उत्पादन हेतु प्रयुक्त किया जाता है। म्यूसिलेज एक जटिल कार्बोहाइड्रेट है जिसमें पानी को अवशोषित करने की बड़ी क्षमता होती है तथा इसे इंडस्ट्री में हाइड्रोकोलॉइड का संभावित स्रोत माना जाता है। म्यूसिलेज में एल–अरेबिनोज, डी–गैलेक्टोज, एल, रम्नोज एवं डी–जाइलोज के साथ–साथ गैलैक्टरोनिक एसिड के गुण भी होते हैं। कैक्टस क्लैडोड में पाई

जाने वाली श्लेष्मा न केवल फसल के प्रबंधन से वरन् तापमान, सिंचाई एवं वर्षा से भी प्रभावित होती है। कुछ देशों में छोटे किसान पीने के पानी को शुद्ध करने के लिए कैक्टस म्यूसिलेज का उपयोग करते हैं। इसे स्वर के रंग–रोगन को बेहतर बनाने में भी प्रयुक्त करते हैं। कैक्टस के अर्क का परीक्षण मिट्टी में पानी की छिद्रता के परीक्षण में किया गया है। कैक्टस के क्लैडोड को निर्जलित कर पाऊडर बनाया जाता है जो आहार फाइबर का स्रोत है तथा इसे खाद्य पदार्थों में प्राकृतिक सामग्री के रूप में उपयोग किया जा सकता है। कैक्टस के मूल्य संवर्धन हेतु नई संभावनाओं पर भी शोध किया जा रहा है तथा यह दुनिया के अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए एक नई फसल है।

बाड़ के रूप में :– कैक्टस का उपयोग आमतौर पर बाड़ सामग्री हेतु किया जाता है जहाँ स्थाई बाड़ हेतु प्राकृतिक संसाधनों या वित्तीय संसाधनों की कमी होती है।

कैक्टस (ओपन्शिया फिकस इंडिका, एल. मिल) के बीज के तेल का चूहों में एलोक्सन प्रेरित मधुमेह के प्रतिरोध का मूल्यांकन इंटरनेशनल डाईबिटीज फेडरेशन के अनुसार दुनिया भर में 382 मिलियन लोगों को मधुमेह (डायबिटीज मेलिटस–डी.एम.) है। यह रोग आनुवांशिक प्रवृत्ति व्यावहारिक एवं पर्यावरणीय जोखिम कारकों की परस्पर क्रिया के परिणामस्वरूप होता है। बढ़ते डी. एम. के लिए प्रभावी रोकथाम हेतु कार्य की जरूरत है। सेलुलर मुक्त कणों की असहनीय मात्रा, जिसे रेडॉक्स असंतुलन के रूप में जाना जाता है, हानिकारक है एवं मेजबान कोशिकाओं के लिए घातक हो सकती है। यद्यपि डी.एम. का आनुवंशिक आधार यह साबित करता है कि रेडॉक्स असुंतलन इस पुरानी चयापचय बीमारी के विकास हेतु एक निर्धारक कारक है। यह भी सर्वविदित है कि स्वस्थ आहार एवं नियमित शारीरिक गतिविधियां मधुमेह के उच्च जोखिम वाले रोगियों हेतु फायदेमंद हैं।

एन्टीआक्सीडेन्ट की अच्छी आपूर्ति वाले पोषण तत्वों से, ऑक्सीडेटिव तनाव से प्रेरित 'डी.एम.' को रोकने में सहायक सिद्ध हो सकती है। इस संदर्भ में कई वनस्पति तेल, जिनमें पॉली अनसैचुरेट फैटी एसिड और एन्टीआक्सीडेन्ट (टोकोफेराल, पॉलीफेनाल एवं कार्टेनायड आदि) मधुमेह की जटिलताओं को कम कर इस रोग के विकास को रोक सकते हैं।

कैक्टस (ओपन्शिया फिफस) के बीजों के तेल में उच्च मात्रा में पॉली अनसेचुरेट फैटी एसिड एवं एन्टीआक्सीडेन्ट यौगिक होते हैं जो 'डी एम' प्रबंधन में उपयोगी हो सकते हैं। चूहों पर इसके अध्ययन से पता चलता है: कि इससे मधुमेह जन्म प्रभावों में कमी हुई है। यह संभवतः एन्टीआक्सीडेन्ट यौगिकों की उपस्थिति के कारण होता है। ओपन्शिया के बीज के तेल की रासायनिक संरचना में वसा में घुलनशील विटामिन (टोकोफेरॉल, बीटा कैराटीन एवं विटामिन के. 1) होता है।

अध्ययन के अनुसार डी–अल्फाटोकोफेरॉल समृद्ध चूहों में ऑल–एस प्रेरित मधुमेह से बचाता है। ग्रामा–टोकोफेरॉल में एन्टी–ऑक्सीडेन्ट एवं सूजन रोगी गतिविधियां होती हैं। टोमाश एट ऑल द्वारा प्रयोग में गामा–टोकोफेरॉल समृद्ध तेल का सेवन करने से प्लास्मैटिक एन्टीऑक्सीडेन्ट क्षमता में सुधार की पुष्टि हुई है। यह स्वस्थ नर में कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन को कम करता है। गामा–टोकोफेरॉल अल्फा टोकोफरॉल की तुलना में कम शक्तिशाली एन्टीऑक्सीडेन्ट है तथा यह ऑक्सीकरण से बचाने वाले मेक्रोमोलेग्यूलस में अधिक कुशल है।

इसके अतिरिक्त, फिनोलिक यौगिक ऑल एक्स साइटोटॉक्सिसिटी के विरूद्ध सी.पी.एस.ओ. (CPSO) की सुरक्षा में उपयोगी पाया गया है। कैक्टस, ओपेन्शिया के बीज में 20 से अधिक फिनोलिक यौगिक होते हैं तथा यह उनकी एन्टीऑक्सीडेन्ट गतिविधि से सह–सम्बन्ध होती है। फिनोलिक यौगिकों में उच्च

एन्टी ऑक्सीडेन्ट दक्षता होती है तथा वे अपक्षपी रोगी की देखभाल में प्रभावी होते हैं।

कैक्टस के बीज के तेल में काफी मात्रा में असंतृप्त फैटी एसिड, एन्टीऑक्सीडेन्ट एवं रोगाणुरोधी गतिविधि के साथ–साथ कार्डियोप्रोटेक्टिव, एन्टीथ्रॉम्बोटिक, एन्टी इन्फ्लेमिटरी, एन्टी रैडमिक, हाइपो–लिपिडेमिक एवं एन्टीहाइपर ग्लाइसेमिक प्रभाव पाया गया है। ये गुण फार्मास्यूटीकल एवं खाद्य उद्योग हेतु उचित हैं यद्यपि इन तेलों की सान्द्रता एवं प्रभावशीलता विभिन्न किस्मों, फसल के पर्यावरणीय कारकों (प्रकाश, तापमान एवं मिट्टी के पोषक तत्वों के प्रकार) या उनके निष्कर्षण के लिए उपयोग की जाने वाली विधियों एवं विलायकों के बीच भिन्न हो सकती है। एक शोध कैक्टस की दो मैक्सिकन किस्मों (ओपन्शिया अल्बीकार्या एवं ओपन्शिया फ्रिक्स इन्डिका) के बीजों से प्राप्त तेल की एन्टीऑक्सीडेन्ट एवं रोगाणुरोधी गतिविधि एवं फैटी एसिड प्रोफाइल का निर्धारण हेतु किया गया।

मैक्सिकन एसोसिएशन कोमेन्टुना (कॉन्सेजों द्वारा प्रदत्त कैक्टस की दो मैक्सिकन किस्में ओपन्शिया अल्बिकार्पा एवं ओपन्शिया फिकस इडिका) फल, हरे (कल्टीवर रेयना) एवं लाल (कल्टीवर रोजोपेलोन) पर कार्य किया गया। बाहरी क्षति से मुक्त फलों को धोया गया एवं हाथ से छिला गया। कैक्टस के बीजों से एक औद्योगिक ब्लैन्डर (38 बी. एल, 52 एल बी सी 10 वारिंग कमर्शियल, यू.एस ए) द्वारा तेल निकाला गया।

हरे एवं लाल कैक्टस के बीजों को धूप में सुखाकर फिर पीसकर 1 मि.मी. व्यास की जाली में रखकर 32 डिग्री से.ग्रे. पर संग्रहीत किया गया। 25 ग्राम पाऊडर बीजों को 500 मि.ली. विभिन्न सालवेन्ट के साथ (हेक्सेन, इथेनॉल एव ईथाईल एसीटेट) मिलाया गया एवं प्राप्त अवशेषों को रंगहीन होने तक निष्काषित कर निकाला गया। सभी अर्क को निस्पंदन व्हाटमैन फिल्टर पेपर नम्बर 1 के माध्यम से फिल्टर किया गया तथा फिल्टरित अर्क को रोटरी इवोयरेटर का उपयोग कर 50 डिग्री से.ग्रे. तक गर्म कर विलायक को हटाकर सुखाया गया। सभी अर्क को प्लास्टिक बोतलों में 20 डिग्री से.ग्रे. पर आगे विश्लेषण हेतु रखा गया।

इसमें हरे कैक्टस से तेल की उपज लाल कल्टीवेटर से अधिक थी। दोनों किस्मों के तेल के अर्क में ग्राम पॉजिटिव एवं ग्राम नेगेटिव बैक्टीरिया के खिलाफ उल्लेखनीय गतिविधि पाई गई जो एम्पीसिलीन, स्ट्रेप्टोमाइसिन एवं सल्फामेथोक्सजोल /ट्राइमेथीप्रिम /जैसी रोगाणुरोधी यौगिकों के बराबर पाई गई। यह शोध रोधी गतिविधि के साथ प्राकृतिक, यौगिकों की तलाश करने वाले खाद्य, कॉस्मेटिक एवं फार्मास्यूटीकल क्षेत्रों के लिए एडिटिव्स विकसित करने हेतु प्रोत्साहन प्रदान करता है। इस क्षेत्र में और अधिक अध्ययन की आवश्यकता है।

कैक्टस फेमिली (कैक्टसी) नई दुनिया तक सीमित दूसरा सबसे बड़ा पौधा परिवार है यह संभवतः प्रारम्भिक सेनोजोइक में पेरेस्किया जैसे रिश्तेदार से विकसित हुआ है और उप परिवार यथा प्रीरे–स्कियोडेई, ओपन्शियोइडी एवं कैक्टोइडी में विभाजित किया गया है। ओपन्शिया की उपजाति प्लैटियोपंटिया कनाडा से पैटागोनिया तक व्यापक रूप में फैली हुई है यद्यपि ये गर्म शुष्क रेगिस्तानों की बजाय अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों, जंगलों, घास के मैदानों एवं उष्णकटिबंधीय जंगलों में पाए जाते हैं। इसके पोषण, महत्व औषधीय उपयोगों एवं खाद्य मूल्य पर अनेक शोधों के बावजूद यह अभी तक कम प्रयुक्त फसल बनी है। इसके भविष्य का भोजन एवं इसके मूल्य संवर्धन की संभावनाओं को देखते हुए शोध की नितान्त आवश्यकता है।

******

भांग (कैनाबिस सैटाईवा): बहुपयोगी पौधा

डॉ. जोगिंदर सिंह
अक्षिता शर्मा एवं
डॉ. जगदीश सिंह
भा.वा.अ.सं.शि.प.
हिमालयन वन अनुसंधान संस्थान, शिमला

भांग (Cannabis sativ) कैनाबेसी परिवार से संबंधित एकवर्षीय जड़ी बूटी है। इस पौधे को संस्कृत में विजया और सामान्यतः इसे गांजा, भांग, मारिजुआना और हशीश के नाम से जाना जाता है। भांग की तीन प्रजातियाँ क्रमशः केनाबिस सैटाईवा, के० रुडेरालिस और के० इंडिका हैं। प्राचीन काल से ही लाखों लोगों ने भांग का उपयोग आनंद और दुख दूर करने के उद्देश्यों के लिए किया है। मुख्यतः इस पौधे को इसके मतिभ्रम गुणों के लिए उपयोग किया जाता रहा है। भांग को इसके फाइबर के लिए इकट्ठा किया जाता है, जिसका उपयोग रस्सी, कपड़े इत्यादि बनाने के लिए किया जाता है।

भांग के तने सीधे होते हैं, जिसकी ऊंचाई तीन से दस फीट तक होती है। इसमें बहुत कम शाखाएँ होती हैं, जिन पर हल्के भूरे बाल होते हैं। पत्तियाँ ताड़ के आकार की, असंख्य, रैखिक–लेंसोलेट, दोनों सिरों पर पतली बारीक दाँतेदार होती हैं और आधार पर तीव्र स्टाइप्यूल्स के साथ लंबे पतले डंठलों पर 5 से 7 पत्तियाँ होती हैं। फूल एकलिंगी होते हैं; नर फूल अक्षीय और टर्मिनल पुष्प गुच्छों में उगते हैं और शीर्षस्थ होते हैं, जिनमें पाँच पीली पंखुड़ियाँ और पाँच पोरीसिडियल

पुंकेसर होते हैं। इन स्थानों पर मादा फूल भी उगते हैं, लेकिन, उनमें केवल एक अंडाकार अंडाशय होता है। फल छोटे, चिकने, हल्के भूरे–भूरे रंग के और पूरी तरह से बीज से भरे हुए होते हैं।

भांग मूल रूप से पश्चिमी और मध्य एशिया का पौधा है, परंतु इसका वितरण दुनिया भर में है। प्राचीन काल से ही एशिया और यूरोप के देशों में इसकी खेती की जाती रही है। इसकी खेती उत्तर, मध्य और दक्षिण अमेरिका, एशिया, यूरोप तथा उत्तर और मध्य अफ्रीका में की जाती है। प्रमुख उत्पादकों में मेक्सिको, ब्राजील, पराग्वे, कोलंबिया, पेरू, न्यूजीलैंड और अरब देश शामिल हैं। पौधे के चिकित्सीय लाभों की पहचान की गई और आयुर्वेदिक दवाओं में उपयोग के लिए भारत में पहली बार 900 ईसा पूर्व में इसकी खेती की गई। भारतीय भांग किस्म की खेती पूर्व एशिया और उत्तरी अफ्रीका में की जाती है। भारत में, भांग हिमालय क्षेत्र में उपोष्णकटिबंधीय से समशीतोष्ण क्षेत्रों में पाया जाता

है। हिमाचल प्रदेश में, ठंडे रेगिस्तानी क्षेत्रों को छोड़कर, पूरे राज्य में भांग पाई जाती है। इस पौधे को कानूनी तौर पर केवल उत्तराखंड के अल्मोड़ा, गढ़वाल और नैनीताल जिलों और कश्मीर और ट्रैवेनकोर में थोड़ी मात्रा में खेती करने की अनुमति है। प्रकृति में भांग बीजों द्वारा बहुतायत मात्रा में उगता है। किसान, भांग को बीज द्वारा आसानी से उगा सकते हैं।

हिमाचल प्रदेश सरकार भांग की खेती पर प्रतिबंध हटाने की किसानों की लंबे समय से चली आ रही मांग के अनुरूप, भांग की खेती को वैध बनाने की संभावना तलाश रही है। हिमाचल प्रदेश सरकार ने विधायकों की एक समिति गठित की थी, जिसका उद्देश्य गैर–मादक उपयोग जैसे कि औषधीय, औद्योगिक और वैज्ञानिक उपयोग के लिए भांग को वैध कृषिकरण की संभावना तलाशना था। इस समिति की रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल प्रदेश सरकार किसी निष्कर्ष पर पहुंचेगी। कहा जा रहा है कि उत्तराखंड राज्य की तर्ज पर हिमाचल प्रदेश सरकार भी भांग को गैर–मादक उपयोग के लिए किसानों को इसके कृषिकरण की अनुमति देगी। भांग को उगाने से इंडस्ट्रीज की मांग पूरी होगी और किसानों की आर्थिकी में भी लाभ होगा। इसके अलावा लोगों की गैर–मादक घरेलू निजी उपयोग के लिए भी भांग की आवश्यकता पूरी होगी।

उपयोगः भांग एक बहुपयोगी एकवर्षीय पौधा है। हिमालय क्षेत्र के ग्रामीण इलाकों में इसका अत्यधिक महत्व है, क्योंकि इसकी पत्तियां, बीज और तने के रेशे पारंपरिक रूप से लोगों द्वारा उपयोग किए जाते हैं। इसके विभिन्न उपयोगों का वर्णन निम्नलिखित हैः

औषधीयः भांग में मादक, दर्दनाशक, ऐंठनरोधी, दर्दनिवारक, शामक आदि औषधीय गुण विद्यमान हैं। भांग की पत्तियां 25 से अधिक रोगों को ठीक करने की क्षमता रखती हैं। पत्तों का पेस्ट बवासीर में प्रयोग किया जाता है। नई पत्तियों से बनी छोटी–छोटी गोलियां पानी में डुबोकर पीने से पेट के कीड़ों के कारण होने वाला पेट दर्द ठीक हो जाता है। मांसपेशियों के दर्द से राहत पाने के लिए मालिश में भी भांग तेल का उपयोग किया जाता है। मामूली जलन के इलाज के लिए सरसों के तेल में जलाए गए बीजों को बाहरी रूप से लगाया जाता है। बीजों का उपयोग पेचिश के इलाज के लिए भी किया जाता है।

खाद्यः बीजों को कच्चा या पकाकर उपयोग किया जा सकता है। इसे सुखाकर मसाले के रूप में या केक

बनाकर भी खाया जा सकता है। पत्तियों में कैरोटीन होता है और इसका उपयोग सूप में किया जा सकता है। भांग का सेवन कैनाबिस चाय के रूप में भी किया जा सकता है। इसके बीजों से खाद्य तेल प्राप्त होता है। परंपरागत रूप से, उत्तराखंड में इसकी खली को गुड़ में मिलाकर पकाया जाता है जिसे, **'भांग–गजक''** के रूप में उपयोग किया जाता है।

पारंपरिकः हिमाचल प्रदेश में सिड्डू नामक स्थानीय व्यंजन बनाया जाता है, उसकी स्टफिंग के लिए भांग के बीज पीस कर उपयोग किए जाते हैं। इसके अलावा बीज को परांठा एवं रोटी की स्टफिंग के लिए भी उपयोग किया जाता है। हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में बीज से चटनी व जूस बनाया जाता है। इसकी पत्तियों को पकौड़े बनाने में उपयोग किया जाता है। बीज और चावल को एक साथ पकाया या भूना

जाता है। ऐसा माना जाता है कि यह भोजन सर्दियों के दौरान शरीर को गर्म रखता है और ऊर्जा प्रदान करता है। बीजों को थोड़े से पानी के साथ अच्छी तरह पीसकर बारीक पेस्ट बनाया जाता है और पानी में मिलाया जाता है तथा इसके बाद इसमें हल्दी, धनिया, मिर्च और नमक मिलाया जाता है। भांग के बीजों से तैयार की गई कढ़ी को **''भांग–झोई''** कहा जाता है और इसे पके हुए चावल या चपाती के साथ खाया जाता है।

अन्य उपयोगः भांग की पत्तियों का उपयोग कीट विकर्षक के रूप में भी किया जाता है, अतः इसे कृमिनाशक माना जाता है। इसके तने से निकलने वाले रेशे को रस्सी, चटाई और चप्पल बनाने में उपयोग किया जाता है। रेशों को अलग करने के बाद बचे गूदे और लकड़ी का उपयोग उत्कृष्ट मशाल लकड़ी और ईंधन प्रज्वलित करने के लिए किया जाता है।

*****

सतत भूमि प्रबंधन प्रथाओं पर वैज्ञानिक गतिविधियों और नीतियों पर एक दृष्टिकोण

डॉ. निबेदिता गुरु, वैज्ञानिक–सी
भा.वा.अ.शि.प.–वर्षा वन अनुसंधान संस्थान,
जोरहाट, असम

सारांश

सतत भूमि प्रबंधन, पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं और मानव जीवन की रक्षा करते हुए भोजन और फाइबर की बढ़ती मांगों को पूरा करने के लिए भूमि, जल, जैव–विविधता और पर्यावरण प्रबंधन के एकीकरण में सहायता करता है। स्वदेशी लोग और ग्रामीण समुदाय अपने अस्तित्व के लिए भूमि के उत्पादन और स्वास्थ्य पर बहुत भरोसा करते हैं। कई देशों में भूस्खलन, बाढ़ और सूखे तथा खराब भूमि प्रबंधन प्रथाओं के कारण भूमि क्षरण और भी खराब हो गया है। इसलिए सतत भूमि प्रबंधन के लिए विभिन्न वैज्ञानिक दृष्टिकोणों और कार्य–पद्धति को समझने के लिए एक दृष्टिकोण व्यक्त किया गया है।

कीवर्ड : सतत भूमि प्रबंधन, भूमि, पानी, जैव–विविधता, पर्यावरण प्रबंधन

परिचय

भूमि क्षरण दुनिया भर में 3.2 बिलियन लोगों को प्रभावित करता है, मुख्य रूप से ग्रामीण समुदायों, छोटे पैमाने पर खेती करने वाले किसानों और बेहद गरीब लोगों को। वर्ष 2050 तक दुनिया की आबादी 9.7 बिलियन तक पहुंचने की उम्मीद है और इससे खाद्य, फीड, फाइबर और ईंधन जैसे कृषि उत्पादों की मांग में वृद्धि होने की संभावना बढ़ेगी। एशिया में लगभग 35% कृषि योग्य भूमि मरुस्थलीकरण से प्रभावित हुई है, जबकि अफ्रीका का लगभग 45% भूमि क्षेत्र इससे प्रभावित है, उस क्षेत्र का 55% अतिरिक्त गिरावट के उच्च या बहुत उच्च जोखिम में है। एशियाई क्षेत्र में 39% आबादी या लगभग 1.3 बिलियन लोग, शुष्कता और मरुस्थलीकरण के अधीन हैं।

सामाजिक जरूरतों को पूरा करने के लिए माल का उत्पादन करने हेतु सतत भूमि प्रबंधन की आवश्यकता होती है और इसे "**इन संसाधनों के पर्यावरणीय कार्यों और दीर्घकालिक उत्पादक क्षमता को बनाए रखने के लिए मिट्टी, पानी, जानवरों और पौधों जैसे भूमि संसाधनों के उपयोग**" के रूप में परिभाषित किया जाता है।

भूमि–उपयोग प्रणाली की उत्पादकता और स्थिरता भूमि संसाधनों, जलवायु और मानव गतिविधि की बातचीत से निर्धारित होती है। भूमि क्षरण को कम करने, अवक्रमित भूमि को बहाल करने, भूमि संसाधनों के स्थायी उपयोग को सुनिश्चित करने और लचीलापन बढ़ाने के लिए सतत भूमि प्रबंधन को लागू करना और दी गई बायोफिजिकल और सामाजिक–आर्थिक स्थितियों के लिए उपयुक्त भूमि उपयोग निर्णय करना महत्वपूर्ण है।

स्रोतः एफएओ, जलवायु–स्मार्ट कृषि स्रोत पुस्तिका

सतत भूमि प्रबंधन के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण

सतत भूमि प्रबंधन में एकीकृत परिदृश्य, संसाधन प्रबंधन और मिट्टी और पानी के संरक्षण जैसी प्रसिद्ध तकनीकें शामिल हैं।

सतत भूमि प्रबंधन चार सिद्धांतों पर आधारित है :

- लक्षित संस्थागत सहायता और नीति, जैसे सतत भूमि प्रबंधन को अपनाने और स्थानीय राजस्व के निर्माण के लिए प्रोत्साहन प्रणालियों का निर्माण;
- भूमि–उपयोगकर्ता–संचालित और भागीदारी दृष्टिकोण;
- पारिस्थितिकी तंत्र के स्तर के साथ–साथ खेतों पर प्राकृतिक संसाधनों का समन्वित उपयोग और
- नीति निर्माताओं, तकनीकी विशेषज्ञों और भूमि उपयोगकर्ताओं सहित सभी स्तरों पर साझेदारी और बहुस्तरीय, बहु–हितधारक भागीदारी।

बायोफिजिकल और सामाजिक आर्थिक मापदंडों के एक विशिष्ट सेट के लिए खराब भूमि को और खराब होने से बचाने या इसको फिर से उपजाऊ बनाने के लिए किसान और अन्य भूमि उपयोगकर्ता किस सर्वोत्तम कार्य या तकनीक का उपयोग कर सकते हैं, यह अक्सर पूछा जाने वाला मुद्दा है। इस प्रश्न का ठीक से जवाब देने के लिए विश्वसनीय जानकारी की आवश्यकता है। इस जानकारी के संभावित स्रोतों में संरक्षण दृष्टिकोण और प्रौद्योगिकियों का विश्व अवलोकन (WOCAT) शामिल हैं; छोटे कृषि उत्पादकों के लिए प्रौद्योगिकियां और प्रथाएं (टीईसीए); जलवायु–स्मार्ट कृषि स्रोत पुस्तिका; सतत वन प्रबंधन टूलबॉक्स; पर्वतीय और वाटरशेड प्रबंधन। इन आकलनों द्वारा उत्पादित डेटा और उत्पादों का उपयोग विशेषज्ञों, योजनाकारों और निर्णय निर्माताओं द्वारा सतत भूमि प्रबंधन तकनीकों और प्रौद्योगिकियों को इंगित करने के लिए किया जा सकता है जो विशिष्ट स्थानों और समुदायों के लिए सबसे उपयुक्त हैं।

सतत भूमि प्रबंधन के लिए नीतियों की सिफारिश

स्थायी भूमि उपयोग प्रथाओं के लिए निम्नलिखित नीतियों की सिफारिश की जाती है।

- राष्ट्रीय रणनीतियों और योजनाओं के बीच सामंजस्य में सुधार
- संस्थागत समन्वय बढ़ाना
- जैव विविधता, जलवायु शमन और भोजन के लिए नीतियों को संरेखित करना
- भूमि–उपयोग गठजोड़ के लिए प्रासंगिक नीतिगत साधन

सतत भूमि प्रबंधन में वन की भूमिका

स्थायी रूप से प्रबंधन करने के लिए पेड़ आवश्यक हैं। कृषि वानिकी उद्देश्यों के लिए पेड़ लगाने से भूमि को स्थायी रूप से और बेहतर मिट्टी की गुणवत्ता के साथ प्रबंधित करने में मदद मिलती है। पुनर्वनीकरण के कई फायदे हैं जो पर्यावरण के सामान्य स्वास्थ्य और मानव समुदायों के कल्याण दोनों का समर्थन करते हैं। कुछ मुख्य बिंदु नीचे वर्णित हैं :

1. वर्षा को अवशोषित करके, मिट्टी की सतह पर पानी के प्रभाव को कम करके, और अपनी जड़ों के साथ मिट्टी को स्थिर करके, कृषि क्षेत्रों और वाटरस्लाइड के पास लगाए गए पेड़ मिट्टी के कटाव की रोकथाम में सहायता करते हैं। पत्ती के कूड़े और सड़ने वाली लकड़ी के माध्यम से कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों को शामिल करके वे मिट्टी की गुणवत्ता को भी बढ़ाते हैं।
2. पौधों और जानवरों की प्रजातियों की एक

विस्तृत विविधता, जिनमें से कई असामान्य और विशिष्ट हैं, जंगलों में पाई जा सकती है। हम जैव–विविधता को संरक्षित करते हैं और जंगलों को संरक्षित करके और उनके आस–पास की भूमि को फिर से बनाकर इन प्रजातियों के अस्तित्व की गारंटी देते हैं।

3. जलचक्र अपरिवर्तनीय रूप से पेड़ों द्वारा विनियमित होता है। वे तीव्र वर्षा की अवधि के दौरान पानी को अवशोषित करके और इसे धीरे–धीरे जारी करके नदियों और धाराओं में एक स्थिर प्रवाह को संरक्षित करने में सहायता करते हैं। इसके अतिरिक्त, पेड़ पानी की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं और इसे फिल्टर करते हैं, जिससे महंगी उपचार सुविधाओं की आवश्यकता नहीं होती है।

4. कार्बन क्रेडिट, इकोटूरिज्म और लकड़ी और गैर–लकड़ी के वन उत्पादों के उत्पादन सहित पेड़ों से कई आर्थिक लाभ होते हैं। हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि वनों का स्थायी प्रबंधन करके इन लाभों को पूरे समय बनाए रखा जाए। सभी बातों पर विचार किया जाता है, पेड़ स्थायी भूमि प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण हैं। वनों के सतत प्रबंधन और अधिक पेड़ों के रोपण के माध्यम से, हम पर्यावरण की रक्षा कर सकते हैं, स्थानीय लोगों की सहायता कर सकते हैं, और आर्थिक विकास को इस तरह से बढ़ावा दे सकते हैं जो दीर्घकालिक स्थिरता के अनुरूप है।

*****

विश्व पर्यावरण दिवस

उत्तम कुमार मिश्र
अवर सचिव, पत्तन, पोत परिवहन और
जलमार्ग मंत्रालय

सुरभित हों ये दसों दिशाएं, धरती को स्वच्छ बनाएं
जल, थल, वायु और गगन को, प्रदूषण से बचाएं,
प्रकृति का श्रृंगार करें, जीवन बगिया महकाएं,
आओ हम सब शपथ लें, धरती को स्वर्ग बनाएं,
जन–जन तक आओ मिल कर हम, ये सन्देश सुनाएं,
विश्व पर्यावरण दिवस को, आओ सफल बनायें।

जंगल हैं धरती की शान, वृक्ष ही हैं इसकी पहचान
जीव–जंतु, प्राणी का आश्रय, भोजन छाया देता दान,
जंगल से ही वर्षा होती, तपती भू की तृष्णा हरती,
भूक्षरण को कम ये करते, जीवनदायिनी हवा हैं देते,
ये हैं सच्चे मित्र हमारे, आओ इसको बचाएं,
विश्व पर्यावरण दिवस को, आओ सफल बनाएं।

वायु जीवन का आधार, करे प्राण का ये संचार,
जहर फैलाकर प्राण वायु में, खुद पर करते अत्याचार,
दूषित वातावरण हमेशा, बीमारी फैलाती है,
जाने क्यों इतनी–सी बातें, समझ न हमको आती हैं,
आओ शपथ लें आज हम सभी, ना धुआँ फैलाएं,
विश्व पर्यावरण दिवस को, आओ सफल बनाएं।

देखो भाई जल संकट, विकराल रूप दिखलाया,
कहीं पे सूखा, बाढ़ कहीं पर, सुनामी है आया,
मत कर क्रोधित प्रकृति माँ को, समझदारी दिखलाएं,
जल स्रोतों की करें सुरक्षा, माँ का प्यार हम पाएं,
भू–जल का हम करें संग्रहण, नयन नीर न बहाएं,
विश्व पर्यावरण दिवस को, आओ सफल बनाएं।

मिट्टी है पहचान हमारी, मिट्टी मेरा है आधार,
इसे प्रदूषित कर, करते हैं, हम अपने अस्तित्व पे वार,
मृदा सम्पदा शान हमारी, दूषित करना न स्वीकार,
जैविक खाद प्रयोग करें हम, उर्वरता रहे बरकरार,
मृदा अपरदन रोकें हम, आओ पेड़ उगाएं,
विश्व पर्यावरण दिवस को, आओ सफल बनाएं।

मानव, जीव–जंतु हर प्राणी, सब धरती की हैं संतान,
सब प्यारे हैं प्रकृति माँ के, करें सभी उनका सम्मान,
पारिस्थितिकी तंत्र में इनका, भी है अद्‌भुत योगदान,
करें सुरक्षा इन घटकों का, इनसे हम सबकी पहचान,
अहिंसा परमो धर्मः का हम, आओ अलख जगाएं,
विश्व पर्यावरण दिवस को, आओ सफल बनाएं।

सुरभित हो ये दसों दिशाएं, धरती को स्वच्छ बनाएं,
जल, थल, वायु और गगन को, प्रदूषण से बचाएं,
प्रकृति का श्रृंगार करें, जीवन बगिया महकाएं,
आओ हम सब शपथ लें, धरती को स्वर्ग बनाएं,
जन–जन तक आओ मिलकर हम, ये सन्देश सुनाएं,
विश्व पर्यावरण दिवस को, आओ सफल बनाएं।

*****

ब्रेसिका परागणक : ट्रू बग (हेमिप्टेराः हेटेरोप्टेरा) रेपसीड–सरसों के संभाव्य परागणकर्ता

श्वेतापदमा दाश, अमर्त्य पाल और राहुल मंडल
भारतीय प्राणि सर्वेक्षण,
एम–ब्लॉक, न्यू अलीपुर, कोलकाता–700053,
पश्चिम बंगाल, भारत
ईमेल: oasisnainital@yahoo.co.in

संक्षेपः

ट्रू बग की दो प्रजातियाँ जैसे, पेंटाटोमिडे परिवार की एगोनोसेलिस नुबिलिस (फैब्रिकियस, 1775) और लायगेडी परिवार की स्पाइलोस्टेथस होस्पेस (फैब्रिकियस, 1794) फूलों से शहद निकालते समय रेपसीड–सरसों के पौधे से रिपोर्ट की गईं। फील्ड तस्वीरें इन ट्रू बग और रेपसीड–सरसों के पौधे के फूलों के बीच सम्बद्ध का दृश्य यह प्रमाण प्रदान करती हैं। इन पर्यवेक्षणों से पता चलता है कि ये ट्रू बग ब्रेसिका पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर परागण में भूमिका निभा सकते हैं।

कीवर्ड्सः हेमिप्टेरा, परागणकर्ता, रेपसीड–सरसों, पेंटाटॉमिडी, लाइगेडी

उपक्रमः

हेमिप्टेरन्स को ट्रू बग के रूप में भी जाना जाता है, जिसे विभिन्न उदाहरणों में परागणकों के रूप में देखा गया है, हालांकि परागण में उनकी भूमिका पर शोध मधुमक्खियों, तितलियों और बीटल जैसे अन्य परागण समूहों की तुलना में अपेक्षाकृत सीमित है। यंग (1986) ने हेमिप्टेरा (मिरिडे) को डाइफेनबैचिया लोंगिस्पथा के पुष्पक्रमों का दौरा करते हुए देखा। पश्चिम मलेशिया से फूल आगंतुकों के बीच मिरिड बग की सूचना मिली (मूग, 2002)। नर और मादा पुष्पक्रमों पर पाए जाने वाले सबसे प्रचुर मात्रा में हेमीटेरन परागणकर्ता ओरियस एट्रैटस (एंथोकोरिडे, हेमिप्टेरा) पाए जाते हैं व इसके बाद डेकोमियोइड्स श्नेइरलाई (मिरिडे, हेमिप्टेरा) (इशिडा एट अल, 2009) पाए जाते हैं।

अन्य परागणकों की तुलना में परागण में हेमिप्टेरा की विशिष्ट भूमिका और महत्व पारिस्थितिकी तंत्र और पौधों की प्रजातियों के आधार पर भिन्न हो सकती है, इस अध्ययन से पता चलता है कि इस समूह के भीतर दो प्रजातियां, एगोनोसेलिस नुबिलिस (फैब्रिकियस, 1775) और स्पिलोस्टेथस होस्पेस (फैब्रिकियस, 1794) परागण प्रक्रिया में योगदान करते हैं (चित्र 1–4)। इस क्षेत्र में आगे के शोध परागण पारिस्थितिकी में उनके योगदान की सीमा के बारे में अधिक जानकारी प्रदान कर सकते हैं।

सामग्री एवं विधि :

संग्रह और क्षेत्र अवलोकनः

पंचग्राम, मुर्शिदाबाद, पश्चिम बंगाल से रेपसीड–सरसों के पौधे के फूल से पेंटाटोमिड बग (ए. नुबिलिस) और लायगेडी बग (एस. होस्पेस) हाथ से चुनकर एकत्र किए गए। सुबह के समय इस स्थान का कई बार दौरा किया गया और कई उदाहरण देखे गए। Nikon D7000 कैमरे का उपयोग करके फूलों की कटाई के दौरान प्राकृतिक आवास में कीड़ों की छवियां ली गईं।

संरक्षण :

नमूनों को मलिनकिरण और सख्त होने से बचाने और बग पर मौजूद परागकणों को एथिल एसीटेट के सीधे

संदूषण से बचाने के लिए एथिल एसीटेट में भिगोई हुई कपास डालकर नमूनों को सावधानीपूर्वक एक बंद कंटेनर में मृतक अवस्था में लाया गया। विस्तृत अध्ययन पूरा होने के बाद, नमूनों को सुखाया गया, पिन किया गया, लेबल किया गया और नेशनल जूलॉजिकल कलेक्शंस में जमा किया गया।

पहचानः

नमूने की बाहरी आकृति विज्ञान का अध्ययन प्रकाश माइक्रोस्कोप (लेइका एम205ए) के तहत किया गया है और राष्ट्रीय प्राणी संग्रह, हेमिप्टेरा अनुभाग, भारतीय प्राणि सर्वेक्षण, कोलकाता और साहित्य के साथ एकत्रित नमूनों की तुलना करके पहचान की गई।

अवलोकन एवं चर्चा :

परागणकर्ता और पुष्प आगंतुक के रूप में हेमिप्टेरा :

गैर–होलोमेटाबोलस कीड़ों में, हेटरोप्टेरान को अक्सर पुष्परागी के रूप में जाना जाता है, क्योंकि वे आकर्षित होते हैं और आमतौर पर फूलों पर पाए जाते हैं। हेटेरोप्टेरान में, नाबिडे, मिरिडे, लिगेइडे, कोरिडे और पेंटाटोमिडे आमतौर पर आसानी से सुलभ शहद वाले फूलों पर पाए जाते हैं, जैसे कि कंपोजिटाई और उम्बेलिफेरा (केवन और बेकर, 1983)।

फूल आगंतुक के रूप में लाइगेइडे :

कई लायगेडी कीड़े को फूल आगंतुकों के रूप में रिपोर्ट किया गया है, लेकिन बहुत कम अध्ययन किए गए हैं कि वे परागणकों के रूप में कार्य करते हैं या नहीं। दो लायगेडी बग, स्पिलोस्टेथस होस्पेस (फैब्रिकियस, 1794) और ग्रेप्टोस्टेथस वर्टिकल (डलास, 1852) को फूल आगंतुक और छोटे आयरनवीड, वी. सिनेरिया (हसन, एट अल, 2019) के परागणकर्ता के रूप में रिपोर्ट किया गया था। वर्तमान अध्ययन में हमने एस. होस्पेस को रेपसीड–सरसों पौधे के फूल आगंतुक और परागणकर्ता के रूप में रिपोर्ट किया है (चित्र 1–2)।

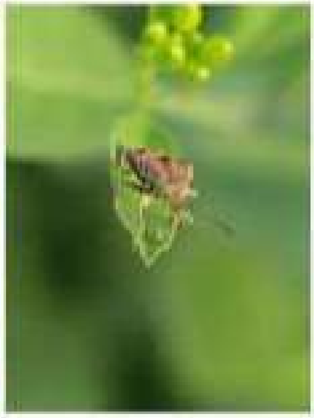

चित्रः 1–2. स्पिलोस्टेथस होस्पेस (फैब्रिकियस, 1794)

स्पिलोस्टेथस होस्पेस (फैब्रिकियस, 1794)

विवरण :

शरीर गहरा लाल, सिर का शीर्ष और आंखों के भीतरी किनारों पर एक धब्बा, एंटीना, रोस्ट्रम, प्रोनोटम के दो चौड़े पूर्ववर्ती संकीर्ण केंद्रीय डिस्कल प्रावरणी, स्कुटेलम के शीर्ष को छोड़कर, क्लेवस के शीर्ष और बाहरी क्लैवल मार्जिन, एक बड़ा केंद्रीय स्थान कोरियम, झिल्ली, उरोस्थि की डिस्क, पेट और टांग काले। शरीर बारीक रूप से पाइलोज, रोस्ट्रम को हिंडकॉक्स और फीमोरा के बीच में अबाधित रूप से स्थित है।

मटेरियल एक्सामिनेडः

भारतः पश्चिम बंगाल 2, मुर्शिदाबाद, पंचग्राम (24. 2053178° उत्तर, 88.0093914° पूर्व), संग्रह कर्ताः आर. मंडल।

पेंटाटोमिडे को फूल आगंतुक के रूप मेंरू पेंटाटोमिड बग में एगोनोसेलिस नुबिलिस (फैब्रिकियस, 1775) को रेपसीड–सरसों के पौधे (विश्वकर्मा और चांद, 2017)

के फूल आगंतुक के रूप में रिपोर्ट किया गया था। वर्तमान अध्ययन में हमने एगोनोसेलिस नुबिलिस (फैब्रिकियस, 1775) को संभावित परागणक के रूप में रिपोर्ट किया है क्योंकि वे रेपसीड–सरसों के पौधे के फूलों से शहद एकत्र करते हुए पाए गए (चित्र 3–4)।

चित्रः 3–4 एगोनोसेलिस नुबिलिस (फैब्रिकियस, 1775);

एगोनोसेलिस नुबिलिस (फैब्रिकियस, 1775)

विवरणः

शरीर पीलापन लिए हुए नारंगी रंग का आभास लिए हुए; सिर के केंद्रीय प्रावरणी, ऐंटेरो–लेटरल मार्जिन और प्रोनोटम के अनियमित केंद्रीय प्रावरणी और स्कुटेलम के शीर्ष को छोड़कर, मोटे काले छिद्रों से ढका हुआ; मिश्रित आँखों के सामने एक छोटा सा क्षेत्र और मिश्रित आँखों की पिछली डिस्क हल्की पीली; हेमलीट्रा पर अनुप्रस्थ धारियां और झिल्ली पर अनुदैर्ध्य; धारियां काली; मैंडिबुलर प्लेटें आमतौर पर क्लिपियस तक पहुंचती हैं या उससे आगे तक फैली होती हैं; एंटेना खंड III और IV के बीच मौजूद एक छोटा इंटर्नोड; रोस्ट्रम चौथे उदर खंड तक पहुंचता है।

मटेरियल एक्सामिनेड :

भारतः पश्चिम बंगाल 2, मुर्शिदाबाद, पंचग्राम (24. 2053178° उत्तर, 88.0093914° पूर्व), संग्रह कर्ताः आर. मंडल।

अभिस्वीकृतिः

इस लेख के लेखकों, प्रोत्साहन और प्रयोगशाला सुविधाओं के लिए भारतीय प्राणि सर्वेक्षण की निदेशक डॉ. धृति बनर्जी के आभारी हैं। हम डॉ. सी. रघुनाथन, संभागीय प्रभारी, कीट विज्ञान प्रभाग, भारतीय प्राणि सर्वेक्षण के बहुमूल्य सुझावों और समर्थन के लिए बहुत आभारी हैं। लेखक पांडुलिपि की तैयारी में उनके सहायक सहयोग के लिए हेमिप्टेरा अनुभाग और पुस्तकालय अनुभाग के स्टाफ सदस्यों के आभारी हैं।

संदर्भ :

डलास डब्ल्यू.एस. (1852) ब्रिटिश संग्रहालय के संग्रह में हेमिप्टेरस कीड़ों के नमूनों की सूची। भाग II, लंदनः टेलर और फ्रांसिस। पी। 369–592.

फैब्रिकियस जे.सी. (1775) सिस्टेमा एंटोमोलोगिया इंसेक्टोरम वर्ग, ऑर्डिनेस, जेनेरा, प्रजातियाँ स्थापित करता है; विशेषण पर्यायवाची, लोकिस, डिस्क्रिप्शनिबस और ऑब्जर्वेशनबस। फ्लेन्सबर्गी एट लिप्सिए, 302 832 पीपी।

फैब्रिकियस जे.सी. (1794) एंटोमोलोगिया सिस्टेमेटिका एमेनडाटा एट ऑक्टा सेकुंडम क्लासेस, ऑर्डिन्स, जेनेरा, स्पीशीज एडजेक्टिस सिनोमिस, लोकिस, ऑब्जर्वेशनिबस, डिस्क्रिप्शनिबस। सी. जी. प्रोफेसर, फिल. एट सोसाइटी, हफनिया, 4 : 472 पीपी।

हसन एम.ई., मुखर्जी पी., कुशवाहा एस., चंद्रा के., साहा पी.सी., मंडल आर. और जहान एस. (2019) संभावित परागणक के रूप में लाइगाइड बग (हेमिप्टेराः लाइगेडी) की पहली रिपोर्ट लिटिल आयरनवीड, वर्नोनिया सिनेरिया (एल.) (एस्टेरेसी), इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ग्लोबल साइंस रिसर्च, 6 : 934–945।

इशिदा सी., कोनो एम. और सकाई एस. (2009) एक नई परागण प्रणाली: मैकरंगा (यूफोरबिएसी) में फूलों के कीड़ों द्वारा ब्रूड–साइट परागण, एनल्स ऑफ बॉटनी, 103, 39–44।

केवन पी.जी. और बेकर एच.जी. (1983) फूल आगंतुकों और परागणकों के रूप में कीड़े, कीट विज्ञान की वार्षिक समीक्षा, 28:407–453।

मूग यू., जर्मनी जोहान वोल्फगैंग वॉन गोएथे–यूनिवर्सिटेट। (2002) सूडोस्टासियन में डाई रिप्रोडक्शन वॉन मैकरंगा (यूफोरबिएसी): बेस्टौबंग डर्च थ्रिप्से अंड कास्ट्रेशन डर्च पफलानजेनामिसन। पीएच.डी. थीसिस.

विश्वकर्मा आर. और चंद, पी. (2017) कीट परागणकों की चारागाह गतिविधि और रेपसीड–सरसों की उपज पर उनका प्रभाव, बायोइन्फोलेट, 14(3): 222 – 227।

यंग एच.जे. (1986) बीटल पोलिनेशन ऑफ डाइफेनबैचिया लोंगिस्पथा (अरेसी), अमेरिकन जर्नल ऑफ बॉटनी, 73(6), 931–944।

*****

पूर्वोत्तर भारत में बाँस की प्ररोहों का महत्व

श्री सोनकेश्वर शर्मा, वैज्ञानिक–बी एवं
सुश्री परिश्मिता हाजरिका, कनिष्ठ अनुसंधान अध्येता
भा.वा.अ.शि.प.– वर्षा वन अनुसंधान संस्थान,
जोरहाट, असम

बाँस पोएसी परिवार से संबंधित सबसे बहुमुखी बहुउपयोगी वन वृक्ष घास माना जाता है। हालांकि 1250 से अधिक प्रजातियों के साथ बाँस का वितरण दुनिया भर में है, जिसकी उपस्थिति मुख्य रूप से दक्षिण–पूर्व एशिया में पाई जाती है। बाँस को 1500 से अधिक उपयोगों के लिए जाना जाता है और इसे दुनिया में आर्थिक रूप से सबसे महत्वपूर्ण पौधों में से एक माना गया है। इसके अतिरिक्त, बाँस का एक और महत्वपूर्ण उपयोग है किशोर प्ररोहों का लोकप्रिय खाद्य पदार्थों के रूप में उपयोग। बाँस के प्ररोहों में प्रोटीन, अमीनो एसिड, खनिज, फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, और कम वसा की मात्रा होती है, इसे व्यापक रूप से प्रशंसित पोषक तत्वों से भरपूर खाद्य पदार्थों में से एक बनाती है। इसके अलावा, युवा प्ररोहों में फाइटोस्टेरॉल की मौजूदगी नियमित उपभोक्ताओं को युवा एहसास, एथलेटिक ऊर्जा, और दीर्घायु प्रदान करती है। ताजा एकत्र किए गए बाँस के प्ररोहों में थियामिन, नियासिन, विटामिन–ए, विटामिन–बी6, और विटामिन–ई की अच्छी मात्रा होती है।

बाँस की प्ररोहों की पोषक संरचनाः

अमीनो एसिड : बाँस की प्ररोहों में अमीनो एसिड भरपूर मात्रा में होता है। बाँस की प्ररोहों में रिपोर्ट किए गए 17 एमिनो एसिडों में से 8 एमिनो एसिड मानव शरीर के लिए आवश्यक होते हैं।

चित्रः बाँस, बाँस की कोंपलें और बाँस की प्ररोहों का छिला हुआ रूप।

प्रोटीन : बाँस के प्ररोहों में प्रोटीन की अच्छी मात्रा होती है, ताजा बाँस की प्ररोहों में प्रोटीन की मात्रा 1.49 ग्राम / 100 ग्राम से लेकर 4.04 ग्राम / 100 ग्राम तक होती है।

खनिज : बाँस के अंकुर पोटेशियम, फास्फोरस, सोडियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम और आयरन जैसे उपयोगी खनिजों से समृद्ध मात्रा में संपन्न होते हैं। हमारे शरीर की कई उपयोगी चयापचय गतिविधियों के समुचित कार्य के लिए खनिजों की आवश्यकता होती है।

कार्बोहाइड्रेटः बाँस के प्ररोहों में मौजूद कार्बोहाइड्रेट का स्तर उच्च पाया जाता है और बंबूसा नूतन, बंबूसा वल्गारिस, डेंड्रोकैलामस स्ट्रिक्टस और डेंड्रोकैलामस एस्पर के खाद्य प्ररोहों में इसकी सामग्री 3.3%, 3.4%, 0.6% और 2.9% पाई गई। बाँस के प्ररोहों को उबालने की प्रक्रिया के बाद उनमें कार्बोहाइड्रेट की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि पायी गई है। कार्बोहाइड्रेट में वृद्धि, जटिल पॉलीसेकेराइड के हाइड्रोलिसिस के कारण एकल मोनोसैकराइड शुगर इकाइयों में परिवर्तित होने से हो सकती है। जब बम्बुसा बाँस, बम्बुसा टुल्डा, डेंड्रोकलामस एस्पर और बम्बुसा स्ट्रिक्टस के बाँस के प्ररोहों को अलग–अलग नमक सांद्रता वाले घोल में उबाला, तो कार्बोहाइड्रेट की मात्रा कम हो जाती है।

फेनोल : पौधों में मौजूद फेनोलिक यौगिक महत्वपूर्ण जैव सक्रिय यौगिक हैं, क्योंकि वे मजबूत प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट और सूजन–रोधी गुणों और कभी–कभी रोगाणुरोधी गतिविधियों का भी प्रदर्शन करते हैं।

बाँस के प्ररोहों में टैक्सीफिलिनः

बाँस की प्ररोहों में विभिन्न मात्रा में सायनोजेन ग्लाइकोसाइड्स होते हैं जिन्हें टैक्सीफिलिन कहा जाता है। β–ग्लाइकोसिडेज, जो विघटित बाँस की प्ररोहों के ऊतकों में होते हैं, हानिकारक हाइड्रोजन साइनाइड का उत्पादन करते हैं। यदि मानव खाने में बाँस के प्ररोहों का उपयोग करता है, तो हानिकारक हाइड्रोजन साइनाइड को निकाल दिया जाना आवश्यक है। अधिकांश खाद्य प्रजातियों के बाँस के प्ररोहों में उच्च मात्रा में सायनोजेन ग्लाइकोसाइड होता है और इसकी अधिकतम सांद्रता अंकुर के ऊपरी सिरे पर पाई जाती है। सायनोजेनिक यौगिक के उच्च विषैले स्तर वाले बाँस के अंकुर को लगभग 02 घंटे तक पानी में उबालकर विष निर्मूलन करने पर पूरी तरह से खाने योग्य बनाया जा सकता है। हालाँकि, अनुचित तरीके से तैयार या प्रसंस्कृत बाँस के प्ररोहों के सेवन से तेजी से सांस लेना, रक्तचाप में गिरावट, चक्कर आना, पेट में दर्द, सिरदर्द, उल्टी, ऐंठन और कोमा जैसे लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। हाइड्रोजन साइनाइड सामान्य सेलुलर श्वसन को बाधित करके साइटोक्रोम ऑक्सीडेज के उचित कामकाज में हस्तक्षेप करता है। हाइड्रोजन साइनाइड (एचसीएन) एक श्वसन जहर है जो उच्च सांद्रता में मौजूद होने पर संबंधित व्यक्ति के लिए गंभीर स्वास्थ्य संकट पैदा कर सकता है।

पूर्वोत्तर भारत में कुछ आदिवासी लोग विभिन्न पारंपरिक व्यंजनों को जातीय स्वाद प्रदान करने वाले महत्वपूर्ण मसालों में से एक के रूप में सामान्य ताजा और किण्वित प्ररोहों के अलावा किण्वित बाँस की प्ररोहों के जलीय उत्सर्जन का उपयोग करते हैं। वर्तमान में स्थानीय लोगों द्वारा अपनाई जाने वाली प्ररोह प्रसंस्करण विधियां काफी हद तक अपरिष्कृत और पारंपरिक हैं और इनमें सुरक्षित बाँस खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव है। सायनोजेनिक सामग्री को कम करने के लिए वैज्ञानिक प्रसंस्करण विधियों को तैयार करना और उपभोग के दौरान तीव्र साइनाइड विषाक्तता से बचने के लिए प्रसंस्कृत बाँस खाद्य पदार्थों की विषाक्तता का आकलन करना भी आवश्यक है। सुरक्षित और स्वस्थ उपभोग के लिए ताजा या किण्वित प्ररोहों से साइनाइड की मात्रा कम करने और कड़वाहट दूर करने के लिए विभिन्न

तरीके अपनाए जा रहे हैं। लगभग 100°C पर 48 घंटे तक पकाने से प्ररोहों की 97% साइनाइड सामग्री प्रभावी रूप से समाप्त हो जाती है। अन्य सरल प्रक्रियाओं में कोमल प्ररोहों को पतले पतले टुकड़ों में काटना, सुखाना और खारे पानी में उबालना और उसके बाद पानी निकालना शामिल है। जहरीले और कड़वे घटकों को हटाने के लिए उपभोग से पहले ताजे प्ररोहों को पर्याप्त रूप से NaCl उपचार के अधीन संसाधित किया जाता है, जिससे ताजे बाँस के प्ररोहों में साइनाइड की मात्रा में कमी देखी गई है।

बाँस के प्ररोहों का सेवन मुख्य रूप से एशियाई देशों में किया जाता है जहां वे क्षेत्र के कई पारंपरिक व्यंजनों का अभिन्न अंग बनते हैं। स्वास्थ्यवर्धक भोजन के रूप में बाँस के प्ररोहों की उपयोगिता उनके उच्च पोषण मूल्यों की अज्ञानता के कारण आम जनता को नहीं पता है। लोगों के बीच उनके पोषण संबंधी स्वास्थ्य लाभों के बारे में जागरूकता पैदा करने की अधिक आवश्यकता है ताकि उन्हें व्यापक रूप से स्वीकार किया जा सके। देश के अंदर और बाहर अधिक से अधिक संभावित ग्राहकों को बाँस के प्ररोहों का उत्पाद उपलब्ध कराकर अधिकतम लाभ कमाने के लिए प्रभावी रणनीतियां भी तैयार की जानी चाहिए।

*****

अगरवुड : उत्तर–पूर्व भारत का सुगंधित खजाना

राजीब कुमार बोरा और निमिषा बरुआ
भा.वा.अ.शि.प.– वर्षा वन अनुसंधान संस्थान,
जोरहाट, असम

अगरवुड, जिसे "Oud" या "Agar" के रूप में जाना जाता है, पूर्वोत्तर भारत में पाया जाने वाला सबसे मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन है। यह क्षेत्र अपनी समृद्ध जैव–विविधता और विविध सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रसिद्ध है। अगरवुड एक दुर्लभ और सुगंधित राल वाली लकड़ी है जिसके कारण परफ्यूम का आनंद लेने वालों, पारंपरिक चिकित्सा के चिकित्सकों और अंतरराष्ट्रीय इत्र (परफ्यूमरी) व्यवसाय ने इसमें रुचि दिखाई है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में अगरवुड उत्पादों की मांग वुडचिप्स, पाउडर, तेल, सुगंध, और चाय के लिए महत्वपूर्ण व्यापार अवसर प्रदान करती है। एक्विलेरिया मैलेकेंसिस लैम्क की कुछ पौधों की प्रजातियों में गठित यह बहुमूल्य रालयुक्त पदार्थ जिसे स्थानीय रूप से 'सासी' या 'अगर' के रूप में जाना जाता है, थाइमेलेसिया परिवार से संबंधित पूर्वोत्तर भारत की सबसे महत्वपूर्ण वनस्पति सम्पदा है। अगरवुड का गठन एक पैथोलॉजिकल प्रक्रिया है जो कवक के संपर्क के परिणामस्वरूप हर्टवुड में होती है। अगरवुड के निर्माण में कवक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं लेकिन इस प्रक्रिया को अभी तक पूरी तरह से समझा नहीं जा सका है।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण द्वारा प्रस्तुत गैर–हानिकारक निष्कर्ष (नॉन–डिट्रीमेंट फाइंडिंग्स), 2024 की रिपोर्ट के अनुसार पूर्वोत्तर भारत में लगभग 135 मिलियन पेड़ उपलब्ध है। न्यूरोजेरा कॉन्फेर्टा की उपस्थिति के कारण केवल 7–10 प्रतिशत पेड़ प्राकृतिक रूप से संक्रमित होते हैं, जो अगर पेड़ों में कवकीय संक्रमण के लिए प्रारंभिक स्थल बनाता है। ये प्राकृतिक रूप से संक्रमित पेड़ ज्यादातर असम के जोरहाट, गोलाघाट, शिबसागर, कार्बी आंगलोंग जिलों, नागालैंड के मोकोकचुंग जिले और त्रिपुरा के कुछ स्थानों तक ही सीमित हैं। इन क्षेत्रों के साथ–साथ प्राकृतिक संक्रमण वाले क्षेत्र के बाहर उपलब्ध अगर के पेड़ों में अगरवुड के कृत्रिम संरोपण (इनोकुलेशन) की आवश्यकता होती है।

अगर वृक्षारोपण एक दीर्घकालिक निवेश है क्योंकि अगर सामान्यतः 20 वर्ष बाद उपज देना शुरू करता है। इसके अलावा, अगर के सभी पेड़ प्राकृतिक तौर पर संक्रमण से पीड़ित नहीं होते हैं। इसलिए भले ही अगर को बड़े पैमाने पर लगाया गया हो, तो भी इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि अगरवुड की कटाई व्यावसायिक मात्रा में की जा सकती है। अतः अगरवुड के कृत्रिम प्रेरण की संभावनाओं पर शोध उच्च आर्थिक लाभ प्रदान कर सकता है। भा.वा.अ.शि.प.– वर्षा वन अनुसंधान संस्थान, जोरहाट ने डॉ. राजीब कुमार बोरा के नेतृत्व में वर्ष 2006 से अगरवुड पर शोध शुरू किया था, जिसमें कृत्रिम प्रेरण एवं संरक्षण के साथ–साथ एक्विलेरिया मैलेकेंसिस की वैज्ञानिक खेती पर विशेष ज़ोर दिया गया था। भा.वा.अ.शि.प.– वर्षा वन अनुसंधान संस्थान ने एक्विलेरिया मैलेकेंसिस में अगरवुड के कृत्रिम प्रेरण को बढ़ाने के लिए दो कवक से बने उत्पाद विकसित किए हैं। त्रिपुरा, मेघालय, उत्तरबंग और असम के उत्तरी तट के मैदानी क्षेत्र के स्वस्थ अगर के पेड़ों में कवक के कृत्रिम संरोपण के माध्यम से अगरवुड को सफलतापूर्वक लगाया गया है और लोग आर्थिक रूप से लाभान्वित हुए है। इन उत्पादों को 19 अगस्त, 2021 को असम के माननीय मुख्यमंत्री डॉ. हिमंत बिस्वा शर्मा द्वारा 'सासी

इनोकुलंट' के ब्रांड नाम में विपणन के लिए जारी किया गया था। ये उत्पाद दो रूपों यानी तरल और पेस्ट में उपलब्ध हैं।

अगर की अन्य साग–सब्जियों के साथ चंदन (सैंटलम एल्बम), काली–मिर्च (पिपर लोंगम), अनानास, चाय, हल्दी, सुपारी के संयोजन में घरेलू उद्यान के साथ–साथ सामुदायिक भूमि में संभावित कृषि–वानिकी प्रजातियों के रूप में पहचान की गई है। हाल ही में जलवायु परिवर्तन के कारण असम में चाय उत्पादन में कमी देखी गई है, इसलिए चाय बागानों के खाली जगहों में अगर की खेती की जा रही है। फलस्वरूप अप्रत्याशित फसल विफलता से चाय उत्पादकों को वैकल्पिक आय प्राप्त होगी। असम अगरवुड प्रमोशन नीति, 2020 में इसका उल्लेख है और चाय एवं अगरवुड उत्पादकों को प्रोत्साहित करने का प्रावधान है। प्रति हेक्टेयर लगभग 1600 पौधों को बनाए रखने के लिए वृक्षारोपण निकटतम अंतराल (2. 5–3.5 मीटर) में किया जाता है। चाय बागानों की तरह अगर बागान ने भी पूर्वोत्तर भारत के रहस्य एवं सौंदर्य का पता लगाने के इच्छुक पर्यटकों की रुचि को आकर्षित किया है। अगरवुड पर्यटन को यदि जिम्मेदारी से प्रबंधित किया जाए, तो यह पर्यावरण अनुकूल प्रथाओं और समुदाय आधारित पर्यटन पहलों को बढ़ावा देते हुए क्षेत्र की समृद्ध जैव–विविधता, पारंपरिक ज्ञान और सांस्कृतिक विरासत को प्रदर्शित करने का एक अनूठा अवसर प्रदान कर सकता है। अगरवुड नीतियों के कार्यान्वयन में इस क्षेत्र को अगरवुड व्यापार और पर्यटन के लिए एक प्रमुख गंतव्य के रूप में स्थापित करने का दायित्व उठाया है। असम सरकार ने इस मूल्यवान एवं स्थानीय पेड़ को लुप्त होने से बचाने के प्रयास में असम अगरवुड प्रमोशन नीति,

*****

2020 को अधिसूचित किया है। वर्ष 2021 में त्रिपुरा सरकार ने भी अगर की खेती को बढ़ावा देने के लिए अगर नीति को अधिसूचित किया है। हाल ही में उत्तर पूर्वी क्षेत्र विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा पूर्वोत्तर क्षेत्र में अगरवुड क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए एक अंतर–मंत्रालयी कार्यबल विकसित किया गया है।

दुनिया भर में अगरवुड की मांग में हालिया वृद्धि के परिणामस्वरूप उत्तर–पूर्व भारत में महत्वपूर्ण आर्थिक संभावनाएं हैं। इस क्षेत्र में अगरवुड ने घरेलू और अंतरराष्ट्रीय दोनों बाजारों को आकर्षित किया है जिसने अगरवुड की कटाई और प्रसंस्करण में लगे स्थानीय समुदायों को आय और आजीविका के अवसर प्रदान किये हैं। पूर्वोत्तर भारत में, लगभग 9.5 लाख लोग इस व्यापार के साथ–साथ खेती में शामिल हैं। लकड़ी की ओलेरेसिन सामग्री के आधार पर +20,000 से +100,000 प्रति किलोग्राम तक कीमत होती है। एसेंसियल तेल की कीमत सामान्यतः +30,000 प्रति लीटर तक होती है। ग्लोबल अगरवुड मार्केट रिसर्च की एक रिपोर्ट के अनुसार वैश्विक अगरवुड बाजार का मूल्य 2020 में 8.64 बिलियन डॉलर था और पूर्वानुमानित अवधि के दौरान 7.8% की सीएजीआर के साथ 2028 तक 14.64 बिलियन डॉलर तक पहुंचने की उम्मीद है। पर्सिस्टेंस मार्केट रिसर्च के एक अध्ययन के अनुसार अगरवुड चिप्स का वैश्विक बाजार 2033 के अंत तक 7.1% सीएजीआर से बढ़कर 87,467.6 मिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुंचने की उम्मीद है। पूर्वोत्तर भारत संधारणीय कृषि, संरक्षण और पारिस्थितिकी पर्यटन की दिशा में समन्वित प्रयासों के साथ भविष्य की पीढ़ियों के लिए इस सुगंधित खजाने का प्रबंधन करके इसका संरक्षक बना रह सकता है।

*****

पतंग भोजन : असम की विभिन्न जनजातियों की पारंपरिक भोजन आदतें

अरबिन्द डेका, तकनीकी सहायक
भा.वा.अ.शि.प.– वर्षा वन अनुसंधान संस्थान,
जोरहाट, असम

मानव जाति के इतिहास में कीड़े खाना एक बहुत पुरानी भोजन आदत है। यह भोजन आदतें एक निश्चित सीमारेखा से नीचे के लोगों के स्वास्थ्य की गठन प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती आ रही हैं। कीटभक्षी आदतें इन लोगों को सदियों से पशु प्रोटीन, वसा, खनिज, विटामिन, प्रोटीन और कैलोरी प्रदान करती आई हैं। भारत में विभिन्न जातीय समूहों के लोगों के बीच कीड़े खाने की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है। ये खाद्य कीड़े ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के लिए बहुत पोषणदायक, आर्थिक और पर्यावरणीय रूप से लाभदायक रहे हैं। कुल मिलाकर, प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले ये कीड़े मांस या मछली की तुलना में बहुत कम कीमत पर पोषक तत्व प्रदान कर सकते हैं। दुनिया भर में कीड़ों की लगभग 1,990 प्रजातियाँ खाई जाती हैं। समुदाय या जनजाति और आदिवासी लोगों के बीच विभिन्न कीड़े स्वादिष्ट भोजन के रूप में लोकप्रिय हैं और विभिन्न बीमारियों को रोकने के लिए भी खाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, बुनकर चींटी (Oecophylla smargdina) का उपयोग नाक के संक्रमण, साइनसाइटिस और गले में संक्रमण की रोकथाम के लिए किया जाता है। पेट के रोगों के लिए पीली होर्नेट (Vespa orientalis] Vespa magnifica) के लार्वा या अंडे और कुमालकोटी (Ancistrocerus sp-) का उपयोग किया जाता है। काली खांसी के इलाज के लिए मधुमक्खी (Apis mellifera) के अंडे, लार्वा और शहद का उपयोग किया जाता है और अस्थमा के इलाज के लिए तिलचट्टा (Periplaneta americana) का उपयोग किया जाता है।

हमारे भारत के पूर्वोत्तर राज्य असम में भी विभिन्न समुदाय या जनजातीय लोगों के बीच विभिन्न प्रकार के कीड़े जैसेः झींगुर (Acheta domesticus] Tarbinskiellus sp] Gryllotalpa sp] दीमक (Odontotermes obesus), टिड्डियाँ (Eupreponotus sp] Choroedocus sp) या चींटी वगैरह खाए जाते हैं। मूगा रेशम कोवा (Antherea assama) से मूगा लार्वा की माँग अधिक है। इससे पता चलता है कि लोग मूगा की खेती करने के बजाय उसे भोजन के रूप में खाने में अधिक रुचि रखते हैं। खाद्य उपयोगी कीड़ों को जनजातियों द्वारा पारंपरिक रूप से पकाया जाता है। खाना पकाने की विधि कीट के प्रकार के अनुसार भिन्न होती है। इन्हें करी या तला–भुना या चटनी के रूप में भी खाया जाता है। कुछ लोग कीड़ों को कच्चा भी खाते हैं। इन कीट व्यंजनों को विभिन्न प्रकार के मसालों के साथ पकाया जाता है। यहां असम के विभिन्न जातीय समूहों द्वारा खाए जाने वाले पतंग भोजन की एक संक्षिप्त चर्चा प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

आहोम समुदाय : बोहाग बिहू के दो दिन बाद बुनकर चींटी (Oecophylla smargdina) के लार्वा को खाना इस समुदाय के लोगों का सांस्कृतिक रिवाज है। बुनकर चींटी के लार्वा को आमतौर पर तेल में तल कर खाया जाता है। इसके शरीर में फॉर्मिक एसिड के कारण इसका स्वाद थोड़ा खट्टा होता है। इस समुदाय के लोगों का मानना है कि बुनकर चींटी को खाने से शरीर को संक्रमण से बचाया जा सकता है। इस कीट में पाए जाने वाले फॉर्मिक एसिड का उपयोग विभिन्न बीमारियों के इलाज के लिए किया जाता है, जैसेः

खुजली, मलेरिया, दांत दर्द, पेट के रोग और रक्तचाप की अनियमितता हटाने के लिए उपयोग किया जाता है। मूगा (Antherea assama) या एड़ी (Samia cynthia ricini) के कोवा और लार्वा को तेल में तल कर खाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि इसे खाने से गले की खुजली और खरोंच ठीक हो जाती है। कोवा और लार्वा खाने से छोटे बच्चों में मुंह और जीभ के संक्रमण को रोकने में मदद मिलती है।

बुनकर चींटी की सब्जी

एड़ी कोवा की सब्जी

मिचिंग जनजाति : आहोम लोगों की तरह, बोहाग बिहू के दौरान बुनकर चींटी खाना इस जनजाति के लोगों का एक पारम्परिक रिवाज है। मिचिंग लोगों का मानना है कि बुनकर चींटी खाने से शरीर रोग संक्रमण से सुरक्षित रहता है। ये लोग अपरिपक्व कोवा, लार्वा और कीड़ों के अंडे खाते हैं। जापोरि कीड़े (स्मजीवबमतबने पदकपबने), मूगा या एड़ी के कोवा/लार्वा और झींगुर इस जनजाति के लोगों की पसंदीदा खाद्य की सूची में आता है।

मूगा लार्वा का तलना

बुनकर चींटी के भुने अण्डे और मूगा लार्वा की सब्जी के साथ भोजन

तिवा जनजाति : तिवा जनजाति असम के सबसे पुराने लोगों में से एक है। तिवा लोग कीटभक्षी के पारंपरिक ज्ञान में बहुत समृद्ध हैं लेकिन उनका ज्ञान उन्हीं तक सीमित है। वंशानुगत रूप से मौखिक रूप से यह चलता रहा है। आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग से होने के कारण वे बेहतर प्रोटीन युक्त भोजन से वंचित हैं, इसलिए आसानी से उपलब्ध होने वाले खाद्य कीड़े जैसे कि जापोरि कीड़े, टिड्डियों (Grasshoppers), लाल चींटी (Myrmica rubra), मूगा कोवा, एड़ी कोवा, मधुमक्खी, झींगुर, पीली होर्नेट (Pompilidae Sp-) आदि पर तिवा जातीय समूह आश्रित हैं।

बुनकर चींटी की चटनी

एड़ी कोवा की सब्जी

कार्बी और रंगमा–नागा जनजाति : असम के कार्बी–आंगलोंग जिले में कार्बी और रंगमा–नागा जनजाति में कीटभक्षी बहुत अधिक हैं। वे लगभग 32 विभिन्न प्रकार के कीड़ों को खाते हैं। टिड्डी, मूगा कोवा, मधुमक्खी, झींगुर, पीली होर्नेट आदि कार्बी लोगों का आसानी से उपलब्ध प्रोटीन भोजन है। एड़ी कोवा और लाल चींटी कार्बी लोगों का बहुत लोकप्रिय भोजन है। जापोरि कीड़े, इन आदिवासी समुदायों के बीच बहुत लोकप्रिय हैं। इन्हें आग में पका कर या तेल में भूनकर परोसा जाता है।

झींगुर का तलना

बुनकर चींटी का लार्वा

बोरो जनजाति : बोरो लोग असम की सबसे पुरानी भाषाई जनजाति है। वे विभिन्न वर्गों के कीड़ों की लगभग 25 प्रजातियों को खाते हैं। विभिन्न प्रकार के मूगा का कीड़ा, एड़ी का कीड़ा, रेशम का कीड़ा (Silkworm) और इसके कोवा तथा लार्वा, झींगुर, टिड्डियां, जापोरि कीड़े, पीली होर्नेट आदि कीड़े—मकोड़े इनके भोजन में शामिल होते हैं। बोरो लोग इन कीड़ों को तेल में तलकर या भूनकर खाते हैं। कुछ कीड़े जैसे होर्नेट, बुनकर चींटी आदि कच्चे ही खाये जाते हैं। जल मेहतर भृंग (Hydrochera rickseckeri) बोरो जनजाति के बीच विशेष रूप से लोकप्रिय है। इसे तालाबों, नहरों आदि से एकत्र किया जाता है और तेल में भूना या तला जाता है।

मूगा लार्वा का तलना

जल मेहतर भृंग

राभा जनजाति : राभा लोगों की यह कीटभोजन की आदतें बहुत पुरानी हैं और पीढ़ियों से इसे उपयोग किया जा रहा है। वे बोरो जातीय समूहों में से एक हैं। वे दक्षिणी असम, विशेषकर कामरूप और गोवालपारा जिलों में व्यापक हैं। बोरो लोगों की तरह ही विविध प्रकार के मूगा का कीड़ा, एड़ी का कीड़ा, रेशम का कीड़ा और इसके कोवा तथा लार्वा, झींगुर, टिड्डियों, जापोरि कीड़े, पीली होर्नेट आदि कीड़े—मकोड़े इनके भोजन में शामिल होते हैं। राभा लोग तिलचट्टा (Cockroach) को पीसकर काली मिर्च, अदरक और अन्य मसालों के साथ मिलाकर खाते हैं। इसे तेलपका कहते हैं। पीलिया और अस्थमा के पारंपरिक रूप से इलाज के लिए इस तेलपका का उपयोग किया जा रहा है।

जापोरि कीड़े का तलना

तिलचट्टा की चटनी (तेलपका)

दिमाचा कचारी जनजातिः दीमा हसाओ जिले के दिमाचा कचारी लोगों के बीच यह कीट–भक्षी प्रथा बहुत प्राचीन है। दीमा हसाओ जिला जैव विविधता से समृद्ध है लेकिन कई ग्रामीण क्षेत्र खराब सड़क संपर्क के कारण अनदेखे हैं। उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक इस जनजाति के लोग भोजन के रूप में लगभग 19 अलग–अलग प्रजातियों के कीड़ों का सेवन करते हैं। विविध प्रकार के कीड़े जैसे मूगा, एड़ी, रेशम का कीड़ा और इसके कोवा तथा लार्वा, झींगुर, टिड्डियां, जापोरि कीड़े, पीली होर्नेट आदि उनके पसंदीदा खाद्य में से एक हैं। इन कीड़ों का उपयोग पारंपरिक रूप से विभिन्न बीमारियों के इलाज के लिए किया जा रहा है।

तालिकाः कुछ खाद्य कीड़ों की प्रति 100 ग्राम में पोषक तत्व

कीट का नाम	प्रोटीन (ग्राः)	चर्बी (ग्राः)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राः)	कैल्शियम (ग्राः)	आयरन (ग्राः)
मूगा, एड़ी, रेशम का लार्वा	21.5	13	6.7	81	2.6
टिड्डी	20.6	6.1	3.9	35.2	5.0
जापोरि कीड़े	19.8	8.3	2.1	83.5	13.6
झींगुर	21.32	6.01	5.1	75.8	9.5
तिलचट्टा	8.72	17.64	48.76	468	274.6
बुनकर चींटी	5.4	2.0	10.06	163.4	11.43
भृंग	17.2	4.3	2.0	30.9	7.7
मधुमक्खी	35.3	14.5	46.1	84.9	13.3
लाल चींटी	13.9	3.5	2.9	47.8	5.7
दीमक	1.80	2.06	0	7.86	35.5

निष्कर्ष : प्राचीन काल से ही असम के विभिन्न समुदायों, जातीय समूहों और जनजातीय लोगों के आहार में कीड़े एक वैकल्पिक भोजन रहे हैं। बहुत से लोग इन कीड़ों और उनके उत्पादों जैसे शहद, जूट के धागे आदि को बेचकर अपना जीवन–यापन करते हैं। इसलिए इस तथ्य को ध्यान में रखना जरूरी है कि कृषि और बागवानी फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कीड़ों की संख्या में काफी कमी आई है। असम के लोगों के सामाजिक–आर्थिक जीवन में कीड़े एक विशेष भूमिका निभाते हैं। बेहतर पशु प्रोटीन के विकल्प के रूप में अब कीड़े अपना स्थान ले रहे हैं और इसलिए इस विषय पर और शोध की गुंजाइश है ताकि भविष्य में कीड़ों के कृत्रिम पालन के माध्यम से बड़ी मात्रा में पशु प्रोटीन की मांग को पूरा किया जा सके।

संदर्भ :

1) एम. रंजित, et.al. (2023) न्यूट्रीशनल वैल्यू ऑफ रेप्रेसेंटेटिव टरमाइट स्पीसीज विथ ऐन एम्फासिज ऑन ओडोन्टोटरमेस ओबेसस (रामबर) करेंट साइंस, वॉल. 124, नं. 2, 25 जनवरी 2023

2) उकोरोइजे et.al.(2020) कॉकरोच (Periplaneta Americana) न्यूट्रीशनल वैल्यू एज फूड एंड

फीड फॉर मैन एंड लाइवस्टॉक। एशियन फूड साइंस जर्नल, 15(2): 37 – 46, 2020; आर्टिकल नं. AFSJ.56507.

3) घोष संपत, et.al. (2016). न्यूट्रीशनल वैल्यू एंड कैमिकल कॉम्पोसीजन ऑफ लार्वे, प्यूपे एंड अडल्ट्स ऑफ वर्कर हनी बी, ।चपे उमससपमितं सपहनेजपबं एज ए सस्टेनबल फूड सोर्स। जर्नल ऑफ एशिया–पसफिक एंटोमॉलोजी 19 (2016) 487–49

4) चक्रवर्ती जे, et.al. (2014). डाइवर्सिटी ऑफ एडिएल इंसेक्ट्स एंड प्रैक्टीसेज ऑफ एंटोमॉफैगी इन इंडियाः ऐन ऑवरव्यू, बायोडाइवर्स बायोप्रोस देव 2014, 1:3

5) चौधरी कुशल et.al. (2020). प्रोक्सिमेट एंड मिनरल काम्पोसीशन्स ऑफ Samia cynthia ricini, aM Dytiscus marginalis, कॉमनली कन्स्यूम्ड बाइ द बोडो ट्राइब इन असम, इंडिया। बुलेटिन ऑफ द नेशनल रिसर्च सेंटर (2020) 44:152

6) दास जयंता कुमार (2019). डाइवर्सिटी ऑफ एडिबल इंसेक्ट्स कन्स्यूम्ड बाइ एथनिक ट्राइब्स इन बाक्सा डिस्ट्रिक्ट ऑफ असम, इंडिया। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंटिफिक डेवलेपमेंट एंड रिसर्च (आईजेएसडीआर)। वॉल्यूम 4, इश्यू 7

7) घोष एस.एस., भगवती बी., चटर्जी एस. एंड डेका पी. (2017)। प्रेक्टिस ऑफ एंटोमोफैगी बाई द बोडो कम्युनिटी रिजाइडिंग इन रानी एरिया ऑफ कामरूप डिस्ट्रिक्ट, असम। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एप्लाइड रिसर्च 2017; 3(6): 387–389

8) हजारिका एच.एन. (2018)। एंटोमोफैगी विद स्पेशल रेफेरेन्स टु असम। इंटरनेशनल जर्नल फॉर रिसर्च इन इंजीनियरिंग एप्लीकेशन एंड मैनेजमेंट (आईजेआरईएएम) वॉल्यूम – 04, इस्यू–04, जुलाई 2018, आईएसएसएन : 2454–9150

9) राभा भूपेन एट अल. (2016)। एडिबल इंसेक्ट एज ट्राइबल फूड एमंग द राभास ऑफ असम। आईआरए इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मैनेजमेंट एंड सोशल साइंस, 3 (2)। आइएसएसएन 2455–2267 रिव्यू आर्टिकल

10) शर्मा शिवानी et.al. (2019). एंटोमोफैगी डाइवर्सिटी इन इंडिया ए रिव्यू। जर्नल ऑफ एमर्जिंग टेकनॉलोजीज एंड इन्नोवेटिव रिसर्च (जेईटीआईआर) जनवरी 2019, वॉल्यूम 6, इश्यू 1

11) शर्मा एस. (2018). एडिबल एंड थेराप्यूटिक यूसेज ऑफ इंसेक्ट्स एमंग द वेरियस ट्राइब्स ऑफ डिमरेरिआ डेवेलपमेंट ब्लॉक ऑफ असम, इंडिया। सिनेरियो ऑफ इन्वाइरन्मेन्टल रिसर्च एंड डेवेलपमेंट पेज नं. 101–108 आईएसबीएनः 978–93–5346–498–1

12) नरजरी एस., शराम जे. (2015). ए स्टडी ऑन द प्रिवेलेंस ऑफ एंटोमोफैगी एमंग द बोडोज ऑफ असम। जर्नल ऑफ एंटोमोलॉजी एंड जूऑलॉजी स्टडीज 2015; 3 (2): 315–320

13) https://as.wikipedia.org/wiki

14) **फोटो कर्टसी:** इंटरनेट से लिया गया।

******

फूलों की घाटी (वैली ऑफ फ्लावर्स) की जैव–विविधता

विपिन राव
वरिष्ठ तकनीकी सहायक
एफ. आई. डिवीजन
भारतीय वन सर्वेक्षण, देहरादून

फूलों की घाटी की खोज भारतीय थल सेना के कर्नल एडमंड स्मिथ द्वारा 1862 में की गयी थी। एक अंग्रेज पर्वतारोही, छायाचित्रकार एवं वनस्पति वैज्ञानिक फ्रैंक एस स्मिथ वर्ष 1931 में जब अपने पर्वतारोही मित्रों के साथ माउंट कामेट की यात्रा से लौट रहे थे, तब रास्ता भूलने के कारण वे लोग अकस्मात् ही भयुन्दर घाटी पहुँच गए। बाद में वर्ष 1937 में उन्होंने इस घाटी की सराहना करते हुए एक पुस्तक "दा वैली ऑफ फ्लावर्स" लिखी। उनकी लेखनी के कारण इस जगह को प्राकृतिक पर्यटन के क्षेत्र में विश्व स्तर पर ख्याति मिली। वर्ष 1982 में इस जगह को भारत के एक राष्ट्रीय उद्यान के रूप में घोषित किया गया।

चित्र 1. फूलों की घाटी के कुछ मनोरम एवं मनमोहक दृश्य

भौगोलिक स्थिति

उत्तराखंड के चमोली जिले में स्थित फूलों की घाटी राष्ट्रीय उद्यान का कुल क्षेत्रफल 87.50 वर्ग किलोमीटर है। फूलों की घाटी नंदा देवी पार्क से 23 किलोमीटर उत्तर–उत्तर पश्चिम दिशा में पुष्पावती घाटी में स्थित है। भयुन्दर घाटी के शीर्ष पर स्थित दो झूलती घाटियों में से एक फूलों की घाटी है जबकि दूसरी हेमकुंड घाटी है। फूलों की घाटी की चौड़ाई लगभग 6 किलोमीटर और लम्बाई लगभग 15 किलोमीटर है जो की पूर्व–पश्चिम दिशा में विस्तृत है। इस घाटी का मध्य भाग, जो कि कुंडालीनिसेंड पठार के नाम से भी जाना जाता है, लगभग 3500 मीटर की ऊंचाई पर 10 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। फूलों की घाटी से लगभग 7 किलोमीटर दूर दक्षिण दिशा में घांघरिया स्थित है जहाँ पर पुष्पावती और लक्ष्मण गंगा के संगम से भयुन्दर गंगा बनती है। लक्ष्मण गंगा लोकपाल झील से हेमकुंड घाटी से होकर बहती है। भयुन्दर गंगा गोविन्दघाट में अलकनंदा से मिल जाती है जो की गंगा की एक सहायक नदी है। फूलों की घाटी चारों ओर से ऊँचे पर्वत शिखरों से घिरी हुई है। इसके उत्तर में नीलगिरी पर्वत है जबकि दक्षिण में सप्तसृंग है। फूलों की घाटी के पूर्व में गौरी पर्वत है जो पुष्पावती नदी का उदगम स्थल है और उत्तर–पश्चिम में नर पर्वत है।

(स्रोतः वर्ल्ड कंजरवेशन मोनिटरिंग रिपोर्ट ऑफ वर्ल्ड हैरीटेज साइट्स बाई यू एन ई पी)

जलवायु

विस्तृत सामान्य जलवायु क्षेत्रों के अंतर्गत छोटे क्षेत्र विशेष की विशिष्ट जलवायु को सूक्ष्म जलवायु कहते हैं। सूक्ष्म जलवायु बहुत सारे कारणों पर निर्भर एवं उनसे प्रभावित होती है जैसे कि स्थिति एवं अक्षांशीय विस्तार, समुद्र से दूरी, पर्वत मालाओं की स्थिति, भूमि का ढाल, मिट्टी की प्रकृति आदि। हिमालय की दूसरी भीतरी घाटियों से जुड़ी हुई सूक्ष्म जलवायु यहाँ फूलों

की घाटी में भी पाई जाती है। सामान्यतः यहाँ की स्थिति शुष्क और वार्षिक अवक्षेपण कम है, परन्तु मानसून में मूसलाधार वर्षा होती है जो कि जून से सितम्बर के महीने तक रहती है। मानसून में कुहासे और बादल छाए रहने से यहाँ की मिट्टी में नमी की मात्रा बहुत अधिक होती है और इसी कारण यहाँ पर वनस्पति की प्रचुरता देखने को मिलती है। फूलों की घाटी और इसके आसपास के स्थान अक्टूबर से मार्च तक लगभग 6–7 महीने के लिए बर्फ से ढके रहते हैं।

वनस्पतिजात

फूलों की घाटी में वनस्पति की 600 से अधिक प्रजातियाँ पाई जाती हैं जिसमें से कई प्रजातियाँ दुर्लभ हैं। अपनी असामान्य समृद्ध वनस्पतियों के कारण ही यह जगह विश्व विख्यात है। यह जगह ग्रेट हिमालय और जान्स्कर पर्वत श्रृंखला के बीच स्थित है। वर्ष 1992 में वन अनुसन्धान संस्थान ने फूलों की घाटी और आस–पास के क्षेत्र में आव्रत्बीजी की 600 प्रजातियाँ और टेरीडोफाय्ट्स की 30 प्रजातियाँ दर्ज की थी। इसमें पांच प्रजातियाँ ऐसी हैं जो उत्तराखंड में कहीं और नहीं पाई जाती – एकोनीटम फैल्कोनेरी, एकोनीटम बैल्फौरी, एसर सीजियम, मीकानोप्सिस एक्युलिएट और सौसूरिया एटकिन्सोनी। 31 प्रजातियाँ राष्ट्रीय स्तर पर दुर्लभ श्रेणी में रखी गई हैं। धार्मिक अनुष्ठानों में स्थानीय ग्रामीण सौसूरिया ऑबवेल्लेटा (ब्रह्मकमल) को एकत्रित कर उसे देवी देवताओं को

चित्र 2. फूलों की घाटी और आस–पास के क्षेत्र में पाए जाने वाले फूलों की कुछ प्रजातियाँ

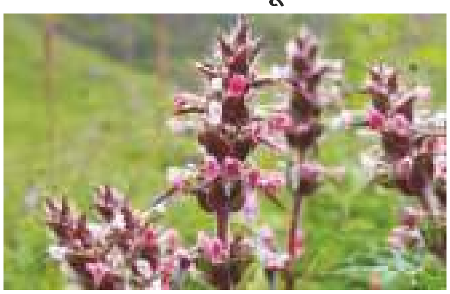

हिमालयन व्होर्ल फ्लावर

पोटेंटिल्ला क्यूनीफोलिया

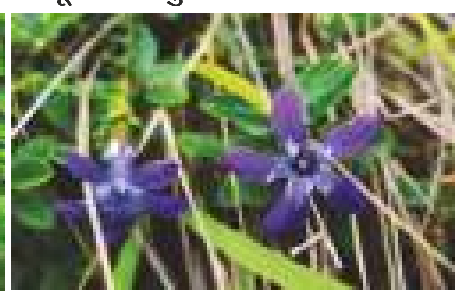

स्माल लीव्ड ट्रेलिंग बैलफ्लावर

सिन्क्फोइल

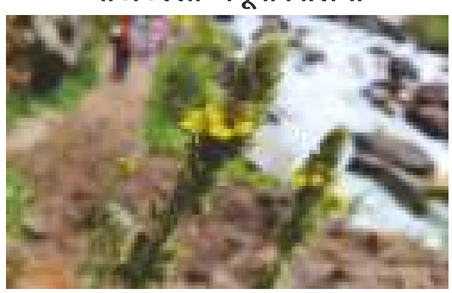

कॉमन मुल्लेन

जायंट बैलफ्लावर

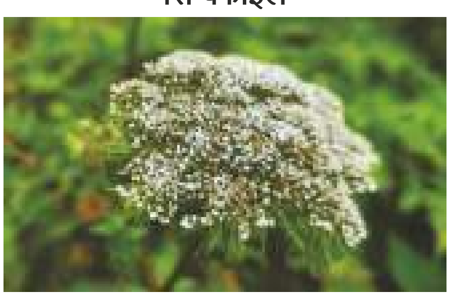

मिल्क पार्स

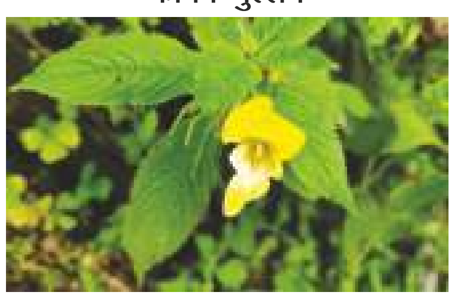

लेरफ येल्लो बालसम

वाल्लिच क्रेंस–बिल

हिमालयन टीजेल

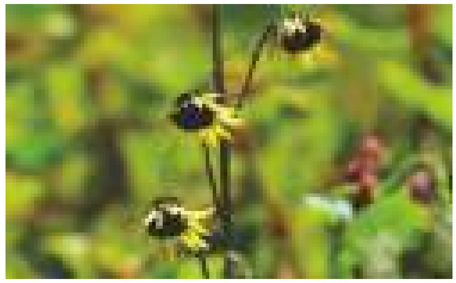

हिमालयन डेजी

ऐरो लीफ ब्लू स्नो थिसल

हिमालयन फ्लीसफ्लावर

स्टेम क्लास्पिंग लिग्यूलेरिया

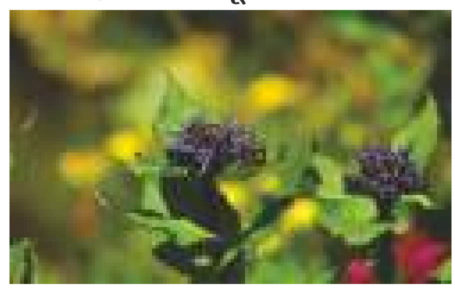

हिमालयन सॉ–वोर्ट

ब्रह्माकमल

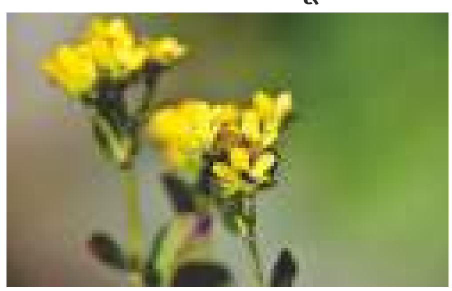

हिमालयन सेक्सीफ्रेज

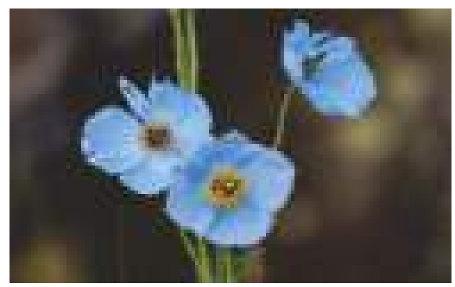

ब्लू पॉपी

अर्पित करते हैं। इस घाटी और उसके आस–पास के क्षेत्र में आमतौर पर पाए जाने वाले कुछ फूलों को चित्र 2 में दर्शाया गया है।

प्राणिजात

घाटी में पाये जाने वाले प्राणियों का घनत्व तो अधिक नहीं है परन्तु यहाँ मिलने वाले लगभग सारे प्राणी राष्ट्रीय स्तर पर दुर्लभ हैं अथवा संकटग्रस्त श्रेणी में आते हैं। राष्ट्रीय उद्यान और आसपास के क्षेत्र से 13 स्तनपायी प्रजातियाँ दर्ज की गई हैं, जिसमें से केवल 9 प्रजातियाँ ही प्रत्यक्ष रूप से देखी गई हैं। इन प्रजातियों में प्रमुख हैं – नोर्दर्न प्लेन्स ग्रे लंगूर, फ्लाइंग स्क्विरेल, हिमालयन ब्लैक बियर, रेड फॉक्स, हिमालयन वीजल, हिमालयन येल्लो थ्रोटिड मार्टिन, हिमालयन घोरल, हिमालयन मस्क डियर, बार्किंग डियर, हिमालयन थार और सेरो। कॉमन लेपर्ड प्रायः घाटी के निचले हिस्सों में गाँव के आसपास ही देखा जाता है। स्थानीय ग्रामीण लोगों के अनुसार उन्हें यहाँ पर ब्राउन बियर और भारल के होने के प्रमाण भी मिले हैं। वर्ष 2004 में अक्टूबर में किये गए एक सर्वेक्षण के अनुसार यहाँ पर संकटग्रस्त श्रेणी के स्नो लेपर्ड की उपस्थिति भी प्रमाणित की जा चुकी है। यहाँ पाई जाने वाली कुछ स्तनपायी प्रजातियाँ चित्र 3 में दर्शायी गई हैं।

यह जगह पश्चिमी हिमालयन स्थानिक पक्षी क्षेत्र के अंतर्गत है परन्तु विशिष्ट रूप से इस घाटी के लिए पर्याप्त सर्वेक्षण नहीं किया गया है। यहाँ पक्षियों की लगभग 150 से अधिक प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिसमें

चित्र 3. फूलों की घाटी और आस–पास के क्षेत्र में पाए जाने वाले प्राणियों की कुछ प्रजातियाँ

हिमालयन पीका

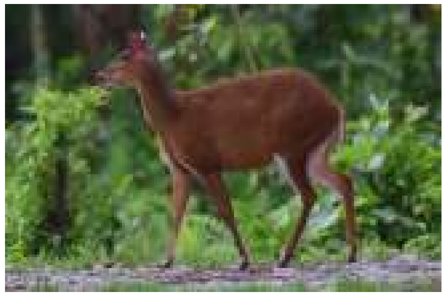

बार्किंग डियर

हिमालयन वीजल

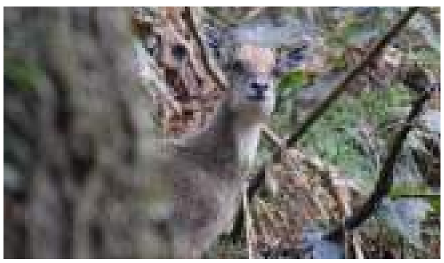

घोरल

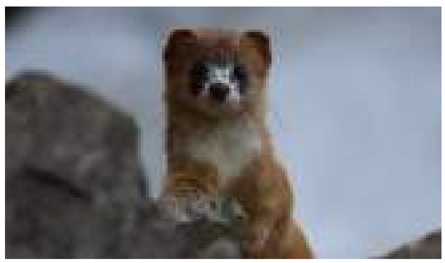

साइबेरियन वीजल

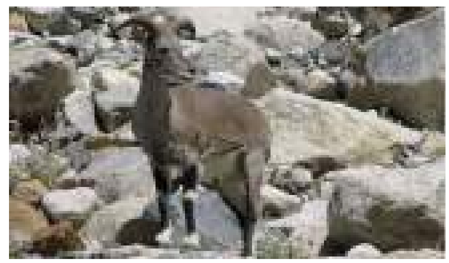

भारल

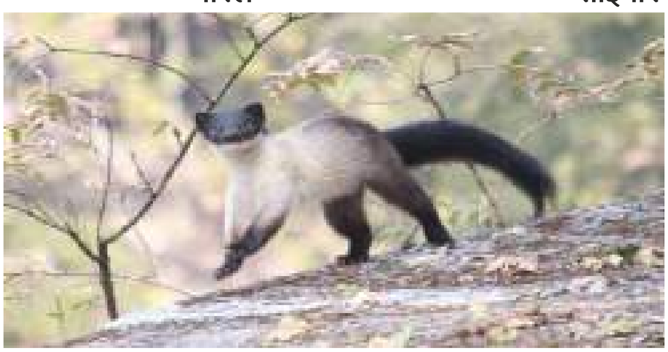

हिमालयन येल्लो थ्रोटिड मार्टिन

हिमालयन थार

नोर्दर्न प्लेन्स ग्रे लंगूर

रेड फॉक्स

कॉमन लेपर्ड

से प्रमुख हैं: बेयरडेड वल्चर, हिमालयन मोनाल, रेड बिल्ड चौफ, येल्लो बिल्ड चौफ, हिमालयन ब्लूटेल, रेड हेडेड बुलफिंच, वाइट कैप्ड रेडस्टार्ट, वैरीगेटड लाफिंगथ्रश इत्यादि। पक्षियों की कुछ प्रजातियाँ जो यहाँ आमतौर पर मिलती हैं, उन्हें चित्र 4 में प्रस्तुत किया गया है। इस क्षेत्र में सरीसृपों की काफी कम

प्रजातियाँ मिलती हैं जिसमें हिमालयन पिट वाईपर, हिमालयन ग्राउंड स्किंक और अगामा ट्यूबरक्यूलाटा ही अक्सर देखने को मिलते हैं।

फूलों की अनेक प्रजातियों के कारण यहाँ पर जंगली मधुमक्खियों और तितलियों की भी कई प्रजातियाँ देखने को मिलती हैं, परन्तु इस क्षेत्र विशेष पर भी अभी ज्यादा अनुसन्धान नहीं किया गया है। कॉमन ब्लू अप्पोलो, कॉमन मॉरमॉन, वेस्टर्न स्ट्रायेटड सेटायर, इंडियन रेड एडमिरल, पेंटेड लेडी और हिमालयन टोरटोइजशैल तितलियाँ यहाँ प्रायः देखने को मिलती

चित्र 4. फूलों की घाटी और आस–पास के क्षेत्र में पाए जाने वाले पक्षियों की कुछ प्रजातियाँ

रूफस जोर्जेतेड फ्लाईकैचर

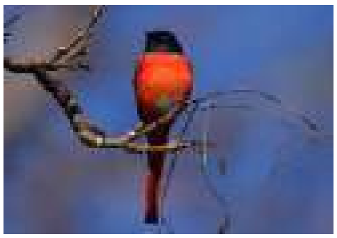
लॉन्ग टेल्ड मिनिवेट

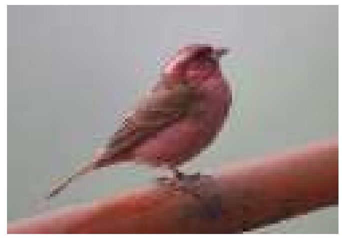
पिंक ब्राउड़ रोजफिंच

वाइट कैप्ड रेडस्टार्ट

वर्डीटर फ्लाईकैचर

ब्लू व्हिस्लिंग थ्रश

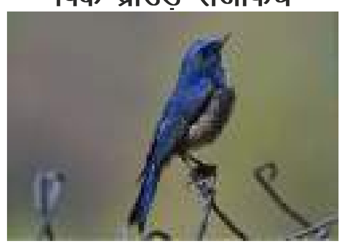
हिमालयन ब्लूटेल

अल्ट्रामरीन फ्लाईकैचर

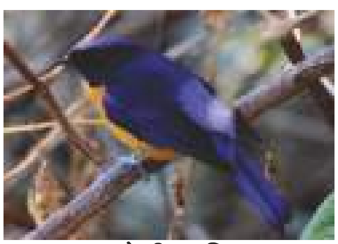
रुफस बेलीड निल्तावा

वैरीगेटड लाफिंगथ्रश

हिमालयन मोनाल

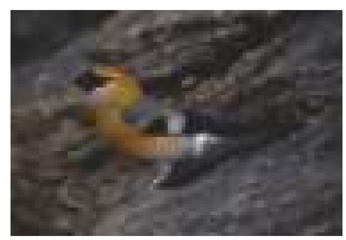
रेड हेडेड बुलफिंच

स्लेटी हेडेड पैराकीट

ग्रे विंग्ड ब्लैकबर्ड

रेड बिल्ड चौफ

येल्लो बिल्ड चौफ

लार्ज बिल्ड क्रो

स्ट्रीकड लाफिंगथ्रश

रुफश सीबिया

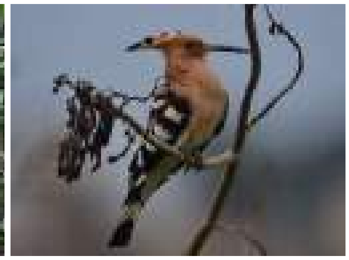

यूरेशियन हूपी

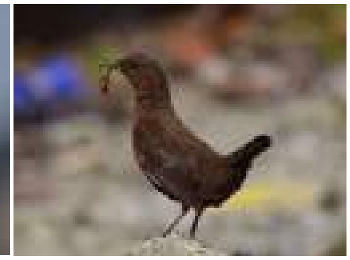

ब्राउन डिपर

गोल्डन बुश रोबिन

येल्लो बेलीड फेयरी फैनटेल

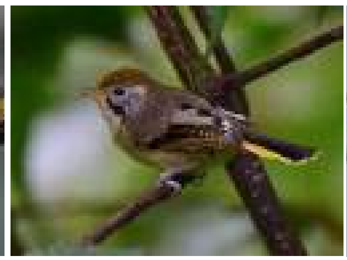

चेस्टनट टेल्ड मिन्ला

येल्लो ब्रेस्टेड ग्रीनफिंच

हैं। यहाँ कुछ दुर्लभ तितलियाँ भी मिलती हैं जैसे कि कश्मीर कॉमा और वेस्ट हिमालयन वेंड लेबीरिन्थ। यहाँ पाई जाने वाली कुछ सामान्य और कुछ दुर्लभ तितलियों को चित्र 5 में दर्शाया गया है।

इसके अतिरिक्त यह क्षेत्र कीट – पतंगों की प्रजातियों में भी बहुत समृद्ध है। यहाँ पाए जाने वाले कुछ कीट

चित्र 5. फूलों की घाटी और आस–पास के क्षेत्र में पाई जाने वाली तितलियों की कुछ प्रजातियाँ

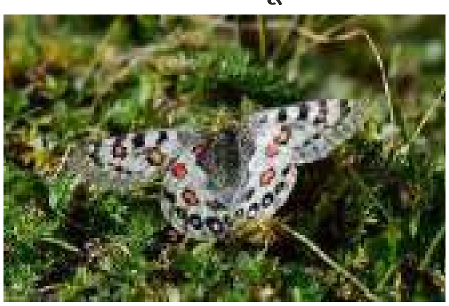

कॉमन ब्लू अप्पोलो

हिमाचल अज्युर सफायर

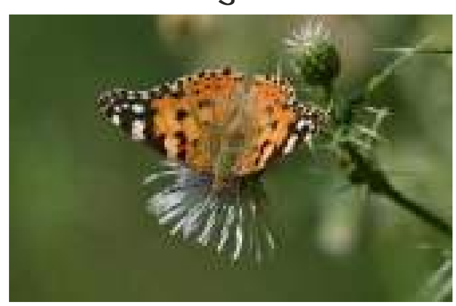

पेंटेड लेडी

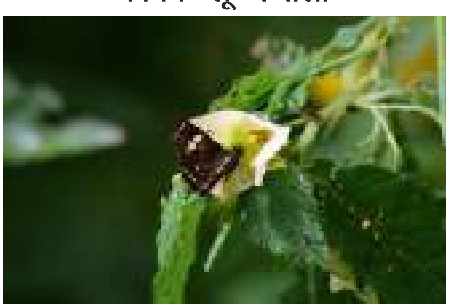

वेस्टर्न येल्लो बॉर्डरड स्पॉटेड फ्लैट

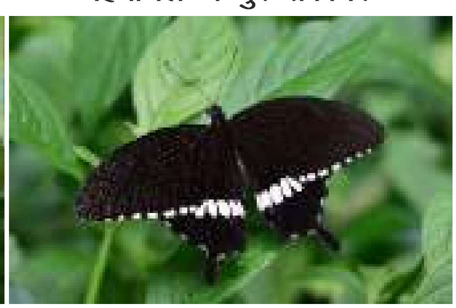

कॉमन मॉरमॉन

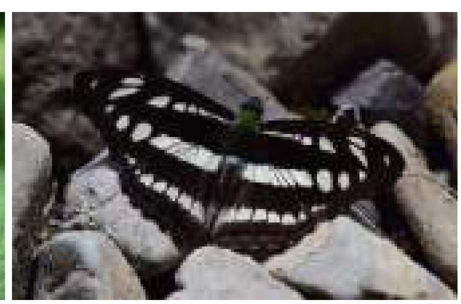

वेस्ट हिमालयन हिल सार्जेन्ट

वेस्टर्न स्ट्रायेटड सेटायर

हिमालयन स्माल टोनी वाल

पैलिड आरगस

हिमालयन टोरटोइजशैल

हिमालयन कॉमन ब्रिमस्टोन

इंडियन रेड एडमिरल

हिमालयन लार्ज सिल्वरस्ट्राइप

इंडियन फ्रीटीलरी

वेस्ट हिमालयन हिल हेज ब्लू

कश्मीरी कॉमा

वेस्ट हिमालयन वेंड लेबीरिन्थ

पतंगों को चित्र–6 में दिखाया गया है। अपर्याप्त शोध और अनुसन्धान के कारण अभी भी हम इस क्षेत्र की जैव–विविधता का सही और सम्पूर्ण आंकलन करने से वंचित हैं। प्रजातियों पर केन्द्रित विशिष्ट सर्वेक्षण से यहाँ की जैव–विविधता के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है जिससे विभिन्न प्रजातियों के जटिल इंटरैक्शन को समझकर उनके संरक्षण के लिए सही और जरूरी प्रयास किए जा सकते हैं।

चित्र 6. फूलों की घाटी और आस–पास के क्षेत्र में पाए जाने वाले कुछ अन्य कीट–पतंगे

आशा है कि इस रचना को पढ़ने के उपरान्त जन साधारण को इस मनमोहक पर्यटन स्थल के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त होगी और साथ ही साथ इस क्षेत्र में शोध करने वाली युवा पीढ़ी को प्रोत्साहन भी मिलेगा।

****

स्टीविया – एक औषधीय जड़ी बूटी

अखिल कुमार, मुख्य तकनीकी अधिकारी
भा.वा.अ.शि.प.–हिमालयन वन अनुसंधान संस्थान,
पंथाघाटी, शिमला (हि. प्र.)–171013
Email: akhilk@icfre.org

परिचय : स्टीविया एक औषधीय जड़ी बूटी एवं बारहमासी पौधा है। स्टीविया की पत्तियों में डाइटरपीन ग्लाइकोसाइड्स (स्टीवियोसाइड और रेबाउडियो–साइड्स) गैर–विषैले, उच्च मिठास वाले तत्व पाये जाते हैं। इसकी पत्तियों में सुक्रोज की तुलना में अधिक मिठास होती है। मिठास के अलावा, स्टीविया में कई औषधीय गुण भी पाये जाते हैं। स्टीविया के पौधों में कीटों द्वारा परागण (Pollination) होता है। डायबिटीज की संजीवनी (Diabetes Medicine) होने के साथ–साथ, स्टीविया किसानों के लिये हरा सोना है। यह एक औषधीय पौधा है, जो डायबिटीज और मोटापे जैसी खतरनाक बीमारियों से राहत दिलाने में अहम भूमिका निभा रहा है। स्टीविया के पौधे में कीट विकर्षक गुण (Insect repellent properties) भी पाये जाते हैं।

स्टीविया का फसल प्रबंधन: भारत में सितंबर से अक्टूबर और फरवरी से मार्च के बीच इसकी रोपाई की जाती है। स्टीविया आमतौर पर स्टेम कटिंग द्वारा उगाया जाता है, व्यावसायिक रूटिंग हार्मोन का उपयोग करके भी रूटिंग को बढ़ाया जा सकता है। पौधे के विकास के लिए नमी की निरंतर आपूर्ति की आवश्यकता होती है। किन्तु बहुत अधिक मृदा की नमी से इसकी जड़ें सड़ जाती हैं। वैसे तो स्टीविया की फसल कीट–रोग मुक्त होती है, लेकिन अकसर फसल में खरपतवार उग जाते हैं, जिनकी रोकथाम के लिए लगातार निराई–गुड़ाई और निगरानी करने की सलाह विशेषज्ञों द्वारा दी जाती है। इस फसल में बोरान तत्व की कमी के कारण पत्तियों पर धब्बे पड़ने लगते हैं, जिसकी रोकथाम के लिये, विशेषज्ञों की सलाह अनुसार

6% बोरेक्स प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव किया जा सकता है। स्टीविया के पौधे में कीटनाशक या रासायनिक खाद का सीधे तौर पर इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, क्योंकि कीटनाशकों का इस्तेमाल पौधे एवं मृदा के लिए नुकसानदायक हो सकता है। सर्दियों के मौसम में हर 10 दिन में स्टीविया की पौधों की सिंचाई की जाती है, जबकि गर्मियों में हर सप्ताह सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। स्टीविया की अच्छी पैदावार के लिये खेतों में वर्मी कंपोस्ट का भी इस्तेमाल किया जाता है।

स्टीविया में कीट प्रबंधन: स्टीविया में पाउडर रूपी फफूंद, तना सड़न और डैम्पिंग ऑफ रोगों एवं एफिड्स, सफेद मक्खियों, मीली बग, लाल मकड़ी आदि कीट लगते हैं, किन्तु आम तौर पर फसल में अत्यधिक नुकसान नहीं होता है।

स्टीविया से आय की संभावनाएँ: दुनियाभर में खराब खान–पान के कारण डायबिटीज के मरीज बढ़ते जा रहे हैं। भारत में भी डायबिटीज के मरीजों का आंकड़ा बढ़ता जा रहा है, जो कि चिंताजनक विषय है, लेकिन किसान चाहें तो इस समस्या को सुलझाने में अपना योगदान दे सकते हैं। स्टीविया की खेती में सबसे बड़ी बाधा उच्च प्रारंभिक निवेश लागत है। कई दवा कंपनियां एवं औषधीय संस्थान किसानों को कांट्रेक्ट देकर स्टीविया की खेती (Contract Farming of Stevia) भी करवाते हैं। कम लागत वाले प्रजनन के तरीकों को विकसित करके ना केवल इस पौधे के बायोमास को बढ़ाया जा सकता है, बल्कि किसानों की आय में भी वृद्धि की जा सकती है। आजकल बाजार में स्टीविया के उत्पाद भी मिलने लगे हैं जिन्हें हम अपनी रोजमर्रा की जिंदगी में स्वस्थ रहने के लिए, एक प्राकृतिक स्वीटनर (Natural Sweetner) की तरह इस्तेमाल में ला सकते हैं।

****

भारतीय परिप्रेक्ष्य में पनसीरा का स्थान

डॉ. अश्वनी कुमार, मुख्य तकनीकी अधिकारी
मनोज कुमार, तकनीशियन

परिचय :

पनसीरा का वानस्पतिक नाम Wendlandia heynei (Schult.) Santapau & Merchant है। भारत में इसे विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे कि चीला, रातेला, तिलकी (स्थानीय नाम); तिलक (हिन्दी); पनसीरा (पंजाबी); रातेला, पनसीरा (हिमाचल प्रदेश)। पनसीरा एक तेजी से बढ़ने वाला पर्णपाती या सदाबहार सजावटी पेड़ है। यह एक महत्वपूर्ण सामाजिक वानिकी प्रजाति है इसका उपयोग ग्रामीणों द्वारा चारे, ईंधन, इमारती लकड़ी और कृषि उपकरण के हत्थे बनाने में किया जाता है। यह पौधा वेण्ड्लांडिया (Wendlandia) thul/वर्ग व रूबिएसी (Rubiaceae) कुल से संबन्धित है। इसका समानार्थी शब्द (Synonyms) Wendlandia exserta (Roxb.) DC. है। यह पौधा ढीली मिट्टी में उगना पसंद करता है जहां पर सूर्य की रोशनी सीधी पड़ती हो। यह मुख्यतः भूस्खलन प्रभावित ढलानों, कृषि के बाद छोड़ी गयी भूमि और विनिर्माण के बाद उजागर हुई मिट्टी में काफी मात्रा में आता है।

वानस्पतिक विवरण :

पनसीरा, एक सदाबहार मध्यम आकार का पेड़ है। इसकी ऊंचाई सामान्यतः 4 से 6 मीटर तक होती है। इसकी छाल हल्की लाल भूरे रंग की होती है। इसकी पत्तियाँ विपरीत होती हैं। इसमें चार पंखुड़ियों वाले सफेद फूल और पीले परागकोश होते हैं। इसके फूल मार्च–अप्रैल माह में आते हैं। इस प्रजाति के बीज मई–जून में बहुत छोटे और परिपक्व होते हैं। बीज छोटे, काले और गोल होते हैं। अंकुर लंबे, संकीर्ण पत्तों के साथ पतले होते हैं।

पनसीरा के पेड़ की पत्तियाँ

पनसीरा के पेड़ का तना व छाल

पनसीरा का पेड़

पनसीरा का पेड़ फूलों सहित

संबद्ध प्रजातियाँ :

पेड़: बॉम्बैक्स सीबा एल., डालबर्गिया सिसू रॉक्सब. एक्स डीसी, मैलोटस फिलिपेंसिस (लैम.) मुल. आर्ग., फिलैंथस एम्ब्लिका एल., सेनेगलिया कैचू (एल.एफ) पी.जे.एच. हर्टर एंड मैब., टर्मिनालिया बेलिरिका (गार्टन.) रॉक्सब., टर्मिनालिया चेबुला रेट्ज, बहुनिया वेरईगाटा एल., पिनस रॉक्सबुर्घी सर्ज., टूना सिलिआटा एम. रोएम, आदि।

झाड़ियाँ: डोडोनिया विस्कोसा जैक., कैरिसा कारंडास एल., मुरैया कोएनिगी (एल.) स्प्रेंग., विटेक्स नेगुंडो एल., पोगोस्टेमोन बेंघालेंसिस कुंट्ज आदि।

जड़ी बूटी: वियोला ओडोराटा एल., धतूरा स्ट्रैमोनियम एल., एलोवेरा (एल.) बर्म.एफ आदि।

भौगोलिक वितरण:

यह प्रजाति दक्षिण एशिया के देशों बांग्लादेश, पाकिस्तान (पंजाब), कश्मीर, नेपाल तथा भारत में पायी जाती है। यह प्रजाति बाहरी हिमालय की शिवालिक पहाड़ियों, छोटा नागपुर और भारतीय प्रायद्वीप के कुछ हिस्सों में 1400 मीटर की ऊंचाई तक उप–हिमालयी क्षेत्रों में पायी जाती है। यह हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर, कांगड़ा, हमीरपुर, सोलन और सिरमौर जिलों के मैदानी क्षेत्रों में पायी जाती है।

संवर्धन :

पनसीरा का प्राकृतिक पुनर्जनन बहुत कमजोर है। इसे बीज या कलमों द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है, परंतु कटिंग के माध्यम से इसको उगाने के अच्छे परिणाम देखे गए हैं। बीजों को अच्छी तरह से सूखी, रेतीली मिट्टी के मिश्रण में बोया जाना चाहिए और नम रखा जाना चाहिए। कटिंग परिपक्व, स्वस्थ पौधों से ली जानी चाहिए और उन्हें जड़ लगने तक गर्म, आर्द्र वातावरण में रखा जाना चाहिए।

इस प्रजाति की लकड़ी का तहदार लकड़ी (plywood) उद्योग में उपयोग किया जा सकता है। इसकी अनुकूल क्षेत्रों में इसका पुनर्जनन काफी अच्छा देखा गया है। यदि इसके वर्धन और पुनर्जनन पर काम किया जाए तो यह शुष्क एवं गरम क्षेत्रों में पोपलर का विकल्प हो सकता है।

औषधीय उपयोग :

इसकी पत्तियां आक्षेपनाशक, रक्तशोधक, और ज्वरनाशक होती हैं। एमेनोरिया के इलाज के लिए पत्तियों और फलों का काढ़ा उपयोगी होता है। घावों को ठीक करने और खुजली जैसे त्वचा रोगों के इलाज के लिए पत्तियों के पाउडर को टॉपिकॉल्ट पर लगाया जाता है। इसके फूलों का उपयोग जोड़ों के संक्रमण के इलाज में किया जाता है।

अन्य उपयोग :

यह सफेद चींटियों के प्रति प्रतिरोधी है और इसका उपयोग इमारतों और कृषि उपकरणों के लिए किया जाता है। यह प्रजाति ढलानदार स्थानों में काफी मात्रा में उगती है। भूस्खलन, विनिर्माण प्रभावित, खुली भूमि में यह सामान्यतः उगती है। यह गरम क्षेत्रों में काफी मात्रा में फलती–फूलती है। इसके लिए भूमि ढीली होनी चाहिए। यह प्रजाति भौगोलिक रूप से कमजोर क्षेत्रों, नयी उजागर भूमि में पुनः वनीकरण करने के लिए उपयुक्त प्रजाति है। भारत में बहुत से क्षेत्र भूस्खलन से प्रभावित हैं। पनसीरा के पेड़ों को इन क्षेत्रों में भू–स्खलन से बचाने के लिए रोपित किया जा सकता है।

*****

जलवायु परिवर्तन : इक्कीसवीं शताब्दी की सबसे बड़ी चुनौती

सोनी कुमारी
छटाई सहायक
आरएमएस बिलासपुर

सत्य तो यही है कि पृथ्वी एक मात्र ऐसा ग्रह है, जहाँ जीवन संभव है। यह सम्भावना देन है, पृथ्वी के पर्यावरण (हमारे चारों ओर की भौतिक और अभौतिक परिस्थितियां) और जलवायु (किसी क्षेत्र विशेष के औसत मौसम से सम्बन्ध रखता है) की।

पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ता जा रहा है और मौसम के नमूने में भी दीर्घकालीन परिवर्तन हो गया है जिससे प्रकृति नष्ट हो रही है यही जलवायु परिवर्तन है। यह आज का सबसे ज्वलंत और वैश्विक स्तर का मुद्दा है।

"जलवायु परिवर्तन प्रदूषक सूचकांक 2024" के अनुसार भारत सातवें स्थान पर आ गया है। ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन तथा ऊर्जा उपयोग में क्रमशः नवें और दसवें स्थान पर है।

हम दिन दुगुनी–रात चौगुनी गति से आर्थिक, सामाजिक और तकनीकी उन्नति कर रहे हैं परन्तु किस कीमत पर? जलवायु परिवर्तन और प्रदूषण। विकास आवश्यक है, लेकिन लाभार्थी का जीवन अधिक महत्वपूर्ण है। हमारी लालच ने प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन कर पर्यावरण को असंतुलित कर दिया है, जीवनदायिनी अब प्राण घातक हो गयी है। इन सबकी जिम्मेदार एक ही प्रजाति है– तथा कथित सर्वश्रेष्ठ अवाम सर्वाधिक विकसित प्राणी 'मानव'।

कुछ निम्नलिखित कारक हैं–

जनसंख्या वृद्धि

भारत अब सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश बन गया है परन्तु संसाधन तो सीमित हैं। इससे पृथ्वी पर बहुत भार पड़ रहा है तथा असंतुलन बढ़ रहा है। संसाधन उत्पत्ति का चक्र टूट गया है क्योंकि दोहन में तेजी आ गयी है।

#वैश्विक गर्मी

जीवाश्म इंधनों के जलने से उत्सर्जित ग्रीन हाउस गैसों से ग्लेशियर पिघल रहे हैं और जल स्तर बढ़ने से द्वीप और तटीय क्षेत्र समुद्र में विलीन होने की कगार पर हैं।

अनुमानित है कि वर्ष 2050 तक भारत की लगभग 1500 वर्ग किलोमीटर भूमि का ह्रास हो सकता है।

वनोन्मूलन तथा वायु प्रदूषण

हमने जंगलों का विनाश कर दिया उद्योग के लिए, तकनीकी तरक्की, जीवन सुविधापूर्ण बनाने तथा मनोरंजन के नाम पर पर्यावरण को नजर–अंदाज किया, अब स्वच्छ हवा से वंचित हैं।

'वर्स्ट एयर क्वालिटी इंडेक्स' में भारत तीसरे स्थान पर है।

'केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड' द्वारा 01 जनवरी, 2024 को जारी 'वायु गुणवत्ता सूचकांक' के अनुसार भारत के केवल 8 शहरों की हवा साफ है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव :

कृषि तथा फसल

बढ़ते तापमान से वर्षा–जल दर, भौम–जल स्तर, बाढ़ एवं सूखा की समस्याएं आती हैं। इन सभी कारकों का सीधा असर कृषि तथा फसल पैदावार पर दिखाई देता है। पैदावार कम होने से अकाल एवं भुखमरी जैसी समस्या जनहित को प्रभावित करती है।

सामूहिक विलुप्तीकरण

पर्यावरण असंतुलन से कई प्रजातियां विलुप्त हो चुकी हैं तथा कई विलुप्ति के कगार पर हैं। कई पारिस्थितिकीय तंत्र नष्ट हो गये। इससे असंतुलन और बढ़ रहा है चूँकि सबका अपना योगदान होता है।

जंगल की आग

तापमान के अधिक बढ़ने से जंगल सूखने लगते हैं तथा सूखी लकड़ियों के घर्षण से या बिजली गिरने से कई बार पूरा जंगल आग की लपेट में झुलस जाता है। वनों के नाश के साथ ही कार्बन उत्सर्जन और वायु प्रदूषण का कारण बनता है।

मरुस्थलीकरण

जलवायु परिवर्तन से मिट्टी रेत में बदलती जा रही है। वनों का विनाश, वर्षा की कमी तथा अत्यधिक रसायनों के उपयोग से मरुस्थलीकरण हो रहा है।

प्राकृतिक आपदाएँ

कठोर मौसम स्थितियां, बाढ़, सूखा, भूकंप, भूस्खलन, चक्रवात, सुनामी, ज्वालामुखी गतिविधियां, बिजली गिरना, हिमस्खलन, बादल फटने जैसी विपदा से समस्त विश्व को कठिनाई का सामना करना पड़ता है तथा कितने ही जीवन का विनाश हो जाता है। हमारी कई सालों की तरक्की क्षण भर में नष्ट हो जाती है।

पेय जल संकट

जल को अमृत तथा जीवन की संज्ञा दी जाती है। जल प्रदूषण से लगभग 70% जल होने के बावजूद पेय जल सबके लिए उपलब्ध नहीं है। यह संकट गंभीर है, जल्द ही पानी का मूल्य आसमान छुएगा।

भारत सरकार द्वारा की गई पहल

- जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना
- उन्नत ऊर्जा दक्षता, सतत आवास, हरित भारत, सतत कृषि, हिमालयी पारिस्थितिकीय तंत्र को सुरक्षित रखने के लिए राष्ट्रीय मिशन
- राष्ट्रीय सौर मिशन
- पंचामृत लक्ष्य
- हरित ऊर्जा को बढ़ावा देना
- जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय अनुकूलन कोष
- परिवेश पोर्टल – पर्यावरण सम्बन्धी अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्ति प्रक्रिया में पारदर्शिता

भविष्य सुधार की दिशा

- जनसंख्या नियंत्रण

  सरकार कई जरूरी कदम इस क्षेत्र में ले चुकी है, जैसे लोगों को जागरूक करने के लिए 'हम दो–हमारे दो', गर्भ–निरोधक, नसबंदी, 'दो से अधिक शिशु होने पर सरकारी सुविधाओं से वंचित करना' इत्यादि। दत्तक ग्रहण भी एक अच्छा विकल्प है।
- संसाधनों का सतत उपयोग
- नवीकरनीय ऊर्जा तथा हरित ऊर्जा का प्रयोग
- वृक्षारोपण
- प्रदूषण नियंत्रण
- समुद्री शैवाल की खेती

  समुद्री शैवाल बढ़ने के दौरान कार्बन अवशोषित करते हैं जिससे वायु स्वच्छ होती है।
- इलेक्ट्रिक वाहनों का उपयोग तथा सार्वजनिक परिवहन की उच्चतम उपलब्धता
- उद्योगपतियों पर उनके द्वारा उत्सर्जित कार्बन और रासायनिक अपशिष्ट अनुसार कर लगाना
- कृत्रिम होशियारी (ए आई) की मदद से कई मददगार समाधान निकाले जा सकते हैं।

- विज्ञान का विचारशील एवं सार्थक उपयोग
- जलवायु लचीली फसलों में अनुसंधान जिससे खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित हो।
- वैश्विक सह–भागिता
- विकसित राष्ट्रों को आगे बढ़कर तकनीकी तथा आर्थिक सहायता देने की आवश्यकता है।

सभी को मानवता दिखाने की आवश्यकता है, अन्यथा प्रकृति स्वयं ही खुद को संतुलित करेगी परन्तु वो संहारकारी होगा। हम कितनी भी तरक्की कर लें पर क्या दूसरी पृथ्वी बना सकते हैं? कम–से–कम जब तक नहीं बना लेते हमें हमारी सम्पदा को संजोकर रखना है तथा आने वाली पीढ़ियों को जिम्मेदारी के साथ सुरक्षित सौंपना है। यह लक्ष्य वसुधैव कुटुम्बकम् को चरितार्थ करके ही संभव है।

बचाओ मिट्टी, जल, वायु और जीवन,

आओ मिलकर खत्म करें प्रदूषण।

पृथ्वी पर तभी बचेगा जीवन,

जब जलवायु परिवर्तन का होगा शमन ।।

*****

प्रदूषण का बढ़ता प्रभाव

स्मृति पंवार (पीएचडी शोधार्थी)
आनुवंशिकी और वृक्ष सुधार प्रभाग
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून।

धरती माँ की पुत्री हेतु,
प्रकृति पूछे बस एक सवाल, कौन है धरती मां का गुनेहगार?

ईश्वर ने दिया खुला नील गगन,
जिसमें बसते इंद्रधनुष के सातों रंग;
जिसमें भरते पक्षी खुली, ऊंची उड़ान,
किंतु हे मनुष्य तूने भर दिया आसमान;
कारखानों के धुएँ से, ईंधन को जलाने से, कचरे के अनियोजित दहन से,
तूने किया पशु, पक्षी और खुद का भी जीना दुश्वार,
प्रकृति पूछे बस एक सवाल, कौन है धरती मां का गुनेहगार?

धरती मां के सीने को चीरकर कलरव करती इठलाती नदियां,
विभिन्न सभ्यताओं को जोड़ने वाली कड़ियाँ;
हर आबादी की प्यास बुझाती,
जिंदगी जीने का पाठ सिखलाती;
करोड़ों जलीय जीव जंतुओं का घर,
जिनका कर दिया मनुष्य तूने जीना दूभर;
कारखानों के प्रदूषित पानी से, खुले नालों की गंदगी से, प्लास्टिक के प्रदूषण से,
तूने किया पशु, पक्षी और खुद का भी जीना दुश्वार,
प्रकृति पूछे बस एक सवाल, कौन है धरती मां का गुनेहगार?

धरती माँ के कोख से जन्मे वृक्ष, पौधे और वनस्पतियाँ,
शुद्ध हवा का प्रसार करते, खाद्य आपूर्ति पूरी करते – जंगल, खेत और खलिहान;
असाधारण जैव विविधता से परिपूर्ण, ये घर कर दिया मनुष्य तूने अपूर्ण,

वनोन्मूलन, वनाग्नि, प्राकृतवास नुकसान तथा विखंडन से;
तूने किया पशु, पक्षी और खुद का भी जीना दुश्वार,
प्रकृति पूछे बस एक सवाल, कौन है धरती मां का गुनेहगार?
वाहनों के शोर ने दबा दिये पक्षियों के मधुर गीत,
कीटनाशकों के अनियंत्रित उपयोग ने खत्म कर दिये जमीन के जरूरी कीट;
प्रकाश प्रदूषण ने छिपा दिये सितारों के ज्योतिर्मय,
पक्षी भी भूल गए अपने पैतृक प्रवासी गंतव्य,
प्लास्टिक ने बदरंग किये प्रकृति के विहंगम परिदृश्य;
माइक्रोप्लास्टिक भी खाद्य श्रृंखला में कर गया प्रवेश,
शहरीकरण और औद्योगिकीकरण ने नष्ट किये नदी, हवा, जंगल, पहाड़ और परिवेश;
तूने किया पशु, पक्षी और खुद का भी जीना दुश्वार,
प्रकृति पूछे बस एक सवाल, कौन है धरती मां का गुनेहगार?

*****

संदेसे आते हैं....

गिरिजा अरोड़ा
सहायक निदेशक,
भारतीय वन सर्वेक्षण

मन्नू के मन में वही बातें घूम रही थी, जो वो सुबह अपने घर पर फोन करते हुए सुनकर आया था। उसने सुबह आठ बजे घर पर फोन किया था, जैसा वो अक्सर करता था। उसने माँ, बीवी, बच्चों, सबसे बात करी थी। वह खुश था। घर से आए उसे तीन महीने हो गए थे।

उसके सेवा प्रदाता ने उसे सर्वेक्षण विभाग के क्षेत्रीय कार्यालय में ड्राइवर का काम दिया था। यहाँ काम करते हुए उसे दस साल हो गए थे। उसे सर्वेक्षण दलों के साथ दूर–दराज के इलाकों में गाड़ी लेकर जाना होता था। उसका काम चुनौतीपूर्ण था। उसे गर्व होता था जब वह दुर्गम रास्तों पर सर्वेक्षण टीम को सफलतापूर्वक ले जाता और ले आता। जो भी टीम उसके साथ जाती, वह उससे संतुष्ट रहती और उसके साथ प्रसन्नता पूर्वक रहती। उसके ड्राइविंग का रिकार्ड एकदम बेदाग था और उसके व्यवहार की भी प्रशंसा उसके साथ जाने वाली टीम और अधिकारी करते नहीं थकते थे। सब कहते थे– मन्नू, जब तुम साथ होते हो तो हमें सफर का पता ही नहीं चलता, क्योंकि एक तो तुम्हारे साथ सुरक्षित महसूस करते हैं और दूसरा तुम्हारे गाड़ी चलाने के तरीके से यात्रा की थकान नहीं होती। उसकी भी यह सब सुनकर अपने काम के प्रति निष्ठा और बढ़ जाती थी और वह हर बार अपना मिशन सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए भगवान का धन्यवाद करता था। आखिर इतने लोगों की जान उसके हाथ की सफाई पर जो निर्भर होती थी। उसकी ड्राइवरी किसी कुशल कारीगर की कारीगरी से कम न थी।

बस मलाल यह रह जाता था कि इस कार्य के लिए उसे कई–कई महीने घर से दूर रहना पड़ता था। ऐसे में उसकी सहायक टेक्नोलॉजी ही थी। स्मार्ट फोन के एप्पस् के माध्यम से प्रतिदिन दो बार घर में बात हो जाती थी और सबकी शक्लें भी दिख जाती थी। इस आधुनिक उपकरण ने मीलों की दूरी घटा दी थी। वही खुशी उसे आज अपने घर बात करके फिर मिली थी। सबकी आवाजें उसके कान में घुल मिल रही थी मानों घर से उसके लिए संदेसे आ रहे थे।

आजकल वह सर्वेक्षण दलों के कार्य का निरीक्षण करने के लिए मुख्यालय से आए साहब के साथ गाड़ी चला रहा था। सर्वेक्षण दलों ने मिजोरम राज्य की राजधानी आईजोल और उसके आसपास के क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया था, जिसके निरीक्षण करने के लिए मुख्यालय से साहब आए थे। आज इनके साथ छठा दिन था। जब से साहब को आईजोल एयरपोर्ट से लिया था तब से वह लगातार इनके साथ था। एयरपोर्ट से वह साहब को गेस्ट हाउस लाया था और प्रतिदिन फील्ड विजिट के लिए लेकर जाता था। आगे सर्वेक्षण दल की गाड़ी होती थी और पीछे साहब के साथ उसकी। सर्वेक्षण दल तो अलग–अलग दिन अलग होते थे। जहाँ तक गाड़ी जा सकती थी वह ले जाता था और उसके बाद वह और सर्वेक्षण दल का ड्राइवर रूक जाते थे, साहब और सर्वेक्षण दल के साथ कभी जंगल के भीतर, कभी खेत या शहर में चले जाते थे। उनको वहाँ काम करते दो से तीन घंटे लग जाते थे। तब तक दोनों ड्राईवर उनका इंतजार करते, आपस में बतियाते, यूट्यूब में विडियो देखते आदि। उसे ड्राइविंग संबंधित विडियो, गाड़ी रिपेयरिंग विडियो आदि देखना बहुत पसंद था। कोई अन्य क्षेत्र होता तो कोई न कोई व्यक्ति इनसे कई तरह के सवाल पूछने आ जाता लेकिन, मिजोरम एक शांत राज्य है, यहाँ के लोग बिल्कुल संतुष्ट, ईमानदार हैं और अपने काम से काम रखते हैं। यहाँ कोई व्यर्थ के सवाल पूछकर काम में विघ्न नहीं डालता। यहाँ किसी प्रकार का कोई खतरा भी नहीं है। यहाँ तक कि यहाँ के

जंगलों में भी किसी जानवर के कारण परेशानी का अनुभव नहीं हुआ था।

मिजोरम के ऊँचे–नीचे, धूल भरे रास्तों, पगडंडियों पर उसे गाड़ी चलाते देखकर ही एक दिन साहब ने कहा था– "मन्नू, जैसे एक मूर्तिकार तन्मयता से एक मूर्ति को आकार देता है वैसे ही तुम सड़क पर अपनी गाड़ी का रास्ता निकालते हो। तुम्हारी ड्राइवरी किसी कारीगरी से कम नहीं है।" यह सुनकर उसका सीना गर्व से चौड़ा हो गया था। साहब उससे उसके परिवार के बारे में भी पूछते रहते थे। जब साहब उसके साथ होते तब उसे कभी अपने पर्स पर हाथ लगाने की जरूरत नहीं पड़ी। खाना, पीना, चाय, पानी घूमना आदि सबका खर्चा साहब ही दे देते थे। वैसे वह कई साहब लोगों को घुमा चुका था और सबने उसका ऐसे ही ध्यान रखा था।

आज वह आईजोल से सरचिप जिले के थेनजोल क्षेत्र में जा रहे थे। उसके कान में उसके बच्चों के बोल– "पापा कब आओगे, हमें घुमाने कब ले जाओगे, मुझे अपनी नई किताबें लेनी है, मेरी पेंसिल टूट गई" जैसी बातें गूँज रही थीं। मानों उसे घर से बुलाने के संदेश आ रहे हों। उसके कान में बालीवुड की बॉर्डर फिल्म का गाना.... संदेसे आते हैं..... हमें तड़पाते हैं..... गूंज रहा था। बच्चों की आवाज गाने के बोल से मिल रही थी और उसकी मनोस्थिति खुशनुमा हो रही थी।

आईजोल से थेनजोल का सफर लगभग तीन घंटे का था और एक घंटे के करीब का समय बीत चुका था। उसकी नजर बलखाती हुई सड़क पर थी और साहब की बाहर के नजारों पर। उसके हाथ स्टेयरिंग और क्लच पर थे और साहब के कैमरे के बटन पर। बस दो दिन और, तीसरे दिन वह साहब को आईजोल एयरपोर्ट पर छोड़ेगा तब उसे क्षेत्रीय कार्यालय से पता चलेगा कि उसे किस स्टेशन पर जाना है।

उसके विचारों की तंद्रा उसके मोबाईल की घंटी से टूटी। इस समय किसका फोन है? उसने देखा कि फोन उसके क्षेत्रीय कार्यालय से था। अमूमन वह गाड़ी चलाते समय फोन नहीं उठाता था किन्तु क्षेत्रीय कार्यालय को देखते हुए वह रुक नहीं पाया। उसने फोन उठाया तो दूसरी तरफ से उसे आदेश मिला– "मन्नू तुम साहब को थेनजोल छोड़कर गुवाहाटी के लिए निकल जाओ। साहब थेनजोल के फील्ड दल की गाड़ी का इस्तेमाल कर लेंगे। साहब को आईजोल एयरपोर्ट भी वही गाड़ी छोड़ देगी।"

मन्नू एक ड्राइवर था और ड्राइवर होने के नाते उसे सवारी को मंजिल तक छोड़े बिना संतुष्टि नहीं मिलती थी। उसके अवचेतन मन में साहब की और उनके साथ उसकी मंजिल दो दिन बाद आईजोल एयरपोर्ट तक बन चुकी थी। यह बीच में उन्हें छोड़कर दूसरा रास्ता पकड़ना उसे रास नहीं आ रहा था। उसके चेहरे पर उदासी आ गई जो साहब ने पढ़ ली।

"क्या हुआ मन्नू?" उन्होंने पूछा।

क्षेत्रीय कार्यालय से फोन आया है कि मैं आपको थेनजोल छोड़कर गुवाहाटी के लिए निकल जाऊँ और आप थेनजोल के फील्ड दल की गाड़ी का इस्तेमाल कर लेंगे। परसों थेनजोल से आईजोल एयरपोर्ट भी आपको वही गाड़ी छोड़ देगी।

साहब की भी भावनाएं कुछ आहत हुई। पाँच दिन से मन्नू उनके साथ ही था। उनको छोटी से छोटी दूरी तक मन्नू लेकर गया था। मिजोरम में खाने की दिक्कत थी क्योंकि वहाँ हर प्रकार का मीट खाया जाता था और शाकाहार एक ऐसी परिकल्पना थी जो वहाँ के लोगों की समझ से बाहर थी। अतः मन्नू ने उन्हें उनकी पसंद का खाना तक बनाकर खिलाया था। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि उन्होंने भी इस सफर के गंतव्य अर्थात परसों आईजोल एयरपोर्ट तक मन्नू को अपना साथी मान ही लिया था। उन्होंने कहा–

"मन्नू, हमारी जिन्दगी भी फौजियों की तरह भावनाओं से परे है। उनकी जिन्दगी पर तो पिक्चरें बन जाती हैं और संदेसे आते हैं..... जैसे गानों से लोक भावनाएं जागृत हो जाती हैं, लेकिन हम गुमनाम योद्धा हैं। न हमारी ट्रेनिंग फौजियों की तरह होती है और न ही हमारे बारे में लोगों को पता होता है। फिर फौजियों का संचलन तो यूनिट के साथ होता है लेकिन हम अकेले ही यूनिट हैं...."

संदेसे आते हैं.....साहब बोल रहे थे और मन्नू के मस्तिष्क में यह खटक रहा था। "यहाँ से थेनजोल पहुँचकर गुवाहाटी जाने के लिए निकलने में मुझे कम से कम दो बज जाएंगे। गुवाहाटी मैं एक दिन में पहुँच नहीं पाऊँगा और पहले पड़ाव तक पहुँचने में भी मुझे रात हो जाएगी। अंधेरा होने पर मुझे सरकारी गाड़ी में अकेला देखकर पुलिस शक करेगी। इससे पहले भी पुलिस मुझे चोर समझकर पूछताछ कर चुकी है। हम सर्विस प्रोवाइडर के लोग हैं और हमारे पास कार्यालय का पहचान पत्र भी नहीं होता। अतः यह एक जोखिम का कार्य है।" मन्नू उदास मन से बोले जा रहा था।

"मन्नू तुम थेनजोल पहुँचकर मैडम से बात कर लेना और यह सब मैडम को बता देना।"

क्षेत्रीय कार्यालय का नेतृत्व आजकल एक मैडम कर रही थी। इतने बड़े अधिकारी से वह कैसे बात करेगा– मन्नू यही सोच रहा था कि उसके मोबाइल में एक नोटिफिकेशन चमका। उसने झट से देखा। क्षेत्रीय कार्यालय से ही मैसेज था कि मैडम कह रही हैं थेनजोल पहुँच कर मन्नू बात कर ले।

खैर एक बजे करीब वे लोग थेनजोल पहुँचे। वहाँ के सर्वेक्षण दल ने साहब का स्वागत किया। उन्होंने साहब के लिए खाना बनाया हुआ था। साहब ने खाना खाया और बाहर आकर दृश्य का आनंद लेने लगे। ऊपर से देखने पर थेनजोल में प्रत्येक बीस कदम पर एक चर्च दिख रहा था। खिली धूप होने से दृश्य बहुत ही सुन्दर दिख रहा था। उनका ध्यान मन्नू की तरफ गया। मन्नू दिख नहीं रहा था। वह आया– उन्होंने एक ओर से मन्नू को आते हुए देखा। उनके पास आते–आते मन्नू के फोन की घंटी बजी। मन्नू ने फोन उठाते ही कहा– "मेरी मैडम से बात हो गई है और उन्होंने कह दिया है कि परसों साहब को एयरपोर्ट छोडकर ही गुवाहाटी के लिए निकलना।" इतना कहते ही मन्नू ने फोन काट दिया और साहब की तरफ देखकर मुस्कराने लगा।

*****

प्रिंसेपिया यूटिलिस (भेकल) : एक महत्वपूर्ण जंगली खाद्य और औषधीय प्रजाति

डॉ स्वर्ण लता
वन संवर्धन एवं प्रबंधन प्रभाग
भा.वा.अ.शि.प–हिमालयन वन अनुसंधान संस्थान,
शिमला, हिमाचल प्रदेश

विश्व में जीनस प्रिंसेपिया की 4 प्रजातियां (प्रिंसेपिया स्कैंडेंस, प्रिंसेपिया यूनिफ्लोरा, प्रिंसेपिया साइनेंसिस और प्रिंसेपिया यूटिलिस) पायी जाती है परंतु भारत में प्रिंसेपिया यूटिलिस ही पायी जाती है। प्रिंसेपिया यूटिलिस एक पर्णपाती काँटेदार झाड़ीनुमा जंगली पौध प्रजाति है। यह रोसेसी कुल का सदस्य है। इसे आमतौर पर हिमालयन चेरी, भेकल, बेकुली, बेकोई, रोवारी और फेकरे के नाम से जाना जाता है। इसकी ऊंचाई लगभग 1–3 मीटर होती है तथा इसकी शाखाएँ भूरे हरे रंग की होती हैं। इसकी पत्तियां आयताकार, 3. 5–8 सेंटीमीटर लंबी तथा 5 मिलीमीटर डंठल के साथ होती है। इसके फूल सफेद रंग के 1 सेंटीमीटर व्यास के गुच्छों में होते हैं जो नवंबर–जनवरी के महीने में खिलते हैं। इसके फल मई–जून में पकते हैं, जो पकने पर बैंगनी–भूरे व काले–बैंगनी रंग के हो जाते हैं। इस पौधे में फल तीन साल बाद लगते हैं। इसके फल लोगों द्वारा खाए जाते हैं तथा इसकी पत्तियों, जड़ों, फलों एवं छाल का उपयोग बहुत सी बीमारियों के इलाज में भी किया जाता है। भोजन और दवा उपलब्ध कराने के अलावा, यह निर्माण सामग्री, ईंधन लकड़ी और चारा भी प्रदान करता है। इसके वितरण क्षेत्रों में यह ग्रामीणों के लिए पोषण का एक अतिरिक्त स्रोत है क्योंकि वे बीजों से प्राप्त खाद्य तेल को खाना पकाने में उपयोग करते हैं। इस प्रजाति में उच्च औषधीय गुणवत्ता होने के कारण चीनी और भारतीय लोक चिकित्सा में इस प्रजाति का उपयोग अनेक बीमारियों के इलाज के लिए किया जाता है। इस प्रजाति का वितरण मुख्य रूप से पश्चिमी पाकिस्तान, भारत, बांग्लादेश, ताइवान, मध्य एवं दक्षिणी चीन, पूर्वी मंगोलिया, रूस, मंचूरिया और कोरिया में है। भारत में यह प्रजाति मुख्य रूप से हिमालयी क्षेत्रों में उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, मेघालय एवं सिक्किम में समुद्र तल से 1600–2500 मीटर की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पायी जाती है।

यह आमतौर पर वनों, बंजर भूमि एवं कृषि वानिकी भूमि उपयोग प्रणालियों में प्राकृतिक रूप में पायी जाती है जो बीजों के माध्यम से उगता है। यह अत्यन्त ठंड प्रतिरोधी प्रजातियां में से भी एक है। इस प्रजाति की जड़ों, पत्तियों, बीजों और फलों का उपयोग गठिया, सिर दर्द, खांसी, त्वचा रोग, दांत दर्द, बाल कूप का संक्रमण, हड्डियों की समस्या, रक्त प्रवाह के रुकने, उच्च रक्तचाप, धमनियों का मोटा व सख्त होना, जुकाम, त्वचा रोग, खुजली, गले की समस्या, शरीर में जलन एवं फ्रैक्चर के उपचार में किया जाता है। इसके बीजों से प्राप्त तेल का उपयोग हड्डियों एवं जोड़ों के दर्द, त्वचा रोग, पेट की बीमारियों, सिर दर्द, खांसी, सर्दी, याददाश्त में सुधार, गर्भावस्था के पेट दर्द, जलना, कटना और घाव के उपचार में किया जाता है। इसके फल खाए जाते हैं तथा इसके बीजों से खाद्य तेल भी प्राप्त होता है जिसे खाना पकाने में तथा औषधि के तौर पर विभिन्न बीमारियों के उपचार के लिए उपयोग किया जाता है। जून के महीने में एकत्रित किये गये फलों में तेल की मात्रा अधिक होती है। कभी–कभी इसके कच्चे तेल को मिर्च पाउडर एवं गेहूं एवं रागी की रोटी के साथ खाया जाता है। तेल को हल्का गर्म करने के उपरांत मुख्यतः छोटे बच्चों के शरीर की मालिश के लिए उपयोग किया जाता है। इसकी पत्तियों से चाय भी बनाई जाती है जिससे बढ़ी हुई प्रोस्टेट ग्रंथि एवं किडनी एवं मूत्राशय पथरी की समस्या ठीक होती है। इसकी कांटेदार प्रवृत्ति, प्रचुर शाखा प्रणाली और पानी की कमी वाले क्षेत्र में भी उगने की क्षमता के कारण इसे किसानों द्वारा खेतों को आवारा पशुओं से बचाने के लिए खेतों की फेन्सिंग के लिए उपयोग किया जाता है। इसका उपयोग सेब की ग्राफ्टिंग, बर्तन साफ करने, सौंदर्य प्रसाधन, औजारों के हैंडल, संगीत के उपकरण, खिलौने एवं अन्य घरेलू वस्तुओं को बनाने के लिए भी किया जाता है। यह दीमक प्रतिरोधी लकड़ी प्रदान करता है जिसे छोटे बीम, झोपड़ियाँ एवं बाड़ लगाने के काम में लाया जाता है। इसकी शाखाओं का उपयोग आग जलाने के लिए होता है तथा सर्दियों में इसकी पत्तियों को भेड़–बकरियों को चारे के तौर पर भी खिलाया जाता है।

इस पौधे को लोग पवित्र मानते हैं तथा लोग इसकी पत्तियों एवं शाखाओं का उपयोग देवी–देवताओं की पूजा के लिए करते हैं ताकि उनका जीवन खुशहाल रहे। यह सांस्कृतिक और धार्मिक कार्यों मुख्य तौर पर त्यौहारों, विवाह समारोह, जन्म–मरण संस्कारों एवं हवन इत्यादि अनुष्ठानों का महत्वपूर्ण अंग है। इस प्रजाति की जादुई धार्मिक शक्ति की मान्यता के कारण लोग घर के दरवाजे और खिड़की पर भेकल की कांटेदार शाखाओं को बांधकर रखते हैं ताकि वे बुरी शक्तियों, आत्माओं एवं नकारात्मक ऊर्जा को घरों में प्रवेश करने से रोक पाएँ। इसके अलावा मृत लोगों की आत्मा को उसके पूर्व घर से दूर रखने के लिए, इस पौधे की कांटेदार शाखाएं शव को दाह संस्कार के लिए ले जाते समय चौक पर रखी जाती हैं। प्रिंसेपिया यूटिलिस में जड़ प्रणाली घनी होती है जिस कारण यह मिट्टी को बांध कर व जकड़ कर रखती है जिस कारण यह ढलानदार क्षेत्रों में मिट्टी के कटाव को रोकता है तथा मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को भी बढ़ाता है। इसे नाजुक, बंजर भूमि एवं मानवजनित कारणों से प्रभावित भूमि की पुनः बहाली एवं भूमि कटाव के स्थिरीकरण के लिए उपयोग किया जा सकता है। वर्तमान में स्थानीय लोगों की जीवनशैली में भारी बदलाव तथा बाजार में आसानी से इसके वैकल्पिक स्रोतों की उपलब्धता के कारण इस प्रजाति के उपयोग में लगातार कमी आ रही है तथा कुछ क्षेत्रों में तो यह प्रजाति इतनी उपेक्षित हो गई है कि अब लोगों द्वारा केवल धार्मिक उद्देश्यों और अनुष्ठानों के लिए ही इसका उपयोग किया जाता है। आज से 4–5 दशक पूर्व प्रिंसेपिया यूटिलिस के अधिकांश वितरण क्षेत्रों में यह लोगों के सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न अंग था। इस प्रजाति में लोगों की आजीविका

सुधार और बंजर भूमि को उत्पादक बनाने की अपार संभावना है परंतु युवा पीढ़ी में जागरूकता की कमी और आधुनिकीकरण के कारण सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों से इस पौधे के उपयोग एवं इससे सम्बंधित पारंपरिक ज्ञान तेजी से लुप्त हो रहा है। इस प्रजाति में ग्रामीणों के पोषण, स्वास्थ्य और आय सुधार में अपार संभावना है क्योंकि यह खाद्य तेल का पोषक स्रोत होने के साथ औषधीय गुणों से पूर्ण है। इसलिए इस प्रजाति के प्राकृतिक संरक्षण के साथ इसकी खेती की तकनीकों के विकास की आवश्यकता है ताकि इसकी व्यावसायिक खेती हो और स्थानीय समुदायों की सामाजिक आर्थिक स्थिति में सुधार हो।

*****

जंगलों से बाजारों तक : जनजातीय आजीविका के लिए जंगली फलों का मूल्य संवर्धन

मनीष कुमार विजय,
वैज्ञानिक–बी
आईसीएफआरई–उष्ण कटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान,
जबलपुर (म.प्र.)
ई–मेलः manishvijay89@gmail.com, vijaym@icfre.org

परिचयः

दुनिया भर के हरे–भरे, जैव विविधता वाले जंगलों में, प्रकृति ने जंगली फलों का खजाना दिया है, जो न केवल पारिस्थितिकी तंत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, बल्कि आदिवासी समुदायों के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए भी अपार संभावनाएं रखते हैं। हालाँकि, हाल के दिनों में, वनों की कटाई, भूमि क्षरण और आर्थिक हाशिए पर जाने जैसे कारकों ने जंगलों और इन समुदायों की पारंपरिक जीवन शैली दोनों को खतरे में डाल दिया है। इन चुनौतियों के बीच, आदिवासी आजीविका के उत्थान के लिए जंगली फलों के मूल्य संवर्धन के रूप में आशा की एक किरण मौजूद है। स्थायी प्रथाओं, नवीन दृष्टिकोणों और सहयोगात्मक प्रयासों के माध्यम से, हम सामाजिक–आर्थिक विकास और संरक्षण के लिए उत्प्रेरक के रूप में जंगली फलों के मूल्य संवर्धन की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं।

जंगली फलों की क्षमताः

जंगली फलों की क्षमता विशाल और बहुआयामी है, जो उन्हें मानव जीवन और पारिस्थितिकी तंत्र संरक्षण के विभिन्न पहलुओं में मूल्यवान संपत्ति बनाती हैं।

1. **पोषण संबंधी समृद्धिः** जंगली फल आवश्यक विटामिन, खनिज और एंटीऑक्सिडेंट के भंडार हैं, जो उन्हें पोषण का अमूल्य स्रोत बनाते हैं। उनके विविध पोषक तत्व प्रोफाइल व्यक्तियों के समग्र कल्याण में योगदान करते हैं, संतुलित आहार के लिए महत्वपूर्ण तत्व प्रदान करते हैं और स्वास्थ्य और जीवन शक्ति को बढ़ावा देते हैं।
2. **औषधीय गुणः** कई जंगली फलों का उपयोग पारंपरिक रूप से उनके चिकित्सीय गुणों के लिए स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों में किया जाता रहा है।
3. **जैव विविधता संरक्षण** : जंगली फल अक्सर विशिष्ट पारिस्थितिकी तंत्र के लिए स्थानिक होते हैं, जो जैव विविधता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
4. **सांस्कृतिक महत्व** : जंगली फल स्वदेशी समुदायों के लिए गहरा सांस्कृतिक महत्व रखते हैं, जो पैतृक संबंधों, पारंपरिक ज्ञान और आध्यात्मिक मान्यताओं का प्रतीक हैं।
5. **आर्थिक अवसर** : अपने कम उपयोग के बावजूद, जंगली फलों में अपार आर्थिक संभावनाएं मौजूद हैं। उनके अद्वितीय स्वाद, बनावट और पोषण संबंधी गुण मूल्य संवर्धन और व्यावसायीकरण के अवसर प्रदान करते हैं।
6. **पर्यावरणीय स्थिरता** : जंगली फल प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र में पनपते हैं, उनकी खेती के लिए न्यूनतम मानवीय हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। इस प्रकार, वे पर्यावरण की दृष्टि से संधारणीय प्रथाओं को बढ़ावा देते हैं, जल संसाधनों का संरक्षण करते हैं और मिट्टी की उर्वरता को संरक्षित करते हैं।

संक्षेप में जंगली फलों की क्षमता मात्र पोषण मूल्य से कहीं अधिक है, जिसमें पारिस्थितिकी, सांस्कृतिक और आर्थिक महत्व के व्यापक आयाम शामिल हैं। इस क्षमता को पहचानना और उसका उपयोग करना न केवल मानव कल्याण और सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है, बल्कि हमारी निहित जैव विविधता और सांस्कृतिक विविधता की समृद्ध टेपेस्ट्री को संरक्षित करने के लिए भी आवश्यक है।

जनजातीय आजीविका को सशक्त बनाना : जंगलों से बाजारों तक की यात्रा जनजातीय समुदायों को जंगली फलों की सतत कटाई, प्रसंस्करण और विपणन के लिए सशक्त बनाने के साथ शुरू होती है। इस सशक्तिकरण में संधारणीय कटाई प्रथाओं, फसल के बाद की हैंडलिंग, मूल्य संवर्धन तकनीकों और उद्यमिता कौशल में प्रशिक्षण प्रदान करना शामिल है। उन्हें ज्ञान से सुसज्जित करके और संसाधनों के आधार पर, जनजातीय समुदाय आधुनिक बाजार की माँगों को अपनाते हुए अपने पारंपरिक ज्ञान का लाभ उठा सकते हैं।

मूल्य संवर्धन: जंगली फलों की विपणन क्षमता और आर्थिक मूल्य को बढ़ाने में मूल्य संवर्धन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सुखाने, रस निकालने, अचार और जैम जैसे सरल उत्पादों के माध्यम से, आदिवासी समुदाय विस्तारित बाजार पहुंच के साथ खराब होने वाले फलों को शेल्फ–स्थिर उत्पादों में बदल सकते हैं। जनजातीय उत्पादकों को संभावित खरीदारों और उपभोक्ताओं से जोड़ने के लिए बाजार संपर्क स्थापित करना आवश्यक है। इसमें स्थानीय बाजारों, सुपरमार्केट, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और विशेष दुकानों के माध्यम से जंगली फल उत्पादों को बेचने के लिए चैनल बनाना शामिल है। खुदरा विक्रेताओं, थोक विक्रेताओं और खाद्य प्रोसेसरों के साथ सहयोग, वितरण और बिक्री के नए अवसर खोल सकता है, जिससे आदिवासी समुदायों के लिए एक स्थिर आय सुनिश्चित हो सकती है। आर्थिक लाभ के लिए जंगली फलों का दोहन करते समय, जंगलों की पारिस्थितिकी अखंडता की रक्षा करने वाली संधारणीय प्रथाओं को अपनाना अनिवार्य है। आदिवासी समुदाय, प्रकृति से गहरे जुड़ाव के कारण, अक्सर अपने पर्यावरण के सर्वोत्तम प्रबंधक होते हैं। संधारणीय कटाई के तरीकों, वन संरक्षण पहल और जैव विविधता संरक्षण को बढ़ावा देकर, हम आजीविका में सुधार करते हुए जंगली फलों के पारिस्थितिकी तंत्र की दीर्घकालिक व्यवहार्यता सुनिश्चित कर सकते हैं। जनजातीय समुदायों द्वारा जंगली फलों के संधारणीय उपयोग के लिए एक सक्षम वातावरण बनाने के लिए सरकारों और अंतरराष्ट्रीय संगठनों से नीति समर्थन महत्वपूर्ण है। इसमें वन संसाधनों पर स्वदेशी अधिकारों को मान्यता देना और उनकी रक्षा करना, संधारणीय वन प्रबंधन के लिए प्रोत्साहन प्रदान करना और निष्पक्ष व्यापार प्रथाओं को बढ़ावा देना शामिल है।

जनजातीय आजीविका के लिए जंगली फलों के मूल्य संवर्धन में आईसीएफआरई–टीएफआरआई की एक पहल:

भारतीय वानिकी अनुसंधान और शिक्षा परिषद (आईसीएफआरई) – उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान (टीएफआरआई), जबलपुर ने वन–निर्भर समुदायों के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए जंगली फलों की क्षमता का दोहन करने के उद्देश्य से कई पहल शुरू की हैं। ऐसी ही एक पहल है जंगली फलों पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना, जिसे भारत सरकार के पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के तहत प्रतिकरात्मक वनीकरण निधि प्रबंधन और आयोजना प्राधिकरण द्वारा वित्त पोषित किया गया है। इस परियोजना के भीतर, हमारा ध्यान प्रमुख जंगली फलों की प्रजातियों से प्राप्त मूल्य वर्धित उत्पादों के व्यापक विकास पर केंद्रित है। विशेष रूप से हम अपने प्रयासों को सेमेकार्पस

एनाकार्डियम, फ्लैकोर्टिया इंडिका और वाइल्ड कैरिसा कैरंडास जैसी प्रजातियों पर केंद्रित कर रहे हैं, जो मध्य भारत में महत्वपूर्ण आर्थिक और पारिस्थितिकी मूल्य रखती हैं। अनुसंधान और प्रयोग के माध्यम से, हम इन जंगली फलों को विभिन्न प्रकार के मूल्य–वर्धित उत्पादों में बदलने के लिए प्रयास कर रहे हैं। इसके अलावा, हमारी पहल उत्पाद विकास से आगे बढ़कर इन महत्वपूर्ण जंगली फलों की प्रजातियों के लिए प्रसार और संरक्षण प्रोटोकॉल के विकास और प्रसार को शामिल करती है। प्रसार के लिए वैज्ञानिक रूप से सुदृढ़ प्रोटोकॉल स्थापित करके, हमारा लक्ष्य जंगली फलों की आबादी की स्थायी खेती और पुनःपूर्ति सुनिश्चित करना है, जिससे उनकी दीर्घकालिक व्यवहार्यता और पारिस्थितिकी महत्व की रक्षा हो सके। लक्षित कौशल विकास कार्यक्रमों और प्रशिक्षण पहलों के माध्यम से हम इन समुदायों को जंगली फल मूल्य श्रृंखला में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए आवश्यक ज्ञान, उपकरण और संसाधनों से लैस करना चाहते हैं। संधारणीय कटाई प्रथाओं, कटाई के बाद की हैंडलिंग और मूल्य संवर्धन तकनीकों जैसे क्षेत्रों में उनकी तकनीकी दक्षता को बढ़ाकर, हमारा लक्ष्य औपचारिक बाजारों में उनके एकीकरण को सुविधाजनक बनाना और उनकी आय–सृजन क्षमता को बढ़ाना है।

निष्कर्ष : जंगली फल, जिन्हें अक्सर मुख्यधारा के बाजारों में नजर–अंदाज कर दिया जाता है, जैव विविधता को संरक्षित करते हुए स्वदेशी जनजातियों के लिए आर्थिक सशक्तिकरण के अवसर प्रदान करते हैं। मूल्य संवर्धन तकनीकों और बाजार संपर्कों के माध्यम से, आदिवासी समुदाय जंगली फलों को लाभदायक उत्पादों में बदल सकते हैं। समुदायों और पारिस्थितिकी तंत्र दोनों के लिए लाभ सुनिश्चित करते हुए दीर्घकालिक व्यवहार्यता के लिए संधारणीय प्रथाएं और नीति समर्थन आवश्यक है। आईसीएफआरई–टीएफआरआई की पहल जंगली फलों की आर्थिक और पारिस्थितिक क्षमता को अनलॉक करने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदर्शित करती है, जो अंततः संधारणीय विकास और सांस्कृतिक संरक्षण में योगदान देती है।

*****

बदलता पर्यावरण

नैन्सी कुमारी
कार्यालय सहायक
डाक जीवन बीमा निदेशालय, चाणक्यपुरी
नई दिल्ली–110021

विषय की शुरुआत पर्यावरण संकट पर प्रकाश डालती शायर अंसार कंबारी की इन पंक्तियों से करते हैं :–

"धूप का जंगल नंगे पावों, इक बंजारा करता क्या?
रेत का दरिया रेत के झरने, प्यास का मारा करता क्या?
बादल बादल आग लगी थी, छाया तरसे छाया को,
पत्ता–पत्ता सूख चुका था, पेड़ बेचारा करता क्या?"

प्रकृति ने हम मनुष्यों को कितने अमूल्य उपहार दिए जैसे हर मौसम में रहने योग्य अनुकूल वातावरण, उर्वर धरती, अनगिनत स्वच्छ मीठे जल स्रोत, ऊर्जा स्रोत, स्वच्छ वायु इत्यादि। परंतु आधुनिकता और विकास की अंधी दौड़ में मानव मन की प्यास बुझने का नाम नहीं ले रही है।

सभ्यता के शुरुआत में पर्यावरणीय संसाधनों की मांग उनकी पूर्ति की अपेक्षा कम थी, अर्थात् हमारी दोहन क्षमता की दर इनके पुनर्सृजन क्षमता से कम थी। परंतु वर्तमान औद्योगिक क्रांति व जनसंख्या विस्फोट के परिणामस्वरुप पर्यावरण प्रदूषण की मात्रा प्रकृति की अवशोषण क्षमता को काफी पीछे छोड़ चुकी है जिससे गंभीर पर्यावरणीय समस्याएं, प्रदूषण, अम्ल वर्षा, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन इत्यादि के रुप में हमारे सामने खड़ी हैं। हमने प्रकृति के उपहारों का जो अंधाधुंध दोहन किया है उसकी एक संक्षिप्त झलक प्रस्तुत है :–

- 1750 में कार्बन–डाई–ऑक्साइड का स्तर 30% से अधिक बढ़ गया।
- पिछले 100 वर्षों में पृथ्वी का औसत तापमान 0.8C बढ़ा, जिसमें से 0.60C तो पिछले 3 दशकों में ही बढ़ा है।
- सालाना 4% की दर से ग्लेशियर पिघल रहे हैं।
- दुनिया भर के 20 सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में से 18 एशिया में हैं और इनमें से 13 तो सिर्फ भारत में हैं।
- दिल्ली जैसी जगहों पर प्रदूषित हवा का स्तर सामान्य सहन सीमा से 10 गुना तक ज्यादा है। प्रदूषण से प्रतिदिन 80 व्यक्तियों की मौत के आंकड़े केवल दिल्ली के हैं एवं लंदन जैसी जगहों पर 9500 मौतें प्रतिवर्ष हो रही हैं।
- गिद्ध और गौरैया जैसे पक्षी विलुप्तप्राय हो गए हैं। 10% से 12% पक्षियों की प्रजातियाँ खत्म होने के कगार पर हैं।
- भारत में हुई मौतों का दूसरा बड़ा कारण वायु प्रदूषण है।
- ब्रिटेन से प्रकाशित "द इकोलॉजिस्ट" जर्नल के अनुसार प्राकृतिक गैस की आपूर्ति अगले 35 वर्षों में समाप्त हो जाएगी और दुनिया के मौजूदा तेल भंडार 70 वर्षों में समाप्त हो जाएंगे।
- प्राकृतिक आपदाएँ यथा भूकंप, बाढ़, भूस्खलन, चक्रवात व सुनामी की खबरें आए दिन सुनने को मिलती हैं।

आधुनिक और सभ्यता की अंधी दौड़ एवं इससे उत्पन्न संभावनाओं को देखते हुए ही गांधीजी ने कहा था "प्रकृति हमारी जरूरतों को पूरा कर सकती है, लालच को नहीं।"

अब हम पर्यावरणीय समस्याओं से निपटने के लिए किए गए कुछ प्रयासों पर दृष्टिपात करेंगे–

- भारतीय वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 द्वारा नेशनल पार्क, बायोडायवर्सिटी पार्क एवं अन्य संरक्षण की विधियों द्वारा वन्य जीव प्राणियों के संरक्षण का प्रयास।
- चिपको आंदोलन इत्यादि द्वारा पौधारोपण को बढ़ावा देना।
- अधिक सिंचाई, खनन, पशुचारण इत्यादि द्वारा निम्नीकृत भूमि के समाधान के तहत वनरोपण, चारागाह प्रबंधन एवं खनन नियंत्रण को बढ़ावा देना।
- पर्वतीय ढालों पर सीढ़ीनुमा खेती एवं वैज्ञानिक फसल चक्र को बढ़ावा देकर मृदा अपरदन को रोकने के प्रयास करना।
- ड्रिप सिंचाई, उद्योग व घरों में पानी के पुनः उपयोग को बढ़ावा देकर जल संरक्षण उपाय करना।
- वर्ष 1992 का रियो–डी–जेनेरियो का पृथ्वी सम्मेलन में संधारणीय विकास की संकल्पना प्रस्तुत करना।
- भारत में पर्यावरण कानूनों को मजबूत करने के लिए अनु. 48(ए) और अनु. 51(जी) को शामिल करना।
- वर्ष 1987 की राष्ट्रीय जल नीति, 1987 द्वारा जल संसाधनों के इष्टतम उपयोग को नियंत्रित करना।
- राष्ट्रीय वन नीति, 1988 द्वारा पारिस्थितिकी, वन संतुलन के लिए आदिवासियों और वन निर्भर लोगों को अन्य स्थानीय आजीविका के अवसरों में शामिल करना।
- सीपीसीबी और एसपीसीबी के माध्यम से भारत में प्रदूषण उन्मूलन वक्तव्य 1992 का अनुपालन करना।
- राष्ट्रीय जल नीति, 2000 द्वारा वर्ष 2045 तक कुल प्रजनन दर प्रतिबंधित कर जनसंख्या स्थिरता प्राप्त करना।
- राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 द्वारा विकास प्रक्रिया में पर्यावरणीय विचार प्राप्त करना इत्यादि।

सरकार के इन सब प्रयासों के बावजूद जो सकारात्मक परिणाम हमें धरातल पर दिखने चाहिए वह अपेक्षाकृत काफी कम है। चिंता यह है कि हम पर्यावरण के मूल्य पर तथाकथित विकास चाहते हैं जिसका ही नतीजा है कि तमाम आधुनिक भौतिक विलासिताओं के बावजूद हम चिंतित व तनावग्रस्त हैं। मानसिक बीमारियाँ, अवसाद इत्यादि के कारण धैर्य की क्षमता कम होती जा रही है। आत्महत्या की दर बढ़ रही है। ध्वनि प्रदूषण व मोटर वाहनों के शोर के कारण हमें रात की नींद तक शांति से नसीब नहीं है। समय आ गया है कि हम लोग अब सचेत हो जाएं और अपने पर्यावरण की गंभीर समस्याओं को अपनी निजी समस्या की तरह लेकर कुछ कदम उठाएँ। समाधान के कुछ बिंदु नीचे सुझाए गए हैं : –

1. सुविधा भोगी वर्ग व तमाम तथाकथित अमीर अपनी कार छोड़कर यथासंभव पब्लिक ट्रांसपोर्ट का इस्तेमाल करें।
2. तमाम आयोजनों पर पटाखे फोड़कर जश्न मनाने की अपेक्षा ऐसे विकल्प अपनाएं जो ईको फ्रेंडली हों।
3. ई–वाहन का इस्तेमाल ज्यादा करना शुरू करें।
4. ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों जैसे पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा, बायोगैस इत्यादि के इस्तेमाल को बढ़ावा दें।

5. एक जागरूक नागरिक की तरह प्रयोग के बाद बिजली बन्द करें एवं विद्युत बचत करने के उपकरणों का इस्तेमाल करके ऊर्जा बचाव करें।

6. रासायनिक खाद के बजाए हरी तथा गोबर खाद के ज्यादा इस्तेमाल से मृदा प्रदूषण व मृदा अनुर्वता में कमी लाई जा सकती है।

7. प्लास्टिक के उपयोग पर सरकार के कितने भी कानून हों जब तक प्लास्टिक के दुष्प्रभावों को जानते हुए भी व्यक्तिगत रूप से हम सक्रिय नहीं होंगे तब तक ये नियम प्रभावी नहीं होंगे।

8. जैसे मानव अपने बच्चों का पालन—पोषण इत्यादि का ध्यान रखता है उसी तरह हरेक व्यक्ति पेड़ लगाए और उनका ध्यान अपने बच्चों की तरह रखे तो वह पर्यावरण संरक्षण में अपना अमूल्य योगदान दे सकेगा।

इस प्रकार प्रत्येक मानव यदि पर्यावरण में कुछ न कुछ स्वयं का योगदान देने के लिए प्रतिबद्ध हो जाए तो हम अपने पर्यावरण और आने वाली पीढ़ी को भयंकर त्रासदी से बचा सकते हैं।

*****

राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय

नाज रिज्वी, निदेशक
हरप्रीत कौर कालरा, वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी
राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय

राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय (रा.प्रा.वि.सं.), पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार का अधीनस्थ कार्यालय है। इस संग्रहालय को देश की प्राकृतिक धरोहर को प्रदर्शित करने और इसके प्रति जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से राष्ट्रीय स्तर के संस्थान के रूप में भारत की आजादी के रजत जयंती समारोह के दौरान स्थापित किया गया था।

पर्यावरण शिक्षा में संग्रहालय की भूमिका के महत्व पर जोर देते हुए संग्रहालय को विश्व पर्यावरण दिवस पर, 5 जून, 1978 को फिक्की भवन, बाराखंबा रोड, नई दिल्ली में आम जनता के लिए "प्राकृतिक विज्ञान" गैलरी के साथ खोला गया था।

देशभर में लोगों को पर्यावरण के प्रति जागरूक एवं शिक्षित करने के दायित्व को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय की गतिविधियों का विस्तार करने के उद्देश्य से देशभर में चरणबद्ध रूप में इसके क्षेत्रीय केंद्र स्थापित किए गए। वर्तमान में रा.प्रा.वि.सं. के चार क्षेत्रीय केंद्र हैं जो मैसूर, भोपाल, भुवनेश्वर और सवाई माधोपुर, राजस्थान में स्थित हैं। पाँचवे क्षेत्रीय केंद्र का निर्माण गंगटोक, सिक्किम में प्रक्रियाधीन है।

क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, मैसूर

क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, भोपाल

क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, भुवनेश्वर, ओड़िसा

राजीव गाँधी क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय,
सवाई माधोपुर, राजस्थान

राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, पर्यावरण शिक्षा को समर्पित संस्था है। देश की समृद्ध प्राकृतिक धरोहर और प्राकृतिक विज्ञान (भूविज्ञान, वनस्पति विज्ञान और प्राणी विज्ञान) को दर्शाने और उसके महत्व को उजागर करने के उद्देश्य से निर्मित विषयगत प्रदर्शनी गैलरियाँ, खोज कक्ष (डिस्कवरी रूम), गतिविधि कक्ष जैसे अनुभवात्मक संसाधन केंद्र और संस्थान द्वारा आम जनता तक पहुँचने के लिए आयोजित शैक्षिक गतिविधियाँ इसकी पहचान हैं।

रा.प्रा.वि.सं. वर्षभर बड़ी संख्या में शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन करता है। इन्हें व्याख्या, विस्तार, इन–हाउस (in-house) तथा आउटरीच (outreach) कार्यक्रमों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। व्याख्या कार्यक्रम ऐसी सेवा है जो संग्रहालय दीर्घाओं में प्रदान की जाती है। विस्तार कार्यक्रमों में ऐसी सेवाएँ शामिल हैं जो संग्रहालय के बाहर उन स्कूलों को प्रदान की जाती हैं, जो पहले कभी संग्रहालय आए हों। आउटरीच कार्यक्रमों में उन लोगों के लिए विशेष सेवाएँ शामिल हैं जो संग्रहालय नहीं आ सकते हैं। जो लोग आमतौर पर संग्रहालय नहीं आते, उनके लिए इन–हाउस कार्यक्रम की विशेष सेवा संग्रहालय में ही प्रदान की जाती है।

गर्मियों और सर्दियों की छुट्टियों के दौरान संग्रहालय बड़ी संख्या में इन–हाउज और आउटरीच कार्यक्रम तथा प्रकृति शिविर व प्रकृति अध्ययन यात्रा जैसे कई विशेष कार्यक्रम आयोजित करता है। कार्यक्रम में संग्रहालय अध्ययन, चर्चा सत्र, प्रकृति अन्वेषण, शहरी पर्यावरण में प्रदूषण की समस्या का अवलोकन और विश्लेषण, व्यक्तिगत परियोजना कार्य और भारत के राष्ट्रीय उद्यान या वन्यजीव अभयारण्य के पारिस्थितिकी तंत्र का अनुभव शामिल हैं।

दृष्टि, बोलने, सुनने, लोकोमोशन (चलने), मस्तिष्क आदि से संबंधित विशिष्ट क्षमताओं वाले बच्चों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए राप्राविसं बड़ी संख्या में शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन करता है। इनमें संग्रहालय गैलरियों के विशेष रूप से गाइडेड टूर तथा 'टच, फील ऐंड लर्न' कार्यक्रम, शामिल हैं। इन कार्यक्रमों में ऑडियो और ब्रेल सामग्री का उपयोग किया जाता है। विशेष प्रतियोगिताओं का आयोजन भी

किया जाता है। संग्रहालय अभिगम्यता कार्यक्रम के अंतर्गत, राप्राविसं विशिष्ट बच्चों की विशेष आवश्यकताओं के प्रति संग्रहालय कर्मचारियों को संवेदनशील बनाने के लिए, उनमें वृत्तिक क्षमता का निर्माण करने के उद्देश्य से कार्यशालाओं का आयोजन भी करता है।

पर्यावरण और प्रकृति से संबंधित विशेष दिवसों के महत्व को उजागर करने और जन–जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार की ऑनलाइन तथा ऑफलाइन प्रतियोगिताएँ, चर्चा सत्र, कार्यशालाएँ, बच्चों और युवाओं के लिए क्विज, भाषण प्रतियोगिताएं, मॉडल बनाने संबंधी प्रतियोगिता, निबंध लेखन, चित्रकारी तथा पोस्टर बनाने की प्रतियोगिता, नारा, कविता लेखन, क्ले मॉडलिंग, दौड़, रैलियाँ और नुक्कड़ नाटक आदि आयोजित किए जाते हैं।

राप्राविसं के प्रमुख दर्शकों में स्कूली शिक्षक भी शामिल हैं, जिनके लिए नियमित प्रशिक्षण कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। इस तरह की कार्यशालाओं का उद्देश्य शिक्षकों को संग्रहालय में उपलब्ध संसाधन सामग्री से परिचित कराना और संग्रहालय को संसाधन केंद्र के रूप में प्रयोग करना है जो कक्षाओं में पर्यावरण संबंधी शिक्षण में सहायक हो सकते हैं।

रा.प्रा.वि.सं. पर्यावरणीय विषयों पर साहित्य और समय–समय पर बच्चों और आगंतुकों के लिए लोकप्रिय वर्कशीट और वर्कबुक प्रकाशित करता है। प्रकाशित साहित्य में चुनिंदा प्रदर्शों पर तैयार "टेक–होम लीफलेट्स" और युवाओं के लिए प्रकृति अध्ययन परियोजना पैकेज शामिल हैं। स्कूलों और आगंतुकों के अनुरोध पर ये सेवाएं दी जाती हैं।

संग्रहालय के प्रत्येक क्षेत्रीय केंद्र पर संग्रहालय–वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों, विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं के लिए विशाल एवं समृद्ध; इंटरनेट सुविधा से लैस पुस्तकालय हैं।

सभी क्षेत्रीय केंद्रों में दिन में दो बार प्रकृति, वन्यजीव, पारिस्थितिकी, जीवविज्ञान आदि पर नियमित रूप से फिल्म दिखाई जाती है। समय–समय पर विशेष कार्यक्रम / कार्यशालाएं / सम्मेलन आयोजित किए जाते हैं।

पर्यावरण के विभिन्न विषयों के संबंध में जन जागरूकता बढ़ाने के लिए समय–समय पर प्रकृति और पर्यावरण विषयक कई अस्थायी प्रदर्शनियाँ लगाई जाती हैं।

पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यावरणीय विषयों पर जनता को जागरूक करने के लिए मोबाइल प्रदर्शनियाँ लगाई जाती हैं।

राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय तथा क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय (क्षेत्रीय केंद्र) देश की प्राकृतिक धरोहर को संरक्षित और प्रदर्शित करने के साथ–साथ पर्यावरण और प्रकृति संरक्षण जागरूकता को जन आंदोलन में तबदील करने की नवीन और चुनौतीपूर्ण भूमिका की परिकल्पना करते हैं।

*****

गंभीर रूप से संकटग्रस्त – गोडावण (ग्रेट इंडियन बस्टर्ड–GIB)

दत्तात्रेय बिमीषण शेरे
अनुसंधान अन्वेषक
आर.ओ.एच.क्यू. प्रभाग,
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

गोडावण (ग्रेट इंडियन बस्टर्ड) राजस्थान का राज्य पक्षी स्थलीय, शुष्क घास के मैदान में पाया जाता है। भारतीय महाद्वीप में यह पक्षी अधिकांश हिस्सों में पाया जाता था लेकिन हाल ही में इस पक्षी की आबादी भारतीय महाद्वीप के केवल 10 प्रतिशत क्षेत्र तक ही सीमित रह गई है। बस्टर्ड की भारत में चार प्रजातियां पाई जाती हैं। मैकक्विन बस्टर्ड, लेसर फ्लोरिकन, बंगाल फ्लोरिकन और ग्रेट इंडियन बस्टर्ड। 15 से 18 किलोग्राम वजन का यह पक्षी उड़ने वाले सबसे भारी पक्षियों में से एक है जो रहने के लिए घास के मैदान को अधिक पसंद करता है। कीड़े–मकोड़े, छिपकलियां, टिड्डे सरीसृप को अपना भोजन बनाता है लेकिन यह न मिलने पर घास को भी अपना भोजन बना लेता है। इस वजह से इसे अवसरवादी भक्षक भी कहा जाता है।

गोडावण (ग्रेट इंडियन बस्टर्ड)

नीचे दी गई तालिका के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इस पक्षी की संख्या तेजी से घट रही है। फरवरी, 2020 में गांधीनगर, भारत में आयोजित United Nations Convention on Conservation of Migratory Species of Wild Animals के 13वें सत्र में भारत ने सूचित किया कि भारत में ग्रेट इंडियन बस्टर्ड की आबादी घट रही है। भारत में केवल 150 ग्रेट इंडियन बस्टर्ड ही बचे हैं, जिसमें से राजस्थान में 128, गुजरात में 10 और बचे हुए पक्षी महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश में हैं। International Union for Conservation of Nature (IUCN) ने इस पक्षी को गंभीर रूप से संकटग्रस्त (Critically Endangered Species) श्रेणी में डाला है। भारत सरकार ने भी इस पक्षी को वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 की अनुसूची–I में सूचीबद्ध किया है।

वर्ष	संख्या
1969	1260
1978	745
2001	600
2006	300
2011	250
2018	150

बस्टर्ड को अनेक मानवनिर्मित खतरों का सामना करना पड़ रहा है। इसमें अवैध शिकार, विद्युत ट्रान्समिशन लाइन से टकरा जाना कृषि क्षेत्र में व्यापक विस्तार, मशीनीकृत खेती, खनन, औद्योगिकीकरण, आदि शामिल हैं। अन्य पक्षी और प्राणियों से बस्टर्ड के अंडे व चूजे की शिकार और वर्ष में सिर्फ एक या दो अंडे देना यह भी इस पक्षी के कम होने का प्राकृतिक कारण है। हाल ही में भारतीय वन्यजीव संस्थान (WII) के वैज्ञानिकों के अनुसार ग्रेट इंडियन बस्टर्ड के अंडे देने के व्यवहार में परिवर्तन देखा गया है। अब तक ये पक्षी वर्ष में एक अंडा देता था लेकिन अब इनमें दो अंडे देने की प्रवृत्ति देखी गई है।

मानवनिर्मित खतरों ने इस पक्षी के पारिस्थितिकीय तंत्र को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है। अधिकांश गोडावण जैसलमेर और पोखरण में पाए जाते हैं। राजस्थान और गुजरात में पवन चक्कियाँ ट्रान्समिशन लाईन जैसी आधारभूत संरचना को विकसित किया गया है। इस वजह से इस पक्षी को बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। भारतीय वन्यजीव संस्थान (WII) ने एक रिपोर्ट में बताया है कि राजस्थान में हर वर्ष 18 गोडावण की मृत्यु विद्युत ट्रान्समिशन लाईन से टकरा जाने से होती है। जैसलमेर राजस्थान ने वर्ष भर सूर्य प्रकाश मिलने के कारण यहां जगह–जगह सोलर पैनल्स और पवन चक्कियाँ स्थापित की हैं। इसके कारण बस्टर्ड का अधिवास कम हो गया है। इस पक्षी में आगे देखने की क्षमता (Frontal Vision) बहुत ही कम होती है। यह पक्षी ज्यादा दूरी से खतरों की पहचान न कर पाने से ट्रान्समिशन लाईन से टकरा जाता है। पास आने पर खतरा जान भी लें तो यह 15 से 18 किलोग्राम वजन का भारी पक्षी अपनी दिशा नहीं बदल पाता और ट्रान्समिशन लाईन से टकरा जाते हैं।

इस पक्षी को बचाने और उनकी संख्या बढ़ाने के लिए भारत सरकार ने 'प्रजाति पुर्नप्राप्ति कार्यक्रम' 2015 के तहत वन्यजीव पर्यावासों के एकीकृत विकास कार्यक्रम को शुरू किया गया है। इसी कार्यक्रम के हिस्से के तौर पर वर्ष 2019 में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, राजस्थान सरकार और भारतीय वन्यजीव संस्थान (WII) ने मिलकर राजस्थान के डेजर्ट नेशनल पार्क में प्रजनन संरक्षण केंद्र की शुरुआत की है ताकि ग्रेट इंडियन बस्टर्ड का प्रजनन, पालन–पोषण सुनिश्चित किया जा सके। जब बस्टर्ड बड़े हो जाते हैं तब उन्हें उनके नैसर्गिक अधिवास में छोड़ दिया जाता है।

इस पक्षी को बचाने और उनकी संख्या बढ़ाने के लिए पक्षी प्रेमियों ने राष्ट्रीय हरित अधिकरण और सुप्रीम कोर्ट के दरवाजे भी खटखटाए हैं। वर्ष 2021 में जब सुप्रीम कोर्ट में एक याचिका सुनवाई के लिए आयी तब सुप्रीम कोर्ट ने बस्टर्ड के संरक्षण के लिए उनके पर्यावासों में लो वोल्टेज बिजली लाईन्स को भूमिगत करने का आदेश दिया। राजस्थान और गुजरात में प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में हाई–वोल्टेज ट्रान्समिशन लाईन पर बर्ड डाइवर्टर लगाने का भी आदेश दिया गया है।

राजस्थान सरकार ने वर्ष 2013 में प्रोजेक्ट ग्रेट इंडियन बस्टर्ड भी शुरू किया है जिसका उद्देश्य बस्टर्ड के प्रजनन को बढ़ाना और उनके आवासों का संरक्षण एवं बुनियादी ढाँचे का विकास करना है। महाराष्ट्र सरकार ने भी इस प्रजाति (पक्षी) को बचाने और उनकी संख्या बढ़ाने के लिए अहमदनगर और सोलापुर जिलों में 8496 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को वर्ष 1979 में ग्रेट इंडियन बस्टर्ड नाम से अभयारण्य घोषित कर दिया है, लेकिन उनकी संख्या बढ़ने का नाम नहीं ले रही हैं।

*****

हिमाचल प्रदेश के मनाली वन्यजीव अभयारण्य पर पर्यावरणीय व मानवजनित प्रभाव

टविंकल ठाकुर और केसर चंद
गोविंद बल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान,
हिमाचल क्षेत्रीय केंद्र, मोहल,
कुल्लू–175 126 (हिमाचल प्रदेश)
ई–मेल : thakurtink09@gmail.com

पिछले कुछ दशकों में जलवायु परिवर्तन एक मुख्य चिंता का विषय बना हुआ है, बढ़ता जलवायु परिवर्तन पर्यावरण निम्नीकरण के विभिन्न कारकों को बढ़ावा दे रहा है तथा जैव–विविधता और मानव कल्याण दोनों के लिए विनाशकारी परिणामों के साथ नए खतरे उत्पन्न कर रहा है। ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, जल क्षरण, हैबिटैट लौस और जैव–विविधता संरक्षण इत्यादि पर्यावरणीय मुद्दे हैं जोकि प्राकृतिक संसाधनों को प्रभावित कर रहे हैं। हिमाचल प्रदेश अपनी प्राचीन प्राकृतिक सुंदरता और समृद्ध जैव–विविधता के लिए प्रसिद्ध है। हिमाचल प्रदेश भारतीय हिमालयी क्षेत्र का एक हिस्सा है तथा जैव–विविधता संरक्षण के लिए दुनिया में चयनित हॉट–स्पॉट में से एक है। हिमाचल प्रदेश अपने पूरे परिदृश्य में अत्यधिक विविध स्थलाकृति और जलवायु परिस्थितियों के लिए जाना जाता है। हिमाचल प्रदेश में राष्ट्रीय उद्यान, वन्यजीव अभयारण्य और बायोस्फीयर रिजर्व इत्यादि संरक्षित क्षेत्र उपस्थित हैं। हालाँकि, इन सुरक्षात्मक क्षेत्रों के बावजूद, पर्यावरणीय तथा मानवजनित चिंताएँ बनी हुई हैं, जो इन अभयारण्यों के भीतर नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र के लिए खतरा पैदा कर रही हैं। मनाली वन्यजीव अभयारण्य हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिले में स्थित है। यह हिमाचल प्रदेश राज्य में आधिकारिक तौर पर नामित 32 अभयारण्यों में से एक है।

मनाली वन्यजीव अभयारण्य पर जलवायु परिवर्तन और मानवजनित गतिविधियों का विभिन्न क्षेत्रों पर प्रभाव

1. जैव–विविधता

मनाली वन्यजीव अभयारण्य की जैव–विविधता पर जलवायु परिवर्तन तथा मानवजनित गतिविधियों के गहरे प्रभाव अंतर्दृष्टि हुए हैं जिनमें वनस्पति (औषधीय रूप से महत्वपूर्ण पौधे) और जीव की प्रजातियां अधिक ऊंचाई पर स्थानांतरित हो रही (83.89% स्थानीय लोगों द्वारा बोला गया) हैं तथा कुछ प्रजातियों का धीरे–धीरे पतन हो रहा है इसका मुख्य कारण स्थानीय लोगों द्वारा जलवायु परिवर्तन जैसे कि तापमान में वृद्धि, अनियमित वर्षा तथा बर्फबारी बताया गया है। प्रजातियों के स्थानांतरित होने के साथ–साथ मनाली वन्यजीव अभयारण्य में कुछ औषधीय रूप से महत्वपूर्ण प्रजातियां (डैक्टिलो राइजाहाटागिरिया, एकोनिटम हेटरोफिलम, अर्नेबियाबेंथामी, लिलियम पॉलीफाइलम, स्वर्टिया चिरायिता, पोडोफिलम हेक्सांड्रम, ज्यूरिनेलमैक्रोसेफला और टैक्सस बकाटा स्व प्रजाति वालिचियाना) अत्यधिक दोहन तथा व्यापार के कारण खतरे में पाई गई थीं। यह औषधीय प्रजातियाँ व्यापार के लिए अत्यधिक इकठ्ठा की जाती थीं। वर्तमान सर्वेक्षण के अनुसार, मानवजनित गतिविधियों से मनाली वन्यजीव अभयारण्य में जैव–विविधता को खतरा नहीं है, क्योंकि सरकारी

विभागों द्वारा सक्रिय उपाय, जैसे कि अभयारण्य से प्रजातियों का व्यापार के लिए अत्यधिक दोहन को रोकना, तथा मुख्य रूप से पारंपरिक चिकित्सक द्वारा इन औषधीय प्रजातियों को एकत्र करना इत्यादि को रोकने के उपाय से बचाया गया।

2. जलवायु परिवर्तन / आपदा प्रभाव

तापमान में वृद्धि, अनियमित वर्षा और बर्फबारी के स्वरूप में बदलाव से वनस्पतियों और जीवों के नाजुक संतुलन में बाधा आ रही है, जिससे कम ऊँचाई वाली प्रजातियां अधिक ऊंचाई पर स्थानांतरित हो रही हैं। आपदाएं जैसे, भूस्खलन (98.58% स्थानीय लोगों द्वारा बोला गया) और सूखे (79% स्थानीय लोगों द्वारा बोला गया) जैसी मौसमी घटनाएं बढ़ रही हैं, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र और स्थानीय समुदायों की आजीविका दोनों प्रभावित हो रही हैं। इसके अलावा अभयारण्य के भीतर अनियमित वर्षा होने के कारण कुछ स्थानों पर सोइल–एरोजनल (फोटो 1) गतिविधियाँ हो रही हैं।

3. जंगल की आग

सर्वेक्षण (100% स्थानीय लोगों द्वारा बोला गया) तथा वन विभाग के अनुसार मनाली वन्यजीव अभयारण्य में जंगल में आग लगने का कोई रिकार्ड उपलब्ध नहीं है। अभयारण्य में निरंतर धाराएं और नाले हैं, जिसके परिणामस्वरूप अभयारण्य में उच्च नमी बनी रहती है, इसलिए अभयारण्य के भीतर आग लगने की घटनाएँ नहीं हुई हैं।

मनाली वन्यजीव अभयारण्य में संसाधन उपयोग

1. संसाधन उपयोग

स्थानीय लोगों द्वारा मनाली वन्यजीव अभयारण्य के भीतर संसाधनों का उपयोग जैसे चारे, औषधीय, हस्तशिल्प, फल और ईंधन के रूप में किया जाता है, जिसमें से अत्यधिक (66.82%) स्थानीय लोगों द्वारा व्यक्तिगत उपयोग (चारा तथा गिरी हुई लकड़ियों का उपयोग ईंधन के लिए) के लिए किया जाता है। चारे के

फोटो 1. सोइल–एरोजनल गतिविधियाँ

फोटो 2. मनाली वन्यजीव अभयारण्य में संसाधनो का उपयोग

लिए वन विभाग द्वारा विशिष्ट क्षेत्रों का चयन किया गया है, जिनमें गलयानी, दोरनी, सेरी, लंबादुघ, खान्परी तथा अपर रूआर हैं। जबकि कुछ प्रतिशत (3.32%) लोग आय सृजन तथा व्यक्तिगत उपभोग के लिए करते हैं। 8.53% स्थानीय लोग व्यक्तिगत उपभोग, पारंपरिक औषधीय प्रयोजनों के साथ–साथ हस्तशिल्प और कारीगर उत्पादों के लिए करते हैं। मनाली वन्यजीव अभयारण्य से 68% स्थानीय लोगों द्वारा संसाधनों का उपयोग किया जाता है जबकि 25% द्वारा कभी भी नहीं किया जाता तथा 7% द्वारा कभी–कभी किया जाता है। किसी भी विकास गतिविधि के लिए जंगल के पेड़ों और क्षेत्र को काटा नहीं जाता है।

2. पर्यटन

मनाली वन्यजीव अभयारण्य में विभिन्न ट्रेक स्पॉट हैं, जैसे मनाली से बड़ा बंगाल (70 किमी), मनाली से सोलांग नाला (सेरी के माध्यम से 35 किमी), और मनाली से पतलीकुहल वाया खानपारी (25 किमी), मनाली से लांबाडुघ लोगहट से लांबाडुघ (10 किमी), लोगहट से लांबाडुघ (गोरुडुघ के रास्ते 10 किमी), लोगहट से गैलियानी (लांबाडुघ 14 किलोमीटर), लोगहट से नीलियाई (लांबाडुघ 28 किलोमीटर), खरमा से गुआमलांग (6 किलोमीटर), खरमा से अप्पररुअर (गुलामलांग के रास्ते 11 किलोमीटर), खरमा से पटौती (जलप्रपात, अप्पर रुआर के रास्ते 17 किलोमीटर), कुमसु थाच से अप्पर रुआर (पुरानी मनाली के माध्यम से 10 किलोमीटर), टिटिया से अप्पर रुआर (11 किलोमीटर)। ट्रैकिंग गतिविधियाँ वन विभाग द्वारा दिए गए उचित दिशानिर्देशों के साथ आयोजित की जाती हैं (ताकि कचरा और किसी भी प्रकार का प्रदूषण न फैले)। पीक सीजन में कुछ समय के लिए प्रतिदिन 40 से 50 व्यक्तियों के समूह को मनाली वन्यजीव अभयारण्य के भीतर ट्रैकिंग के लिए ले जाया जाता है। ट्रेकिंग से स्थानीय लोगों के लिए आजीविका के विभिन्न विकल्प मिल रहे हैं तथा स्थानीय लोगों और पर्यटन ऑपरेटर्स की आर्थिक स्थिति में भी वृद्धि हो रही है।

अपशिष्ट उत्पादन और प्रबंधन

मनाली वन्यजीव अभयारण्य के आस–पास के क्षेत्र में कचरे का संघटन अनेक पदार्थों जैसे प्लास्टिक, पेपर, कागज, धातु, तांबे, आर्गेनिक कचरा, टाइल्स, कपड़े, और कैरी बैग आदि हैं। अभयारण्य के अंदर और उसके आस–पास अधिक कचरे की कोई विशेष मात्रा नहीं देखी गई। हालांकि, कुछ होटेलियर्स और अनजान व्यक्तियों द्वारा अभयारण्य के सीमा क्षेत्र में कभी–कभी

कचरे का निस्तारण किया जाता है। एकीकृत प्रयासों के फलस्वरूप, मनाली वन्यजीव अभयारण्य क्षेत्र में कचरा प्रबंधन एक प्रमुख मुद्दा नहीं है। स्थानीय लोगों, सरकारी विभाग (वन विभाग) और कैम्पिंग ऑपरेटर्स और होटेलियर्स द्वारा मनाली वन्यजीव अभयारण्य के अंदर तथा आस–पास के क्षेत्र में कचरे का प्रबंधन किया जाता है। 60% स्थानीय लोग वन विभाग द्वारा आयोजित किए जाने वाले जागरूकता तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेते हैं। इसके अलावा, वन विभाग हर महीने अभयारण्य में अपशिष्ट संग्रह करता है।

निष्कर्ष

मनाली वन्यजीव अभयारण्य से स्थानीय लोगों द्वारा विभिन्न संसाधनों का सीमित व सतत उपयोग किया जा रहा है। वन विभाग द्वारा निरंतर कचरे की निगरानी और संग्रह का प्रयास, स्थानीय लोगों के साथ जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन, और पर्यावरण संरक्षण के लिए समुदाय के साथ मिलकर अभयारण्य के परिसर को स्वच्छ और संरक्षित रखा जा रहा है। परंतु जलवायु परिवर्तन से हो रही घटनाएं जैसे भूस्खलन, सूखा, अनियमित वर्षा से हो रहे सोयल एरोजन को कम करने की आवश्यकता है, जिससे वन्यजीव अभयारण्य में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम किया जा सके। सोयल एरोजन को रोकने के लिए भूमि उपयोग परिवर्तन, मिट्टी और जल संरक्षण तकनीकों तथा अपवाह को चौनल से दूर मोड़कर किया जा सकता है।

*****

प्रकृति का संतुलन

शिवाजी चरण पण्डा, सहायक,
पर्यावरण वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय,
क्षेत्रीय कार्यालय, भुवनेश्वर

प्रकृति, संतुलन में चलती है,
जंगल में बाघ बढ जाने से,
जंगल असंतुलित हो जाता है।
हिरन की संख्या घट जाती है,
खाने के अभाव से बाघ मर जाते हैं।
बाघ घट जाने से,
हिरन अपना वंश विस्तार कर जाते हैं।
हिरन बढ़ जाने से,
घास कम हो जाती है।
खाने के अभाव में,
हिरन भी घट जाते हैं।
ऐसे ही संतुलन की प्रक्रिया चलती रहती है।
पर इंसान को क्या...
अपनों को बढ़ाता है,
बचाता है,
कोशिश करता रहता है,
कैसे भी अपना कार्य हासिल हो जाए।
जंगल काटता है,
अपनी आबादी के लिए
पेड़ काटता है,
शहर बढ़ाने के लिए।
फसल उगाती जमीन को,
मकान के लिए इस्तेमाल करता है।
अपने सुख के लिए घर में शीतताप नियंत्रक (ए.सी.),
गाड़ी में शीतताप नियंत्रक (ए.सी.) का इस्तेमाल करता है।
अपने लिए सब कुछ कर जाता है।
संतुलन को नजर अन्दाज करता है,

जब प्रकृति प्रलय का तांडव शुरू करती है,
तब सोचता है यह क्यूँ हुआ है...
संतुलन तो प्रकृति का नियम है
जो भी तोड़ता है उसको उसकी सजा मिलती है।
अपनी सुविधा के लिए,
पॉलिथीन का इस्तेमाल करता है,
जो प्रदूषण का मुख्य कारण बन गया है,
इससे न केवल प्रदूषण होता है,
बल्कि यह जानलेवा भी होता है।
इंसान के साथ–साथ
जानवरों की जान भी लेता है।
अपनी सुख–शांति के लिए
इंसान सब कुछ कर जाता है।
प्रकृति को तोड़ता है,
बिखेर कर रख देता है।
जिस दिन प्रकृति असंतुलित होगी,
तोड़ना शुरु करेगी,
तब भूकम्प आएगा, सुनामी आएगी,
सूर्य की धूप से धरा जल जाएगी,
सागर डूबाएगा शहर को,
तब इंसान को समझ आएगा,
जब उसके हाथ में कुछ नहीं रहेगा,
धरा को बचाने के लिए।
इसलिए........
ऐ इंसान समय रहते हुए
सुधर जा.....
खुद जिएं और दूसरों को जीने दें,
अपनी जरूरत को
सीमित कर जा
समय रहते हुए,
ऐ इंसान तू सुधर जा।

*****

हिमाचल प्रदेशः पारिस्थितिकी तंत्र, स्थानीय संबंध, संरक्षण और विकास

सुमति राठौर एवं राकेश कुमार सिंह
जी.बी. पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान,
हिमाचल क्षेत्रीय केंद्र, मौहल–कुल्लू (175126) हिमाचल प्रदेश
ई–मेल : s002rathore@gmail.com

भूमिकाः

पारिस्थितिकी तंत्र एक प्राकृतिक इकाई है, जिसमें एक क्षेत्र के सभी जीवधारी, पौधे और अणुजीव शामिल हैं, जो अपने अजैव पर्यावरण के साथ मिलकर एक पूरी जैविक इकाई बनाते हैं। पारितंत्र इस प्रकार एक ही घर में रहने वाले अन्योन्याश्रित घटकों की एक इकाई है। भारत विश्व के सबसे विविध देशों में से एक है। यहां पहाड़, प्राकृतिक जंगल और कई अद्वितीय जीव हैं। भारत में सबसे सुंदर पर्वत श्रृंखलाओं में से एक है 'हिमालय'। हिमालय क्षेत्र जैव विविधिता से समृद्ध है। इसके पारिस्थितिकी तंत्र को बहुत कठिन और पृथ्वी पर सबसे विविध और जटिल माना जाता रहा है। कई किलोमीटर में फैला हुआ ये क्षेत्र अपने आप में कई प्रजातियां समेटे हुए है। हजारों छोटे–बड़े ग्लेशियर, बहुमूल्य जंगल, नदियां और झरनों इत्यादि से मिलकर बना यह क्षेत्र जैव विविधता का अनमोल भंडार है। इस खूबसूरत पर्वत श्रृंखला को देखने के लिए दुनिया भर से लोग आते हैं। लेकिन ग्लोबल वार्मिंग के कारण हिमालय क्षेत्र की जैव विविधता भी खतरे में है। पारिस्थितिकी सेवाओं में वन, भूमि, जल और वायु जैसे आवश्यक घटक शामिल हैं। हिमालयी क्षेत्र का पारिस्थितिकी तंत्र न केवल इसमें रहने वाले लोगों के लिए जरुरी है अपितु पूर्ण भारतीय क्षेत्र के जलवायु को नियंत्रण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन्हीं सब प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण ही हमारी अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करता है।

हिमाचल प्रदेश का हिमालय और स्थानीय संबंधः

हिमाचल प्रदेश, भारत के उत्तरी भाग में बसा, एक प्रसिद्ध राज्य है। हिमाचल का शाब्दिक अर्थ 'हिम आँचल' अर्थात बर्फ के आँचल में बसा क्षेत्र। राज्य का अधिकांश हिस्सा पर्वतीय है। यह पहाड़ी राज्य 55,673 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र घेरता है $30°22°$ से $33°12°$ उत्तर, $75°47$ से $79°4°$ पूर्व, और 200 मीटर से 7,000 मीटर की ऊंचाई तक फैला हुआ है। यहाँ पर रहने वाले विभिन्न स्थानीय समुदाय के लोग भी इस क्षेत्र की गरिमा को बनाये रखने में बेहद अहम भूमिका निभाते हैं। यहां के लोगों की आजीविका का मुख्य स्रोत कृषि और बागवानी है। हिमालय क्षेत्र के दूरस्थ गांवों में रहने वाले लोग आस–पास के वनों तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहते हैं। किसी भी समुदाय के सामाजिक और आर्थिक विकास को उस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति और वहां का पारिस्थितिकी तंत्र दर्शाता है।

महत्व :

सतत विकास जैसे लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक एकीकृत ढांचे की आवश्यकता है। जिसके अंतर्गत पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के साथ–साथ प्रत्येक व्यक्ति की भलाई और आजीविका का ध्यान भी रखा जाता है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, प्रकृति, नीति समाज, निर्णय और अनुकूली प्रबंधन इसमें महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। बहुत सी ऐसी वन्य सम्पदाएं हैं, जिनके बारे में हमें ज्ञान ही नहीं है और जो न ही कहीं लिखित रूप से

हैं। ऐसी प्रजातियों का संरक्षण और भी जरुरी हो जाता है, क्योंकि भविष्य में क्या पता कौन–सी जड़ी–बूटी अपने औषधीय गुणों के कारण बहुत अहम हो जाए। इस लिहाज से भी जैव विविधता को बचाने की बहुत जरूरत है। कोरोना वायरस की महामारी के बाद दुनियाभर में सभी वैज्ञानिकों, चिकित्सकों और अन्य लोगों ने प्रकृति में ही हर बीमारी का इलाज खोज लिया है। जैव विविधता से भरपूर हिमालय क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र को स्थिर बनाए रखने के लिए इसके मूल्य प्रवाह, अधिकांश नीतियों और कार्यक्रमों इत्यादि पर ध्यान देना अति आवश्यक है। किसी क्षेत्र के विभिन्न स्थानीय समुदाय भी उस क्षेत्र को मजबूत बनाने में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्राकृतिक खतरों के जोखिमों और उनके बुरे प्रभावों को कम करने में ये पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं मदद करती हैं।

चुनौतियां :

भौगोलिक तौर पर यह राज्य विभिन्न प्रकार के वनों, जल संसाधनों, जीवों और जंतुओं से परिपूर्ण है। व्यास, चिनाब, रावी, सतलुज और यमुना नदियों का उद्गम स्थान भी हिमाचल प्रदेश ही है। वर्तमान में मानवजनित गतिविधियों के कारण पारिस्थितिकी तंत्र पर दबाव पड़ रहा है। पर्वतीय राज्यों के नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र के कारण ही, औद्योगिकीकरण और अतिरिक्त प्राकृतिक संसाधनों का दोहन सीमित है। भारतीय वन अधिनियम के अनुसार, अत्यधिक दोहन देश और प्रदेशों भर में निषेध है। राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में नाना प्रकार की छोटी–बड़ी जल विद्युत परियोजनाएं खुल रही हैं, ये परियोजनाएं बहुत सारी आर्थिक गतिविधियों का समर्थन करती हैं। जैसे बाढ़ नियंत्रण, स्थानीय समुदाय जलाशयों में मत्स्य पालन, पर्यटन, व्यावसायिक सेवाएं, निर्माण, परिवहन, ऊर्जा प्रणालियां, जल प्रबंधन, पर्यटन और मनोरंजक गतिविधियां आदि सहित अतिरिक्त रोजगार पैदा करती हैं, परन्तु अत्यधिक मात्रा में, इन परियोजनाओं का किसी क्षेत्र में विस्तार वहां के परिवेश और उसकी तंत्र प्रणाली पर दवाब डालता है। जलीय जीवन पर प्रभाव डालने के साथ–साथ, नदी का प्राकृतिक प्रवाह भी अवरुद्ध करता है। ऐसी कई लघु और दीर्घ परियोजनाएं हैं जिनका स्थानीय पर्यावरण पर दुष्प्रभाव देखने को मिलता है जैसे भूमि कटाव, भूस्खलन और अवसादन। कृषि और बागवानी लगभग 62 प्रतिशत लोगों को प्रत्यक्ष रोजगार प्रदान करता है। हिमाचल की अलौकिक सुंदरता को देखने के लिए प्रतिवर्ष लोग आते हैं और बदलते दौर में देशी और विदेशी पर्यटकों की संख्या में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। राज्य की जीडीपी दर को बढ़ाने में कृषि और बागवानी के बाद अगर किसी क्षेत्र का अहम योगदान है तो वह 'पर्यटन' है।

चित्र 1 जल विद्युत परियोजना

चित्र 2 ठोस अपशिष्ट प्रदूषण

निष्कर्ष:

लोग परम्परागत कृषि को छोड़कर फलों की बागवानी और नगदी फसल की खेती की तरफ जा रहे हैं। जल विद्युत विकास और जल के प्राकृतिक स्रोतों की अनदेखी से इन जल संसाधनों का अस्तित्व भी खतरे में पड़ गया है। राज्य में पर्यटकों की बढ़ती संख्या से आमदनी में वृद्धि तो अवश्य हुई है परन्तु इसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों परिणाम सामने आ रहे हैं। ठोस अपशिष्ट समस्या का उत्पन्न होना और उसका उचित प्रबंधन न हो पाना हम सबके सामने है। कृषि तथा बागवानी के क्षेत्र में पैदावार को बढ़ाने के लिए किसान रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अधिक एवं असंतुलित मात्रा में प्रयोग करते हैं। ये रसायन मृदा और जल निकायों में रिसते हैं और पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। कृषि रसायनों के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से संपर्क में आने वाले किसानों तथा उनके परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य भी गंभीरता से प्रभावित होता है। मृदा की उर्वरता क्षीण होने के साथ अन्य पारिस्थितिकी सेवाओं को भी प्रभावित करता है। यह लेख कुछ प्रमुख विषयों का सारांश प्रस्तुत करता है यह दर्शाता है कि पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र में पर्यावरणीय परिवर्तन के लिए संरक्षित योजना और प्रबंधन में विचार किया जाना अति आवश्यक है।

*****

महाराष्ट्र की रॉबर्स गुफाः एक छिपा हुआ जैव खजाना

अपर्णा एस कलावटे एवं पूजा कुमार मिसाल
भारतीय प्राणी सर्वेक्षण, पश्चिमी क्षेत्रीय केंद्र,
विद्या नगर, सेक्टर–29, पी.सी.एन.टी. (पीओ), रावेत रोड,
अकुर्डी, पुणे, महाराष्ट्र 411044, भारत
शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर – 416 004, महाराष्ट्र, भारत

रॉबर्स गुफा एक जैविक खजाना है जो भारत के महाराष्ट्र के सतारा जिले के महाबलेश्वर के पास मालसूर गांव से 10 किमी दूर स्थित है। यह पश्चिमी घाट के जैव विविधता हॉटस्पॉट का एक हिस्सा है। इस क्षेत्र के जंगल आमतौर पर प्राकृतिक सुंदरता के साथ सदाबहार हैं और हर साल बड़ी संख्या में पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। स्थानीय भाषा में इस गुफा को "शीशिंगाल" के नाम से जाना जाता है। यह अद्वितीय कोयना वन्यजीव अभयारण्य का एक हिस्सा है। रॉबर्स गुफा को अपने आप में एक संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र कहा जाता है, जिसमें उड़ने वाले स्तनधारियों से लेकर कीड़े और कवक तक कई प्रजातियाँ निवास करती हैं। यह लेटराइट पठार की एक भूमिगत गुफा है जिसमें फर्श पर बहने वाली धारा पानी का स्रोत है। बरसात के मौसम में कभी–कभी गुफा में पानी भर जाने के कारण इसमें प्रवेश करना बहुत मुश्किल हो जाता है। यह लगभग 100 – 125 मीटर गहरी है। अंदर से यह नम और बदबूदार है क्योंकि इसमें फलों के चमगादड़ों, रूसेटस लेसचेनॉल्टी (Rousettus leschenaultia) और कीटभक्षी चमगादड़ों, मिनीओप्टेरस श्रेइबर्सि (Miniopterus schreibersii) की बड़ी मिश्रित कालोनियां रहती हैं। इसमें फर्श के ऊपर से बहने वाली धारा के रूप में एक बारहमासी जल स्रोत है।

जैसा कि पहले कहा गया है, यह एक अनोखा और संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र है, इस प्रकार, कुछ जीवों के लिए टाइप लोकेलिटी है। कुछ के नाम बताने के लिए: एक स्थानिक और संकटग्रस्त स्वैम्प ईल मोनोप्टेरस इंडिकस। कोयना वन्यजीव अभयारण्य के संरक्षित क्षेत्र में स्थित होने के कारण और महाबलेश्वर के निकट, जो एक पर्यावरण–संवेदनशील क्षेत्र है, जिसको वास्तव में, पर्यटकों और अन्य मानवजनित खतरों से सुरक्षा प्रदान करनी चाहिए। मालसूर गांव महाबलेश्वर से तपोला की ओर 10 किलोमीटर दूर है।

इस गुफा का धार्मिक महत्व है और इसकी पूजा "सती आसरा" (एक देवी) के रूप में की जाती है, लोग फूल, सिन्दूर, कांच की चूड़ियाँ, नारियल, साड़ी आदि बांस से बनी टोकरी में देवी को चढ़ाते हैं। कई बार देखा गया है कि लोग इन भेंट की चीजों को पैक करने के लिए पॉलिथीन बैग का इस्तेमाल करते हैं। प्रसाद लेने के बाद वे इन थैलियों और अन्य चढ़ावे की चीजों को गुफा में ही फेंक देते हैं जो जीव–जंतुओं और उनके सूक्ष्म आवास को नुकसान पहुंचा सकता है। प्रकाश क्षैतिज छिद्र से मुख्य गुफा गुहा तक और कुछ हद तक उपगुहा में भी प्रवेश करता है। क्षैतिज ओपेनिन्ग से गुफा मार्ग में लोहे की स्थिर सीढ़ियाँ लगाई गई हैं। यह एक लंबी एकान्त गुहा है और दो तरफ ऊपरी क्षैतिज से खुलती है, फिर आगे एक छोटी उपगुहा बनती है और एक पार्श्व ऊर्ध्वाधर ओपेनिन्ग के माध्यम से खुलती है।

आर्थ्रोपॉड जीव पारिस्थितिकी तंत्र का एक महत्वपूर्ण घटक है क्योंकि कई जानवर भोजन के लिए इन छोटे कीट जीवों पर निर्भर करते हैं। प्रकाश रहित इस अँधेरे वातावरण में प्रकाश व्यवस्था रहित वातावरण में प्राणी

स्वयं को ढाल लेते हैं। चूँकि गुफा में प्रकाश नहीं है, इसलिए प्रकाश संश्लेषण नहीं होता है। प्रकाश के स्थान पर ऊर्जा स्रोत के रूप में सल्फर का उपयोग करने वाले बैक्टीरिया की रिपोर्ट हैं (स्टीवर्ट, 2023)। गुफा में पर्याप्त मात्रा में मौजूद बैट गुआनो अपने आप में कई भूमिगत जीवों जैसे ट्रोगिड्स, कॉकरोच, घुन, वुडलाइस, स्प्रिंगटेल्स आदि के लिए एक सूक्ष्म आवास है। आम तौर पर, गुफा के जीवों को समय के आधार पर तीन रूपों में वर्गीकृत किया जाता हैं। उनके द्वारा गुफा में बिताया गया समयः 1. ट्रोग्लोहैंक्सेनः ग्रीक में ट्रोग्लोस का अर्थ है "गुफा", और जेनोस का अर्थ है "अतिथि" और वे आगंतुक हैं। वे शीतनिद्रा, घोंसला बनाने या बच्चे को जन्म देने के लिए गुफा में जाते हैं। ट्रोग्लोक्सिन का सबसे अच्छा उदाहरण चमगादड़ और पतंगे हैं। 2. ट्रोग्लोफाइल्सरू ट्रोग्लोस का अर्थ है "गुफा" और फिलियो का अर्थ है प्रेम। वे गुफा के बाहर जीवित रह सकते हैं लेकिन जीवित रहने के लिए गुफा को प्राथमिकता देते हैं। ट्रोग्लोफाइल के उदाहरण हैं: भृंग, मेंढक, सैलामैंडर, झींगुर और क्रेफिश। 3. ट्रोग्लोबाइटसः गुफा के लिए ट्रोग्लोस और जीवन के लिए बायोस। वे दिलचस्प प्राणी हैं जो अपना पूरा जीवन चक्र एक गुफा में बिताते हैं। वे गुफा के बाहर जीवित नहीं रह सकते। वे हैं गुफा की मछलियाँ, गुफा की क्रेफिश, झींगा, मिलीपेड, कुछ सैलामैंडर और कीड़े।

अपने संबंधित बायोटा के साथ, प्रत्येक गुफा प्रणाली अद्वितीय होने की क्षमता रखती है और इसे संरक्षित किया जाना चाहिए। बहरहाल, उपलब्ध सीमित संसाधनों को देखते हुए जैव विविधता के नुकसान को कम करने के लिए इनके संरक्षण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। भारत में, मेघालय की गुफाओं में पृष्ठवंशी जीवों पर बहुत काम किया गया है, विशेषकर चमगादड़ों और मछलियों पर काफी मात्रा में काम किया गया है। लेकिन, गुफा आर्थ्रोपोड जीवों पर बहुत कम या कोई काम नहीं किया गया है। जैसा कि हमने शुरूआत में देखा महाराष्ट्र में भी गुफाओं के पृष्ठवंशी जीवों पर काफी काम हुआ है लेकिन आर्थ्रोपोड्स पर नहीं। आर्थ्रोपॉड जीवों का दस्तावेजीकरण उस क्षेत्र की प्रजातियों और विविधता के संरक्षण के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है। जब तक इन गुफाओं की जैविक विविधता स्थापित नहीं हो जाती, तब तक संरक्षण प्रयासों को प्राथमिकता देना वास्तव में कठिन है।

रॉबर्स गुफा में फेंके चढ़ावे की चीजों का दृश्य

भोजन के रूप में कीटों का उपयोगः सतत उपयोग और प्रसंस्करण

ऋषि ऋचा, शबनम शौकत, देवांशु गुप्ता, रोहिताश्व कुमार और धृति बनर्जी
शेर–ए–कश्मीर कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय 190025, शालीमार, श्रीनगर, जम्मू और कश्मीर
जूलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, एम ब्लॉक, न्यू अलीपुर, 700053, कोलकाता, पश्चिम बंगाल
(संबंधित ई–मेलः devanshuguptagb4102@gmail.com)

परिचय

मानव आबादी अधिक होने के कारण भूख (क्षुधा) और कुपोषण एक गंभीर संकट है। बढ़ती मानव आबादी की पृष्ठभूमि के बीच भूख (क्षुधा) की भूमिका जटिल और बहुआयामी है। जैसे–जैसे वैश्विक आबादी बढ़ती जा रही है और 7.8 बिलियन को पार कर गई है, और 2050 तक 9 बिलियन से अधिक तक पहुंचने का अनुमान है, खाद्य प्रणालियों पर दबाव और अधिक हो गया है। भूख एक महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में बनी हुई है, जो गरीबी, असमानता, संघर्ष और पर्यावरणीय गिरावट जैसे कारकों से बढ़ गई है। कृषि उत्पादकता में प्रगति के बावजूद, लाखों लोग अभी भी कुपोषण और खाद्य असुरक्षा से पीड़ित हैं। जनसंख्या वृद्धि के परिप्रेक्ष्य, में भूख की समस्या का समाधान करने के लिए समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जिसमें संधारणीय कृषि, समान वितरण प्रणाली, गरीबी उन्मूलन रणनीतियों और नीतियों को शामिल किया जाता है जो सभी के लिए पौष्टिक भोजन तक पहुंच को बढ़ावा देती हैं। इसके अलावा, शिक्षा के माध्यम से जनसंख्या वृद्धि के मूल कारणों को संबोधित करना, परिवार नियोजन, संसाधनों तक पहुंच और महिलाओं को सशक्त बनाना आदि खाद्य संसाधनों पर दबाव को कम करने में योगदान कर सकते हैं। अंततः बढ़ती आबादी के सामने खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए भूख के अंतर्निहित चालकों से निपटने और सतत विकास को बढ़ावा देने हेतु स्थानीय, राष्ट्रीय और वैश्विक पैमानों पर समन्वित प्रयासों की आवश्यकता होती है।

बढ़ती वैश्विक आबादी और बढ़ती पर्यावरणीय चिंताओं के साथ, संधारणीय भोजन विकल्पों की आवश्यकता कभी भी अधिक दबाव वाली नहीं रही है। कीड़े अपने असाधारण पोषण प्रोफाइल के साथ एक समाधान प्रस्तुत करते हैं। इनमें उच्च प्रोटीन सामग्री, आवश्यक विटामिन और खनिज पाए जाते हैं। इसके अलावा, खाद्य बायोमास में फीड के उनके कुशल रूपांतरण के लिए पारंपरिक पशुधन की तुलना में न्यूनतम संसाधनों की आवश्यकता होती है, जिससे ये पर्यावरण के अनुकूल विकल्प बन गए हैं। जैसे–जैसे नवीन प्रौद्योगिकियां आगे बढ़ती जा रही हैं, कीटों की खेती और प्रसंस्करण अधिक सुव्यवस्थित और सुलभ होता जा रहा है, जिससे मुख्यधारा के आहार में उनके एकीकरण का मार्ग प्रशस्त हो रहा है। प्राथमिक खाद्य स्रोत के रूप में कीटों को अपनाना अधिक टिकाऊ और लचीली खाद्य प्रणालियों की ओर एक बदलाव का द्योतक है, जो खाद्य उत्पादन के पारिस्थितिक फुटप्रिंट को कम करते हुए भविष्य की खाद्य सुरक्षा चुनौतियों को संबोधित करने की दिशा में एक आशाजनक मार्ग प्रदान करता है।

भोजन के रूप में कीड़े, जिन्हें अक्सर एंटोमोफैगी कहा जाता है, दुनिया भर में एक स्थायी और पौष्टिक वैकल्पिक प्रोटीन स्रोत का प्रतिनिधित्व करते हैं। कीट

की खपत कई संस्कृतियों में एक लंबे समय से प्रथा रही है, जो इसकी पोषण समृद्धि और पर्यावरणीय लाभों में निहित है। कीड़े उच्च प्रोटीन सामग्री, स्वस्थ वसा, विटामिन और खनिजों से भरे हैं, जिससे वे कुपोषण और खाद्य सुरक्षा चुनौतियों की समस्या का समाधान करने के लिए एक व्यवहार्य विकल्प बन जाते हैं। इसके अलावा, कीटों को पारंपरिक पशुधन की तुलना में काफी कम भूमि, पानी और फीड की आवश्यकता होती है, जो कृषि से जुड़े पर्यावरणीय दबावों को कम करता है। वैश्विक आबादी और जलवायु परिवर्तन से खाद्य प्रणालियों को संकट है, ऐसे में आहार के रूप में कीटों को अपनाना एक अभिनव समाधान प्रस्तुत करता है जो संधारणीयता लक्ष्यों के साथ संरेखित है और एक विविध पाक परिदृश्य प्रदान करता है। चाहे भुना हो, आटे में पीसा हो या विभिन्न व्यंजनों में शामिल किया हो, कीड़े भविष्य के भोजन को फिर से आकार देने में अपार क्षमता रखते हैं।

एशिया में कुरकुरे क्रिकेट से लेकर दक्षिण अमेरिका में दिलकश तली हुई चींटियों तक, और यूरोप में अखरोट के कीटों से लेकर अफ्रीका में टैंगी कैटरपिलर तक, खाद्य कीड़े स्वाद, बनावट और पाक संभावनाओं का वैविध्यनतापूर्ण रूप प्रदान करते हैं। प्रत्येक संस्कृति के अपने अनूठे व्यंजन और इनको तैयार करने के अलग तरीके होते हैं, पारंपरिक व्यंजनों या अभिनव पाक कला में कीटों को शामिल किया जाता है। इसके अलावा, खाद्य कीटों की विशाल विविधता हमारे ग्रह की व्यापक जैविक विविधता को दर्शाती है, यह दर्शाती है कि विभिन्न प्रजातियां भोजन के स्थायी और पौष्टिक स्रोतों के रूप में कैसे काम कर सकती हैं।

खाद्य कीटों की विविधता

कीड़े सबसे प्रचुर मात्रा में और सबसे वैविध्यनतापूर्ण बहुकोशिकीय जीव हैं और माना जाता है कि ये विश्व की संपूर्ण प्रजातियों में इनका हिस्सा लगभग 80% है। यह अनुमान लगाया गया है कि कीटों की 2,111 से अधिक प्रजातियां हैं जिनका दुनिया भर के मनुष्यों द्वारा खाने के लिए उपयोग किया जाता है। हालांकि, यह संख्या संभावित रूप से बहुत अधिक हो सकती है, क्योंकि पृथ्वी पर लाखों कीट प्रजातियां हैं, जिनमें से कई का उनकी खाद्यता के लिए बड़े पैमाने पर अध्ययन नहीं किया गया है। विभिन्न संस्कृतियों की अपनी प्राथमिकताएं और परंपराएं होती हैं इसलिए विभिन्न क्षेत्रों में भोजन के लिए विभिन्न प्रकार की कीट प्रजातियों का उपयोग किया जाता है। वैश्विक स्तर पर खाद्य कीटों की विविधता आश्चर्यजनक है, जो दुनिया भर के विभिन्न क्षेत्रों की समृद्ध पाक परंपराओं और जैव विविधता को दर्शाती है। मेक्सिको, ब्राजील, घाना, थाईलैंड, चीन, नीदरलैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका, ऐसे कुछ देश हैं जो खाद्य कीटों का भोजन के रूप में उपयोग करते हैं। इसलिए, वैश्विक बाजार में इन कीटों के लिए संभावनाएं हैं। जैसे–जैसे एंटोमोफैगी में रुचि बढ़ती जा रही है, विभिन्न कीट प्रजातियों की खाद्यता और पोषण मूल्य में अनुसंधान बढ़ रहा है, जो मानव उपभोग के लिए उपयुक्त माने जाने वाले कीटों की सूची का विस्तार कर रहे हैं।

कई प्रमुख कीट प्रजातियों को दुनिया भर में आमतौर पर भोजन के रूप में शामिल किया जाता है। खाद्य कीटों को उबालकर, पकाकर, तलकर, भुनकर या टोस्टकर खाया जाता है। कुछ कीड़े जैसे कॉसस चींटियों, मधुमक्खियों, ततैया और सींगों के लार्वा और प्यूपा के साथ–साथ शहद, मधुमक्खी मोम का कच्चा सेवन किया जाता है। कोलॉप्टेरा, बीटल के क्रम में, खाद्य प्रजातियां जैसे पाम वीविल लार्वा और गैंडा बीटल शामिल हैं। ये कीड़े प्रोटीन से भरपूर होते हैं और विश्व स्तर पर विभिन्न व्यंजनों में उपयोग किए जाते हैं। एक अन्य महत्वपूर्ण प्रजाति ऑर्थोप्टेरा है, जिसमें टिड्डे, क्रिकेट और टिड्डियां शामिल हैं, जो अपने उच्च प्रोटीन तत्व के लिए मूल्यवान हैं और कई संस्कृतियों, खासकर अफ्रीका और एशिया, में मुख्य खाद्य पदार्थ हैं।

लेपिडोप्टेरा, तितलियों और पतंगों की श्रेणी, अफ्रीका में मोपेन कीड़े और एशिया में रेशमकीट प्यूपा जैसे खाद्य कैटरपिलर प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त, हाइमनोप्टेरा, जिसमें मधुमक्खियां, ततैया और चींटियां शामिल हैं, मधुमक्खियों, लार्वा और कुछ चींटियों की प्रजातियों जैसे खाद्य विकल्प प्रदान करती हैं। आइसोप्टेरा, दीमक की प्रजाति को विभिन्न क्षेत्रों, विशेष रूप से अफ्रीका और एशिया, में खाया जाता है, जहां वे प्रोटीन और वसा के समृद्ध स्रोत हैं। ये प्रमुख कीट सामूहिक रूप से दुनिया भर में कीट–आधारित आहार की पोषण विविधता और स्थिरता में योगदान करते हैं।

यह अनुमान लगाया गया है कि कीटों की 2,111 से अधिक प्रजातियां हैं जो दुनिया भर के मनुष्यों द्वारा खाई और उपभोग की जाती हैं, जिनमें कोलोप्टेरा (भृंग, अक्सर लार्वा) श्रेणी की 659 प्रजातियां शामिल हैं, लेपिडोप्टेरा (कैटरपिलर) श्रेणी की 362 प्रजातियां, हाइमनोप्टेरा (ततैया, मधुमक्खियां और चींटियां) श्रेणी की 321 प्रजातियां, ऑर्थोप्टेरा (क्रिकेट, टिड्डे और टिड्डियां) की 278 प्रजातियां, हेमिप्टेरा (सच्चे कीड़े) श्रेणी की 237 प्रजातियां, ओडोनाटा (ड्रैगनफलीज) श्रेणी की 61 प्रजातियाँ, आइसोप्टेरा (दीमक) की 59 प्रजातियाँ, डिप्टेरा (मक्खियों) (37) श्रेणी की 37 प्रजातियाँ और ब्लाटोडिया (तिलचट्टे) की 37 प्रजातियाँ शामिल हैं। भारत में, अधिकतम खपत वाले कीड़े कोलोप्टेरान (34%) ऑर्थोप्टेरा (24%), हेमिप्टेरा (17%) हैं इनके बाद हाइमनोप्टेरा (10%), ओडोनाटा (8%), लेपिडोप्टेरा (4%), आइसोप्टेरा (2%), और एफेमेरोप्टेरा (1%) आते हैं। कुछ खाद्य कीड़े या तो पूरी तरह से पालतू होते हैं (जैसे, एंथेरिया असमेंसिस, एपिस सेराना इंडिका और सामिया सिंथिया रिकिनी) या उनके प्राकृतिक आवास में अर्ध–पालतू होते हैं (जैसे, वेस्पा मंदारिनिया, वेस्पा सोरोर, वेस्पा ट्रोपिका ट्रोपिका और वेस्पुला ओरबाटा)। कीटों से प्राप्त प्रोटीन पशु प्रोटीन के विपरीत लागत प्रभावी होता है। इसका उच्च पोषण और औषधीय मूल्य है और यह कुपोषण को कम करने में मदद करता है। लेकिन भावनात्मक कारक के कारण इसकी उपभोक्ता स्वीकार्यता कम है। इसलिए, कुपोषण कम करने और उपभोक्ता स्वीकृति को बढ़ाने के लिए खाद्य कीटों के प्रसंस्करण और विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पादों को विकसित करने की आवश्यकता है। विभिन्न उच्च तापमान वाली प्रसंस्करण विधियां हैं जिनमें ब्लैंचिंग, पास्चुरीकरण, और वाणिज्यिक नसबंदी, निर्जलीकरण शामिल हैं कम तापमान प्रसंस्करण में प्रशीतन और कोल्डर तकनीक आते हैं।

खाद्य कीट विभिन्न प्रीप्रोसेसिंग चरणों से गुजरता है जिसमें सब्सट्रेट से अवशिष्टों का वर्गीकरण और पंख या पैर जैसे अनावश्यक भागों को हटाना और सफाई करना शामिल है। कीड़े वांछित अंतिम उत्पाद के आधार पर विभिन्न प्रकार के प्रसंस्करण प्रक्रिया से गुजरते हैं। औद्योगिक पैमाने पर भोजन के रूप में कीटों का उत्पादन करने के लिए नियोजित सामान्य तरीकों में ब्लैंचिंग, ड्राइंग, रोस्टिंग, फ्रीजिंग, किण्वन और मिलिंग शामिल हैं। वर्तमान में, अधिकांश प्रकाशित लेख कीट–आधारित भोजन (जैनी) के लिए कुशल प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों के रूप में स्प्रे ड्रायर और फ्रीज ड्रायर की सलाह देते हैं।

खाद्य कीटों का प्रसंस्करण

कीटों के पूर्व–प्रसंस्करण के बाद, अगला कदम खाने के लिए उन्हें पकाना है। कीटों को पकाना स्वाद बढ़ाने के अलावा, कीटों को सुरक्षित रूप से खाने और इनको पाचन योग्य बनाना सुनिश्चित करता है। हालांकि, इनमें शामिल पोषक तत्व पकाने से कम हो सकते हैं। परंपरागत रूप से, कीड़े खाना पकाने के सरल तरीकों जैसे उबालने, भूनने, तलने और स्टीमिंग जैसी प्रक्रिया से तैयार किए जाते हैं। वही खाद्य कीटों की ऑर्गेनोलेप्टिक विशेषताएं विभिन्न प्रजातियों में अलग–अलग होती हैं और पर्यावरण से प्रभावित होती हैं। उदाहरण के लिए, जलीय खाद्य कीड़े जैसे वॉटर बोटमेन (कोरिक्सिडे परिवार) और चिउरा लार्वा में

मछली का स्वाद होता है, जबकि डाइविंग बीटल का स्वाद बड़ी सीपों की तरह होता है।

पारंपरिक प्रौद्योगिकियां

कुछ पारंपरिक प्रौद्योगिकियां हैं जो या तो ड्राइंग, ब्लैंचिंग, हीटिंग, उच्च तापमान प्रसंस्करण जैसे (एचटीपी) जैसे और रेफ्रिजरेशन और फ्रीजिंग जैसे कम तापमान प्रसंस्करण (एलटीपी) का उपयोग करती हैं। ये दोनों प्रौद्योगिकियां कच्चे या प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादों के शेल्फ लाइफ को बढ़ाने में मदद करती हैं। यह सर्वविदित है कि नमी की मात्रा या पानी की मौजूदगी भोजन के शेल्फ लाइफ को तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

ब्लैंचिंग और ड्राइंग

खाद्य उत्पादों की स्थिरता और सुरक्षा नमी की मात्रा और पानी की मौजूदगी के स्तर पर अत्यधिक निर्भर है। पानी की अत्यकधिक मौजूदगी और नमी माइक्रोबियल विकास के जोखिम का कारण बनती है और रासायनिक और एंजाइमेटिक प्रतिक्रियाओं की दर को बढ़ाती है, जिससे उत्पाद के पोषण गुण प्रभावित होते हैं। प्राचीन काल से, खाद्य और कृषि उप–उत्पादों के संरक्षण के मुख्य उद्देश्य के साथ इनको सुखाने का कार्य किया जाता रहा है। खाद्य कीटों में, सुखाने की प्रक्रिया से माइक्रोबायोलॉजिकल गुणवत्ता बढ़ जाती है, बासी होने की आशंका कम हो जाती है, और अंतिम उत्पादों के रंग और बनावट में सुधार होता है। औद्योगिक क्षेत्र में, परिवहन और भंडारण के दौरान शेल्फ लाइफ बढ़ाने के लिए पूर्व प्रसंस्करण के बाद ड्राइंग की जाती है। परंपरागत रूप से, ब्लैंचिंग का उपयोग ड्राइंग से पहले कीटों के प्रसंस्करण के लिए किया जाता है। ब्लैंचिंग प्रसंस्करण और विलयनों के विभिन्न पीएच के उपयोग से एंजाइमैटिक ब्राउनिंग की प्रक्रिया को धीमा किया जा सकता है और यहां तक कि इसे रोका भी जा सकता है। इसके अलावा, ब्लैंचिंग प्रसंस्करण ने माइक्रोबायो–लॉजिकल मापदंडों को प्रभावित किया और खाद्य कीटों या ताजा लार्वा को कुल जीवाणु भार को कम करने में सक्षम बनाया।

शेल्फ लाइफ को बढ़ाने वाली प्रौद्योगिकियां

भोजन को –18°C तक या इससे कम तापमान पर फ्रीज करने से भोजन में मौजूद पानी हट जाता है, इस प्रकार भोजन के प्रकार के आधार पर इसकी शेल्फ–लाइफ महीनों या वर्षों तक बढ़ जाती है। इसके विपरीत, रेफ्रिजरेशन तापमान (4 से 6 डिग्री सेल्सियस) पर शेल्फ–लाइफ को केवल कुछ दिनों या कुछ हफ्ते के लिए ही बढ़ाया जा सकता है।

उत्पाद विकास

इन पारंपरिक और नवीन तकनीकों का उपयोग करके विभिन्न उत्पाद बनाए जा सकते हैं। कुछ उत्पादों का उपयोग निम्नानुसार नहीं किया जाता है :

बेक किया हुआ उत्पाद

कीट का आटा रोटी बनाने और पूरकता को प्रभावित कर सकता है। खाद्य कीटों का उपयोग उच्च प्रोटीन कच्चे माल के रूप में अनोखे बेक्ड आइटम (ब्रेड, केक और कुकीज) बनाने के लिए किया जाता है। यह पाया गया है कि बेक किए हुए उत्पादों में खाद्य कीट पाउडर जोड़ने से उनके प्रोटीन, आहार फाइबर, आवश्यक अमीनो एसिड और आवश्यक फैटी एसिड सामग्री में वृद्धि हो सकती है। बेकरी उत्पादों की उपभोक्ता स्वीकार्यता काफी हद तक उनकी पोषण सामग्री के अलावा रंग, मात्रा और बनावट सहित उनकी प्रमुख विशेषताओं से प्रभावित होती है। बेकिंग के दौरान रंग में बदलाव होने का कारण माइलार्ड प्रतिक्रिया है और क्रस्ट में रंग घटकों के विभिन्न स्तरों के होने में इसका योगदान होता है। दूसरी ओर, ब्रेड उत्पादन के दौरान ब्राउनिंग विविधताएं भी कच्चे माल के प्रारंभिक रंग से प्रभावित होती हैं। कीट के आटे का रंग गेहूं के आटे से

ज्यादा गहरा होता है। कीट के आटे का उपयोग करके तैयार की जाने वाली ब्रेड रेसिपी के उच्च प्रोटीन स्तर से भी माइलार्ड प्रतिक्रिया–प्रेरित ब्राउनिंग प्रभावित हो सकती है।

मांस उत्पाद

वाणिज्यिक खाद्य उत्पादों में, पशु मांस में कीट प्रोटीन हो सकते हैं। कीड़े और मांस उत्पादों में समान प्रोटीन, आवश्यक अमीनो एसिड और आवश्यक फैटी एसिड तत्व होते हैं, इससे यह स्पष्ट है कि कीड़े उन पोषक तत्वों को प्रदान कर सकते हैं जिनकी मनुष्यों को आवश्यकता होती है (तालेंस एट अल.)। पारंपरिक रूप से बनाए गए सॉसेज में प्रमुख तत्व मांस प्रोटीन हैं। विभिन्न प्रतिस्थापन स्तरों पर कीट प्रोटीन की मात्रा, सॉसेज के संरचनात्मक गुणों और जल स्थिरीकरण पर अनुकूल या नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। मांस उत्पादों में कीट घटकों का अनुपात प्रतिकूल लक्षणों के विकास को प्रभावित करता है।

डिब्बाबंद उत्पाद

कैनिंग खाद्य संरक्षण की एक विधि है, जिसमें भोजन को प्रसंस्कृत किया जाता है, गरम किया जाता है और एक एयरटाइट कंटेनर में किसी तापमान पर सील कर दिया जाता है जिससे ऐसे सूक्ष्मजीवी नष्ट हो जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए संकट हो सकते हैं या भोजन को खराब कर सकते हैं। यह ऐसे एंजाइमों को भी निष्क्रिय करता है जो भोजन को खराब कर सकते हैं। डिब्बाबंद वॉश और फेंदर्स जापान में बेचे जाते हैं, थाईलैंड में मोल क्रिकेट, पॉम वीविल्सप तथा कई और डिब्बाबंद खाद्य कीट उत्पाद बेचे जाते हैं।

डिब्बाबंद विभिन्न खाद्य कीड़े
(https://www.thailandunique.com/canned-edible-insects-bugs)

निष्कर्ष

भूख के कारण भविष्य की पीढ़ियों के लिए दुनिया में पोषण की कमी को पूरा करने की मांग है। खाद्य कीट में अन्य जानवरों के मांस और पौधों की तुलना में अधिक विटामिन, अमीनो एसिड, वसा और प्रोटीन होते हैं। इसलिए, मूल्य वर्धित उत्पाद और फोर्टिफाइड भोजन कुपोषण को कम करने और पोषण की मांग को पूरा करने में मदद कर सकते हैं। कीटों में भोजन और चारे के लिए प्रोटीन वसा, कैल्शियम, लोहे की काफी क्षमता होती है। पशु प्रोटीन के विपरीत, वे किफायती भी हाते हैं। अभी भी खाद्य कीट, इनके गुणवत्ता विश्लेषण एवं प्रसंस्करण और मानव स्वास्थ्य पर इसके प्रभाव के क्षेत्र में ज्यादा काम नहीं किया गया है। ऐसे उत्पाद के लिए सीमित अनुसंधान उपलब्ध हैं और उपभोक्ता स्वीकार्यता के संदर्भ में सीमित सर्वेक्षण किया जाता है। कीट पाउडर के साथ मांस और बेकरी उत्पादों को आंशिक रूप से प्रतिस्थापित करने और उनकी विशेषताओं को नकारात्मक रूप से प्रभावित किए बिना उन वस्तुओं की संरचनात्मक विशेषताओं में सुधार करने की गुंजाइश है। बड़ी संख्या में खाद्य कीट उपलब्ध हैं लेकिन भंडारण दिवसों के साथ फ्रीजिंग एवं रेफ्रिजरेशन के संबंध में ऐसा कोई डेटा उपलब्ध नहीं

है। फिर भी यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि खाने योग्य कीड़े सतत विकास के लिए मानव को खाद्य जनित बीमारी से बचाने के लिए लार्वा या कीटों की सुरक्षा और स्वच्छ गुणवत्ता को बनाए रखकर कुपोषण को कम करने में मदद कर सकते हैं।

संदर्भः

कौचमा, टी. (2014). एडोप्शन ऑफ हाई हाईड्रोस्टैटिक प्रेशर (एचपीपी) फॉर फूड प्रोसेसिंग ऑपरेशन्स। अकाडैमिक प्रेस

कोवाल्सकी, एस., मिकुलेक, ए., मिकोव्सका, बी., स्कोटनिका, एम., एवं माजूरेक, ए. (2022). सप्लिमेंटेशन ऑफ व्हीट ब्रेड विथ डिफरेंट एडिबल इनसेक्ट फ्लॉर्स। इन्फ्लुएंज ऑफ केमिकल काम्पोसीशन ऑन नुट्रीशिनल एंड टेकनोलॉजिकल ऐस्पेक्ट्स। एलडब्यलूटी, 159, 113220

मो. जैनी, एन.एस., लिम, ई.जे., अहमद, एन.एच., गेंगाथरन, ए., वान–मोहतर, डब्ल्यू.ए.क्यू.आई., एंड अब्द रहीम, एम.एच. (2023), "ए रिव्यू ऑफ कुकिंग, ड्राइंग एंड ग्रीन एक्सट्रैक्शन मैथड्स ऑन जनरल नुट्रिशिनल प्रॉपर्टीज ऑफ एडिबल इनसेक्ट्स एंड लोकस्ट्स"। फुड एंड बायोप्रोसेस टेक्नोलॉजी, 1–15।

ओझा, एस., बुएलर, एस., साइरिआनोस, एम., रौस्सी, जी., एंड श्लुटर, ओ.के. (2021)। एडिबल इंसेक्ट प्रोसेसिंग पाथवेज एंड इम्प्लिमेंटेशन ऑफ एमर्जिंग टेक्नॉलजीज। जर्नल ऑफ इंसेक्ट्स ऐस फुड एंड फीड, 7(5), 877–900

*****

जल प्रदूषण

डा. वासंती रामचंद्रन
सी–2–16–सहयाद्रि, प्लॉट–5
सेक्टर–12 द्वारका, नई दिल्ली–110078
9818752270 (मोबाइल)
ramvas2000@yahoo.com (Email)

मानव अधिकारों की घोषणा इस बात की पुष्टि करती है कि सभी मनुष्य एक ऐसी सामाजिक और अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था के हकदार हैं, जिसमें उनके अधिकारों और स्वतंत्रताओं को पूर्ण रूप से क्रियान्वयन किया जा सके। जल मानव के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है और संयुक्त राष्ट्र द्वारा इसे मौलिक मानव अधिकार के रूप में मान्यता दी है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2030 तक विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने के लिए अनेक लक्ष्यों को ध्यान में रखा गया है। ये लक्ष्य मुख्य रूप से मानव अधिकार के रूप में जल के महत्व को बताते हैं और स्थायी जल प्रबन्धन की आवश्यकता पर जोर देते हैं।

जल संबंधी चुनौतियों का समाधान करने के कुछ मुख्य उद्देश्य हैं :–

- स्वास्थ्य में सुधार
- गरीबी को कम करना
- लैंगिक समानता को बढ़ावा देना
- खाद्य–सुरक्षा बढ़ाना
- पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा करना
- शांति व स्थिरता को बढ़ावा देना
- गरिमामय जीवन जीने के लिए जल का मानव अधिकार अपरिहार्य है।

जल के लिए सभी के अधिकार के रूप में परिभाषित घरेलू और व्यक्तिगत उपयोग दोनों के लिए जल का

- पर्याप्त मात्रा में होना
- सुरक्षित होना
- स्वीकार्य होना और
- भौतिक रूप से सुलभ व किफायती होना

अनिवार्य है। इसका कारण ये है कि जल मानव के लिए आवश्यक तत्वों में से एक है, मनुष्य के लिए जल के बिना लंबे समय तक जीना संभव नहीं है। ऐसे में यदि स्वच्छ जल उपलब्ध न हो तो जीवन नारकीय स्थिति में रह जाएगा।

क्यों चाहिए जल?

जल पृथ्वी के सभी जीवित लोगों के लिए अनिवार्य है, चाहे वे मनुष्य हों या अन्य जीवित प्राणी, पौधे।

- मानव शरीर को ठीक से काम करने के लिए जल की आवश्यकता होती है।
- जल शरीर के तरल पदार्थों के संतुलन को बनाए रखता है।
- शरीर के तापमान को नियंत्रित रखता है।

विभिन्न शारीरिक प्रक्रियाओं को सुनिश्चित करने के लिए जल महत्वपूर्ण है। पृथ्वी की लगभग 71 प्रतिशत सतह जल से ढकी हुई है। पृथ्वी पर बहुतायत में जल

तो है लेकिन अधिकांश जल खारा है। मीठा जल कई स्थानों पर उपलब्ध नहीं है।

जल आवश्यक है :–

- व्यक्तिगत स्वच्छता के लिए
- भोजन तैयार करने के लिए
- आसपास व घर को स्वच्छ रखने के लिए

स्वच्छ जल तक पहुँच जलजनित रोगों को रोकने में मदद करती है। ये जलजनित रोग बच्चों और बुजुर्गों जैसी कमजोर आबादी के लिए जानलेवा भी हो सकते हैं। जल तक पहुँच, (विशेषकर स्वच्छ जल) गरीबी उन्मूलन से निकटता से जुड़ी हुई है। विकासशील व अविकसित देशों के लोग अक्सर दूर के स्रोत से दैनिक आवश्यकता के लिए जल एकत्र करने के लिए अपना व अपने परिवार का महत्वपूर्ण समय व प्रयास व्यय करते हैं। इससे शिक्षा, आय–सृजन, आर्थिक अवसरों में कमी आती है।

जल भोजन से पोषक तत्वों के पाचन और अवशोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जल के बिना पाचन तंत्र बेहतर ढंग से काम नहीं कर पाता है। शरीर में विद्यमान जल ही मल–मूत्र–पसीने के माध्यम से शरीर से अवशिष्ट उत्पादों के निकास में सहायता करता है।

जल प्रदूषण के कारण पारिस्थितिकी तंत्र में प्रत्यक्ष ढंग से और मानव जीवन में परोक्ष ढंग से असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। जल प्रदूषण मुख्य रूप से मानव या जानवरों द्वारा किया जाता रहा है।

जल–प्रदूषण केवल भारत की ही नहीं बल्कि यह वैश्विक समस्या है। जल प्रदूषण के पांच मुख्य स्रोत हैं: – सीवेज, औद्योगिक अपशिष्ट, कृत्रिम साबुन और डिटरजेंट पाऊडर, उर्वरक और कीटनाशक औषधियाँ, पेट्रोलियम पदार्थ इत्यादि।

जल प्रदूषण के विभिन्न प्रकार होते हैं :–

- भू–जल प्रदूषण
- सतही जल–प्रदूषण
- निलंबित पदार्थ / प्राणियों के मल–मूत्र आदि के मिलने से
- तेल रिसाव पेट्रोल के आयात / निर्यात / जहाजों के दुर्घटनाग्रस्त होने से
- सूक्ष्म जीव प्रदूषण / विषाणु, जीवाणु, कवक, परजीवी
- रासायनिक जल प्रदूषण – नहाने–धोने, बर्तनों की धुलाई से निकला साबुन
- **ऑक्सीजन प्रदूषण** – गरम जल में ऑक्सीजन घुल नहीं पाता
- **उष्मीय प्रदूषण** – कई बड़े कारखानों में वस्तु को गलाने के लिए उन्हें बहुत गर्म करते हैं, उनमें से कुछ ऐसे भी पदार्थ होते हैं जिनका कारखानों में उपयोग नहीं होता। अतः उन्हें सीधा ही नदी के जल में गरम–गरम डाल दिया जाता है। उनमें से निकली उष्मा से जलीय जीवों की मृत्यु हो जाती है।

मनुष्यों की कुछ गतिविधियाँ हैं जो जल को प्रदूषित करती हैं :–

– कुछ लोग घरों से निकले कचरे, सड़ी गली वस्तुओं को नाली में फेंक देते हैं। यह जल आगे चलकर तालाब, नदियों के जल को प्रदूषित करता है।

– कुछ लोग जानवरों को नहलाते हैं व गाड़ियों को साफ कर जल को गंदा करते हैं।

– अधजले शवों को नदी या तालाब में फेंक देते हैं।

– त्योहारों के बाद देवी–देवताओं की मूर्तियों का जल में विसर्जन किया जाता है। इन मूर्तियों के निर्माण में उपयोग में लाए गए रंगों के कारण जल प्रदूषण हो जाता है।

– अस्पताल में उपयोग में लाए गए अपशिष्ट वस्तुओं को भी फेंकने से रोगियों के अनेक रोगों के जीवाणु विषाणु जल में प्रवेश कर जाते हैं।

– खेती में पैदावार बढ़ाने के उद्देश्य से या फिर खरपतवार नाशक दवाईयों को विभिन्न प्रकार के रासायनिक खादों को नदियों व तालाबों में फेंक दिया जाता है, जिसके कारण ये घातक पदार्थ जल में घुलकर प्रदूषण पैदा करते हैं।

– उद्योगों से निकले पदार्थों के निर्माण के साथ–साथ कुछ अनुपयोगी/अवशिष्ट पदार्थ भी बनते हैं जो जल में घुलकर पौधों द्वारा सोख लिए जाते हैं जैसे सीसा, आर्सेनिक, पारा, क्रोमियम कैडमियम इत्यादि जो घातक रोग उत्पन्न करते हैं।

इस संदर्भ में कुछ विशेष रासायनिक तत्वों का वर्णन आवश्यक है जैसे:–

1. आर्सेनिक – यह रासायनिक तत्व एक अत्यंत विषैली भारी धातु है, प्राकृतिक रूप से कई खनिजों में पाई जाती है। आमतौर पर सल्फर और अन्य धातुओं के संयोजन में भी मिलता है, कभी शुद्ध मौलिक क्रिस्टल के रूप में भी। आर्सेनिक कार बैटरी, गोला बारूद में विद्यमान होता है। इसे कीटनाशकों, उपचारित लकड़ी के उत्पादों, शाकनाशियों आदि में उपयोग में लाया जाता है। यह सभी पौधों द्वारा अवशोषित होता है, मुख्य रूप से पत्तेदार सब्जियों, चावल, सेब/अंगूर के रस, समुद्री भोजन में अधिक केंद्रित होता है। आँखों की ज्योति कम हो सकती है, यकृत, ह्रदय, मधुमेह की समस्या हो सकती है।

2. औद्योगिक प्रदूषण मुख्य रूप से कागज़ की फैक्ट्ररियाँ, टेनिन, रिफाइनरी, धातु उद्योग, कपड़ा उद्योग इत्यादि से निकलकर जल को प्रदूषित करते हैं।

3. जल आपूर्ति के पुराने और गले पाइपों के कारण जल में सीसे (लेड) का प्रदूषण होता है। ऐसे जल को पीने से मस्तिष्क को हानि पहुँचती है। सोचने समझने की शक्ति कम होती है।

जल–प्रदूषण के मापन हेतु कई विधियाँ उपलब्ध हैं। मुख्य रूप से रासायनिक परीक्षण द्वारा इसे नापा जा सकता है। दूसरा जैविक परीक्षण है जिसमें पेड़ पौधों व जीव–जंतुओं का उपयोग किया जाता है। इस विधि में यह देखा जाता है कि इस जल को ग्रहण करने से उनके स्वास्थ्य पर किस प्रकार का और कितना कुप्रभाव पड़ा है। साथ ही उनके विकास और वृद्धि में क्या फर्क पड़ा है। इस तरह उनके आसपास की पर्यावरणीय परिस्थिति की जानकारी भी प्राप्त होती है।

जल–प्रदूषण पर नियंत्रण कैसे करें?

सर्वेक्षणों के अनुसार भारत की 28% आबादी गरीब है। ये आबादी बुनियादी सुविधाओं और दरिद्रता के द्वारा बुने गए दुष्चक्र के बीच फँसी हुई है। जल–प्रदूषण व अन्य प्रदूषणों के कारण रोगों की संख्या बढ़ रही है,

उत्तरोतर गरीबी भी अधिक बढ़ रही है। स्वास्थ्य के लिए किए गए खर्चे भी बढ़ रहे हैं। एक बात ध्यान देने योग्य है कि जल–प्रदूषण के प्रति गरीब लोग भी जागरूक हैं सतर्क हैं, पैसे देकर स्वच्छ पेय जल खरीदने के लिए भी तैयार हैं, लेकिन कहीं न कहीं चूक हो ही जाती है, जिसके कारण वे रोगग्रस्त हो जाते हैं।

– प्रदूषण पर नियंत्रण हेतु नालों की सफाई नियमित रूप से करना चाहिए। गाँवों में जल के निकास हेतु पक्की नालियों की व्यवस्था नहीं होती जिसके कारण इनका जल अव्यवस्थित रूप से नदी, नहर के स्वच्छ जल के साथ मिल जाता है। अतः पक्की नालियों को बनाकर अपशिष्ट को स्वच्छ जल के स्रोत से दूर रखने का कार्य करना होगा।

– विद्यालयों में जल प्रदूषण के विषय में ज्ञान देना चाहिए, ताकि वो स्वच्छ जल को पीने के महत्व को समझ सकें।

– औद्योगिक अपशिष्ट का भली–भाँति निपटान किया जाना चाहिए। निर्माण के बाद शेष बचे रासायनिक पदार्थों को नदी–नालों में न फेंककर उन्हें सुरक्षित रूप से नष्ट करें।

– उद्योग में निर्माण विधि में भी परिवर्तन लाकर इस तरह के हानिकारक, घातक पदार्थों के उत्पादन को कम किया जा सकता है।

– प्लास्टिक जैसे जैविक तौर पर नष्ट न होने वाले पदार्थों का इस्तेमाल न करें।

– तालाबों, नदियों में कपड़ों की धुलाई, जानवरों व मनुष्यों द्वारा मल–मूत्र त्यागने पर कड़ी सजा दी जाए।

– समुद्र–जल का प्रदूषण रोकने के लिए पेट्रोल तेल वगैरह का जहाज से रिसाव न होने दें। आयात–निर्यात के नियमों का पालन किया जाए।

– घास काटने के बाद और सब्जियों के छिलकों को कम्पोस्ट खाद में परिवर्तित करने का प्रयत्न किया जाए।

– बारिश होने से ठीक पहले घास पर उर्वरक न डालें ऐसा करने से रसायन नालों व जलमार्गों में बह जाएंगे।

– जहाँ तक हो सके घर की सफाई, शौचालयों की सफाई में हर्बल प्रोडक्ट का इस्तेमाल करें। हर्बल प्रोडक्ट पौधों से बने होते हैं उसमें किसी प्रकार का रासायनिक पदार्थ नहीं होता।

– मृत जानवरों व मनुष्यों को नदियों में बहाना उचित नहीं।

जल प्रदूषण केवल भारत की नहीं वैश्विक समस्या है। इसके लिए सभी स्तरों पर चल रहे मूल्यांकन और जल–संसाधन नीति में समय–समय पर संशोधन की आवश्यकता है क्योंकि जल मानव की मुख्य आवश्यकताओं में से एक है।

*****

ग्रेविमेट्रिक विश्लेषणात्मक प्रयोगों में उच्च दक्षता के सफलतम प्रयास

मयंक निम्बार्क,
के.प्र.नि.बो. क्षेत्रीय निदेशालय, वड़ोदरा
ईमेल : mayanknimbark092@gmail.com
& mayanknimbark.cpcb@gov.in
संपर्क नंबर : 9770245299

लेख रूपरेखा :

1. प्रस्तावना
2. भारात्मक विचलन के कारक
3. भारात्मक विचलन अवनमन हेतु प्रयास
4. भार विचलन के परिमाण का पैरामीटर्स आधार पर अध्ययन

प्रस्तावना:

अधिकांश जलीय/दूषित जलीय जैसे लिक्विड सैम्पल्स के पैरामीटर्स डिसॉल्वड– सॉलिड्स, फिक्स सॉलिड्स, सस्पेंडेड सॉलिड्स, ऑइल एंड ग्रीस जैसे पैरामीटर्स, एयर सैम्पल्स के अंतर्गत एम्बिएंट एयर मॉनिटरिंग से प्राप्त पार्टिकुलेट मेटर (PM_{10} & PM_{25}) पैरामीटर्स के फिल्टर पेपर्स एवं सोर्स एम्मीशन से प्राप्त थिंबल्स का भार मापन, सॉलिड/स्लज/साइल से संबधित पैरामीटर्स जैसे पर्सेंटेज मोईस्चर, लॉस आन ड्राइंग आदि का विश्लेषण ग्रेविमेट्रिक विश्लेषण के अंतर्गत भार मापन/Weight Measurement से किया जाता है। [संलग्न चित्र क्र.– A to E]

वेयिंग/भार मापन, ग्रेविमेट्रिक विश्लेषण की एक बहुत ही सेन्सिटिव प्रकिया है क्योंकि अत्याधुनिक डिजिटल हाई सेंसटिव बैलेंस/तुला के उपयोग के बावजूद वातावरणीय कारक जैसे वायवीय आद्रता (मॉइस्चर), प्रयोगशाला कक्ष का तापमान, भार लिए जाने वाले ऑब्जेक्ट जैसे फिल्टर पेपर्स, थिम्बल, ग्लासवेयर्स (जैसे बीकर्स, पेट्रीडिश) के स्वयं का सतही तापमान, भार लिए जाने वाले केमिकल– पदार्थ का जलस्नेही स्वभाव/हाईग्रोस्कोपिक–टेन्डेन्सी आदि बैलेंस – डिस्प्ले पर प्रदर्शित भार की वैल्यूज परिणाम में अस्थिरता, सतत विचलन उत्पन्न करते हैं। इन्हीं सभी कारकों की वजह से हमारे स्टैंडर्ड्स – प्रोसिजर्स का

चित्र क्र.A : PM2.5 – फिल्टर पेपर

चित्र क्र.B : PM10 – फिल्टर पेपर

चित्र क्र.C थिम्बल

चित्र क्र.D : बीकर् डिसॉल्वड–सॉलिड्स

चित्र क्र.E : सस्पैंडेड सॉलिड्स फिल्टर पेपर

चित्र क्र. A to E : ग्रेविमेट्रिक विश्लेषण में भार लिए जाने वाले ऑब्जेक्ट जैसे फिल्टर पेपर्स, थिम्बल, ग्लासवेयर्स

सम्पूर्ण सावधानी के साथ अनुपालन करने के उपरांत भी अक्सर कुछ भारात्मक विश्लेषणों में ''हाई प्रिसिजन'' के साथ रेपिटेटिव भार के परिणाम को प्राप्त कर पाना एक कठिन कार्य है। यह संक्षिप्त लेख पर्यावरणीय प्रयोगशालाओं में सामान्यतः किये जाने वाले महत्वपूर्ण फीजिओ केमिकल पैरामीटर्स जिन्हें ग्रेविमेट्रिक / भारात्मक विश्लेषण विधि से किया जाता है उनमें वेइंग/भार मापन के दौरान उत्पन्न ''भारात्मक – विचलन'' से संबधित तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित है।

Fig (F) : डेसीकेटर / शुष्क

ग्रेवीमैट्रिक एनालिसिस में हीटिंग के पश्चात टीएसएस पैरामीटर हेतु प्रयुक्त फिल्टर पेपर्स, टीडीएस पैरामीटर के लिए प्रयुक्त ग्लास वेयर्स, आदि को सामान्य तापमान पर आने तक जिस उपकरण में रखा जाता है उसे डेसीकेटर / शुष्क कहा जाता है, इसके अंदर एक्टीवेटेड सिलिका जेल भरी होती है जिससे डेसिकेटर के अंदर का स्थान मॉइश्चर लेस / आर्द्रता विहीन एनवायरमेंट होता है जिससे शीतलन की इस प्रक्रिया में इसमें रखी हुई ऑब्जेक्ट एवं पदार्थ का तापमान तो कम होता है किंतु वह वायु में उपस्थिति आर्द्रता को पकड़ नहीं पाते, इस कारण उनके भार पर कोई अतिरिक्त प्रभाव नहीं पड़ता।

यहाँ इस लेख के माध्यम से भिन्न ग्रेवीमीट्रिक पैरामीटर्स में भारात्मक विचलन के तुलनात्मक क्रम, प्रभावित करने वाले कारक तथा भारात्मक विचलन से संबन्धित पैरामीटर्स के परिणाम पर होने वाले प्रभाव एवं भारात्मक विचलन को कम करने के प्रयास सम्बन्धित बिन्दुओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

2) भारात्मक विचलन के कारक :

यदि सामान ग्लासवेयर या फिल्टर पेपर्स का समान वातावरणीय दशा, समान उपकरणों (जैसे – हॉट एयर ओवन, मफल फर्नेस / भट्टी, वाटरबाथ, डेसीकेटर एवं वेइंग–बैलेंस इत्यादि) के प्रयोग से, समान समयावधि के लिए हीटिंग, डेसिकेशन के बाद भी असमान का भार प्राप्त होना विश्लेषण से जुडी रैंडम एरर के कारण होता है। रैंडम एरर के कारण प्राप्त एनालिसिस परिणाम का ट्रेड / सीक्वेंस भी अनियमित होता है यानि कि पहली बार जो प्रथम परिणाम मिला अगली बार दोहराने पर पहले परिणाम की वैल्यू से कभी अप तो कभी डाउन क्रम में वैल्यूज मिलती हैं। हम जानते हैं कि "रैंडम एरर्स कैन नॉट बी अवॉयडेड, इट इस ऑलवेज एसोसिएटेड विद द एनालिसिस'' यानि "रैंडम एरर्स'' को दूर किया जाना कठिन है। यह किसी न किसी मात्रा में हमेशा विश्लेषण के साथ जुड़ी होती है, किंतु इसका अध्ययन इस रैंडम एरर के परिमाण/मेग्नीट्यूड को मिनिमाइज करने में हमारी बहुत मदद कर सकता है। जितना ज्यादा हम रैंडम एरर्स को कम कर पाएंगे हम एक्यूरेसी के उतने नजदीक पहुंच पाएंगे तथा अत्यंत निम्न/सब् – कंसंट्रेशन तक विश्वसनीयता के साथ प्राप्त आंकड़ों को स्टेबलाइजर कर पाएंगे।

"स्टडी ऑफ एरर्स'' के अंतर्गत हम जानते हैं कि किसी भी विश्लेषण में प्रयोग किए गए इक्विपमेंट और उपकरण का एक अपना लिमिटेशन होता है, ग्रेविमेट्रिक एनालिसिस में प्रयुक्त की जाने वाली उपकरण जैसे ओवन, बैलेंस, और अप्लाइड मेथड आदि की अपनी लिमिटेशन होती है, साथ ही जलीय – सैंपल मापने के लिए प्रयुक्त किए गए ग्लासवेयर जैसे मेजरिंग – सिलिंडर के साथ एसोसिएटेड अनसर्टिनिटी की वजह से विश्लेषण के परिणाम में वेरिएशन आता है उसे ''सिस्टमैटिक एरर'' कहते है, इसे ''टाइप बी – एरर'' तथा ''डिटरमिनेट एरर'' भी कहा जाता है, को क्योंकि

सिस्टमैटिक एरर, प्रिडिक्टेबल प्रकृति की होती है जिसे सुधारा जा सकता हैं। कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं को ध्यान में रखकर यह "उपकरण एरर" / "सिस्टमैटिक एरर" को रेक्टिफाइड किया जा सकता है जैसे कि विश्लेषण से पूर्व इक्विपमेंट्स का कैलिब्रेशन किया जाना, प्रत्येक उपकरण की डिटेक्शन लिमिट, उसकी सेंसटिविटी, एवं बायस की स्टडी उससे उत्पन्न डाटा को रेक्टिफाइड करने में मददगार होती है।

3) भारात्मक विचलन के अवनमन हेतु प्रयास :

उपरोक्त प्रभावित किये जाने वातावरणीय फैक्टर्स में से कुछ को Mitigate / उन्मूलन करने में बहुत हद तक सफल हो पाए जो वर्तमान में अधिकांश प्रयोगशालाओं में प्रक्रिया का हिस्सा बन गया है जैसे :–

- ग्रेविमेट्रिक विश्लेषण के अंतर्गत भार – मापन करने से पूर्व ही एयर कंडीशनर्स (AC) की सहायता से प्रयोगशाला के बेलेन्स कक्ष का तापमान एनटीपी – मानक ताप के अनुरूप 25 डिग्री तक समायोजित किया। तब जाकर वेदर इम्पैक्ट को ओवरकम किया जा सका।
- आजकल इलेक्ट्रोनिक डिजिटल क्लोज्ड – बेलेन्स का उपयोग होता है जिनमें चारों तरफ ग्लॉस के बने हुए साइड डोर होते हैं। भार अनुमापन के समय ये डोर बंद होने की वजह से बैलेंसिंग पेन/तल कक्ष की वायु से आइसोलेट रहता है।
- केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड स्थित प्रयोगशाला के विश्लेषकों ने क्लोज्ड डिजिटल बैलेंस के पैन के अंदर साइड फ्री स्पेस में एक्टिवेटेड सिलिका जेल फिल्ड मिनी बिकर्स की हेल्प से वेइंग के दौरान बैलेंस–चैम्बर की एयर में उपस्थित मॉइस्चर जोकि भार की डेसिमल के बाद के पांचवे डिजिट को प्रभावित कर रहा था, उसके विचलन को दूर किया जा सका।
- सम्पूर्ण हीटिंग प्रक्रिया के दौरान सम्बंधित हीटिंग इक्विपमेंट जैसे हॉट एयर ओवन, मफल–फर्नेस, वाटर बाथ इत्यादि का एक कांस्टेंट तापमान बना रहे इसके लिए के डिजिटल डिस्प्ले पर टेम्परेचर सेट करने के पश्चात भी सेट / डिस्प्लेड टेम्प्रेचर का समानांतर / पैरेलल वैल्यू हेतु संबंधित उपकरण से संलग्न उपर्युक्त तापमापी / थर्मामीटर की प्रदर्शित वैल्यूज पर भी कंटीन्यूअस निगरानी रखी, जाकर.. (देखे संलग्न चित्र क्र.I), अनइवन – हीटिंग से उत्पन्न भारात्मक विचलन को दूर किया जा सका।
- एंबिएंट एयर सैंपलिंग में प्रयुक्त ब्लैंक पीएम10 एवं पीएम2.5 फिल्टर पेपर्स का प्रारंभिक भार लेने एवं मॉनिटरिंग के बाद एक्सपोज्ड पीएम10 एवं पीएम2.5 फिल्टर पेपर्स का फाइनल वेट लेने से पहले दोनों ही समय भार मापन से ठीक पहले उन्हें निर्धारित समय तक डेसिकेटर में रखा जाता है ताकि फिल्टर पेपर्स की सतह पर उपस्थित आर्द्रता का प्रारंभिक एवं अंतिम भार पर आर्द्रता का अधिक प्रभाव ना पड़ सके। (संलग्न चित्र क्र. G & H)
- केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड स्थित प्रयोगशाला साथियों ने अपने कार्य अनुभव से पाया कि एक्सपोज्ड पीएम10 एवं पीएम2.5 एबिएंट एयर फिल्टर पेपर्स का भार मापन करने से पूर्व कम से कम 3 घंटे के लिए डेसीकेशन किया। तभी मॉइश्चर की वजह से भार में आ रहे विचलन को बहुत हद तक कम किया जा सके।
- एंबिएंट एयर मॉनिटरिंग स्टेशन से प्राप्त फिल्टर पेपर को प्रयोगशाला तक पहुंचाते समय यह ध्यान

चित्र क्र. (G)

चित्र क्र. (H)

चित्र क्र. (I)

रखा जाना चाहिए कि पीएम2.5 फिल्टर पेपर को मॉनिटरिंग के तुरंत बाद प्रत्येक को अलग–अलग एक फ्रेश स्मॉल साइज एयर टाइट कंटेनर / बॉक्स में रखा जाना चाहिए, वही पीएम10 फिल्टर पेपर को एक्सपोज्ड साइज से फोल्ड करके एनवेलप पेपर्स में रखा जाना चाहिए ताकि वह ट्रांसपोर्टेशन के दौरान weight/ भार को प्रभावित करने, दोनों कारक मॉइश्चर ट्रेप और पार्टिकल लॉस दोनों से बच सके। {दिखे संलग्न चित्र क्र. H}

- दूसरी महत्वपूर्ण सावधानी फिल्टर पेपर्स के डेसीकेशन के दौरान यह रखी जानी चाहिए कि जब पीएम2.5 को डेसीकेटर में रखने से पहले उसके आइसोलेटेड कंटेनर / बॉक्स का अपर कीप ओपन कर देना है, वही पीएम10 को उसके एनवलॉप से बाहर करके और ओपन कंडीशन में एक्सपोज्ड साइड ऊपर की तरफ करते हुए डेसीकेटर में रख देना है, क्योंकि एनवेलप के अंदर रखे हुए फिल्टर पेपर और कंटेनर में बंद पीएम2.5 पेपर्स का इंडिकेटर में रखने के बाद भी आर्द्रतापूर्ण रूप से नहीं हो पाती। फलस्वरुप इसमें अल्प अनिमियतता देखने को मिलती है.. {दिखे संलग्न चित्र क्र. H}।
- यदि जलीय सैम्पल्स की बात की जाए तो ग्रेविमेट्रिक विश्लेषण की भार मापन पर इनके विचलन को एक से अधिक रेप्लिकेट्स लगाकर फिर उनके प्रत्येक के रेपिटेटिव भार से प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकी के अनुसार स्टैंडर्ड डेविएशन (SD), रिलेटिव स्टैंडर्ड डेविएशन (RSD), आदि की हेल्प से विचलन का अध्ययन हमारे प्राप्त डेटास की एक्यूरेसी को बढ़ाने में मददगार है। RSD (रिलेटिव स्टैंडर्ड डेविएशन) की वैल्यू जितनी ज्यादा कम होगी उतना ज्यादा विश्लेषण का हाई प्रिसीजन होगा। कोशिश यह की जाती है कि अगर 2% से कम RSD की वैल्यू हो तो एक्सीलेंट प्रीसाइज्ड परिणाम माने जा सकते हैं। उच्च गुणवत्तापूर्ण विश्लेषण हेतु 5 प्रतिशत से कम RSD की वैल्यू हो तो अच्छा है।

4) भार विचलन के परिमाण का पैरामीटर्स आधार पर अध्ययन :

TDS/टोटल डिसोल्व सॉलिड एवं FDS/ फिक्स्ड डिपॉजिट सॉलिड दोनों ही पानी एवं प्रदूषित पानी (एफ्लूएंट) के अंतर्गत किए जाने वाले महत्वपूर्ण ग्रेविमेट्रिक विधि से किए जाने वाले पैरामीटर है इनके एक ही सैंपल के पांच रिप्लिकेट की टीडीएस करने से प्राप्त डेटा का स्टेटिकल कैलकुलेशन इस प्रकार है :

Precision - Why is This Important?

What does "Precision" mean?

- Ability to get the same result for the same sample when measured multiple times
- Usually measured as % RSD or sometimes, SD
  % RSD = (SD / Mean Result) * 100
- Low values indicate good precision

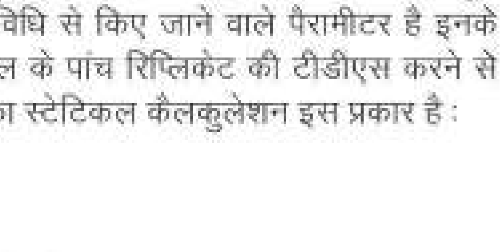

बीकर कोड (Sr. No.)	Dring on @ 180 C & Dessication Time - 1 Hr		(c) सैंपल वॉल्यूम	(D) डिफरेंस (D = A&B) (Diff-)	Dx106 (C) डिसोल्व सॉलिड (TDS) (In Mg/ Lit)	स्टैटिकल कैलकुलेशन ऑफ रैप्लिकेट्स फार SD
	(A) फाइनल -Wt	(B) प्रारम्भिक initial -Wt				Sum, Σx: 1449.82 Mean, x̄ : 289.964 Variance, s2: 3.88 Standard Deviation, Sd : 1.97 (% Relative Standard Deviation) % RSD : 0.679 %
1	68.59279	68.56360	100	0.02919	291.90	
2	68.59873	68.57006	100	0.02867	286.70	
3	51.40745	51.38430	80	0.02328	291.00	
4	55.86702	55.84381	80	0.02321	290.02	
5	55.86702	55.84381	80	0.02321	290.20	

Steps

$$Sd^2 = \frac{\Sigma(x_i - \bar{x})^2}{N - 1}$$

$$= \frac{(291.90 - 289.964)^2 + ... + (290.20 - 289.964)^2}{5 - 1}$$

$$= \frac{15.53392}{4}$$

$$= 3.88348$$

$$Sd = \sqrt{3.88348}$$

$$= 1.97$$

$$RSD = \left|\frac{\sigma}{\mu}\right|$$

Where:
σ = standard deviation
μ = mean

- एम्बिएंट एयर मॉनिटरिंग से प्राप्त पार्टिकुलेट मैटर (PM10 & PM2-5) पैरामीटर्स के फिल्टर पेपर एवं सोर्स एम्मीशन से प्राप्त थिम्बल के सामान्यतः रेप्लिकेट्स नहीं लिए जा सकते। उदहारण के तौर पर किसी एक लोकेशन पर स्थापित RDS (रेस्पायरबल डस्ट सैम्पलर) से की गयी मॉनिटरिंग से प्राप्त फिल्टर पेपर एवं लोकेशन के उस समय–विशेष पर उपलब्ध पार्टिकुलेट मेटर (PM10 & PM2-5) की कंसंट्रेशन को रीप्रसेंट करते हैं अर्थात प्राप्त सैंपल आईडेंटिकल होगा, जिसकी वजह से वाटर एवं सॉलिड सैम्पल्स की तरह एयर के पार्टिकुलेट मेटर के सैम्पल्स के रेप्लिकेट्स प्रयोगशाला को सामान्यतः उपलब्ध नहीं हो पाएंगे। अतः इस वायु प्रबोधन से प्राप्त एकाकी नमूनों जैसे थिंबल को हमारी स्टैंडर्ड मेथड्स में सुझाए गए तरीके "अगेन ड्राइंग, कूलिंग / डेसीकेट और वेइंग" के सम्पूर्ण क्रम (सायकल / चक्र) को दोहराया जाकर उनके भार की 2 या उससे अधिक

रेप्लिकेट वैल्यू प्राप्त की जा सकती है जो संबंधित सैम्पल्स के स्टैटिकल कैलकुलेशन स्टैंडर्ड डेविएशन, RSD (रिलेटिव स्टैंडरड डेविएशन) आदि के लिए प्रयुक्त की जा सकती है।

हालांकि एक बार प्राप्त होने के बाद अगेन ड्राइंग, कूलिंग / डेसीकेट और वेइंग का यह जो तरीका है यह उन सभी सैंपल्स के लिए तो बहुत सुविधाजनक रहा है, जिनमें हाइग्रोस्कोपिक / आर्द्रता अवशोषित साल्ट पार्टिकल या पदार्थ होने की वजह से उनका कंटीन्यूअस भार, वेइंग (भार मापन) के दौरान बढ़ रहा हो। किंतु अधिक टाइम कंजूमिंग होने की वजह से यह विधि स्थिर भार वाले पदार्थों के लिए विचलन को और अधिक बढ़ाने वाली हो सकती है क्योंकि अगेन ड्राइंग, कूलिंग / डेसिकेट की प्रक्रिया में मॉइश्चर गेन से कभी भार में वृद्धि तथा पार्टिकल लॉस की वजह से कभी भार में कमी दोनों ही प्रकार के विचलन की संभावना बढ़ सकती है।

ग्रेवीमेट्रिक सैम्पल्स की गुणवत्ता एवं ऐरस / त्रुटि के अध्ययन में आवश्यक रेप्लिकेट्स में आने वाली इस समस्या से बचने के लिए इस लेख में अन्य वैकल्पिक विधि का भिन्न–भिन्न ग्रेविमेट्रिक सैंपल्स के कुछ नमूनों के साथ अध्ययन किया, जिससे बिना सम्पूर्ण हीटिंग / कूलिंग प्रक्रिया को दोहराए अधिक सैम्पल्स का रेप्लिकेट्स भार बहुत कम डेविएशन के साथ पाया जा सकता है। यह विधि स्थिर भार वाले ग्रेवीमेट्रिक नमूनों जैसे फिल्टर्स पेपर्स, थिंबल, आदि के डेसीकेशन टाइम को बढ़ाकर उनके बारे में हुए परिवर्तन के अध्ययन पर आधारित है जिससे प्राप्त निष्कर्ष को इस लेख में आगे सम्मिलित किया जा रहा है।

4.1) ग्रेवीमेट्रिक पैरामीटर्स जैसे TDS, FDS, Oil & Grease के डेसीकेशन टाइम के साथ भार विचलन प्रयोग का विवरणः

(Fig: Wt of Blank Beaker first hour Desiccation) {Wt : 52.86361gm}	Fig : Wt of Blank Beaker After Four Hour Desiccation { Wt : 52.86350 gm}	Diff. = 0.00011 gm Or = 0.11 mg Or = 110 micro gm - contribution of this lowering of intial wt of beaker in result of TDS/ FDS / Oil &Grease if sample volume is 100 ml in each beaker = 1.10 mg / lit	टीडीएस के खाली बीकर का प्रारंभिक भार एक घंटे डेसीकेशन टाइम के साथ साथ 4 घंटे डेसीकेशन के बाद भी ले तो हम पाएंगे कि बीकर के 4 घंटे के बाद वाला डेसिकेटेड भार में पहले की तुलना में 110 माइक्रो ग्राम तक की कमी पाई गई। वहीं जबकि एनालिसिस के अंत में जब ड्राई होने के बाद उसी बीकर का फाइनल वेट भी 1 घंटे डेसीकेशन टाइम के साथ 4 घंटे डेसीकेशन के बाद भी लें तो हम पाएंगे कि 4 घंटे डेसीकेशन के दौरान 240 माइक्रोग्राम तक भार में कमी हो गई। ड्राई बीकर के फाइनल भार में डेसीकेशन टाइम के साथ जो लोवेरिंग / अवनमन हुआ वह प्रारम्भिक ब्लेंक बीकर के डेसीकेशन के साथ 'लोवेरिंग ऑफ वेट' के मल्टीपल अनुपात में था, जो यह सिद्ध करता है कि समान डेसीकेशन टाइम के उपरांत प्राप्त प्रारम्भिक एवं अंतिम भार के परस्पर कैलकुलेशन से प्राप्त ग्रेवीमेट्रिक

 Fig : Wt of dried Beaker After first Hour Desiccation { Wt: 51.51924gm}	 Fig : Wt ofdried Beaker After Four Hour Desiccation { Wt : 51.51900 gm}	Difference = 0.000240 gm = 240 micro gm Since each beaker have 100 ml sample then TDS or FDS deviation = 2.4 mg per lit	रिजल्ट परस्पर सेम सैंपल के रेप्लिकेट की तरह से होंगे। इन परिणामों का "स्टेटिकल कैलकुलेशन ऑफ एरर" यदि किया जाए तो ये उस सैंपल में ग्रेवीमेट्रिक – विश्लेषण की अनियमिताओं एवं विचलन की दर का निर्धारण करेगा। उदाहरण के तौर पर अगर किसी भी बीकर के फाइनल वेट को डेसीकेशन के पश्चात 1 घंटे बाद का वेट अगर स्टेबल नहीं आ रहा हो, तो 4 घंटे डेसीकेशन के बाद जो वेट आएगा उसे प्राप्त कैलकुलेशन का अधिकतम विचलन 2.5 यूनिट तक ही संबंधित सैंपल के टीडीएस, एफडीएस आदि ग्रेविमेट्रिक एनालिसिस को प्रभावित कर पाएगा।

4.2) ग्रेवीमेट्रिक पैरामीटर्स **PM10 – Filter paper** के डेसीकेशन टाइम के साथ भार विचलन प्रयोग का विवरण :

 Fig :Direct Wt of Blank PM 10 filter (Without Desiccation) { Wt : 4.63435 gm }	 Fig : Wt of Blank PM 10 filter After One Hour Desiccation { Wt : 4.63408 gm }	 Fig : Wt of Blank PM 10 filter Paper After 4 hour Desiccation { Wt : 4.6 2580 gm }	 Fig: Wt of Blank PM 10 filter Paper After 24 hour Desiccation { Wt : 4.62 404 gm }

Fig : PM 10 Filter Blank Paper Paper weight direst, after one hour desiccation and four & 24 hour desiccation respectively .

एंबिएंट एयर क्वालिटी मॉनिटरिंग में प्रयुक्त पीएम10 फिल्टर पेपर का अधिकतम भार 4.5 ग्राम तक हो सकता है वहीं पीएम2.5 में प्रयुक्त टेफलॉन फिल्टर पेपर का अधिकतम भार 0.15 ग्राम तक हो सकता है अर्थात पीएम10 में प्रयुक्त फिल्टर पेपर पीएम2.5 के टेफलॉन फिल्टर पेपर से 30 गुना ज्यादा भारी होता है। साथ ही जलीय एवं प्रदूषित पानी के सस्पेंडेड सॉलिड्स/TSS विश्लेषण में प्रयुक्त वाटमेन फिल्टर पेपर के अधिकतम भार 0.1 ग्राम होता है अतः PM10 फिल्टर पेपर TSS फिल्टर पेपर से भी 40 से 50 गुना अधिक भारी होता है। ग्रेविमेट्रिक एनालिसिस में भार में क्रमशः परिवर्तन ऑब्जेक्ट (फिल्टर पेपर) के सरफेस एरिया, उसकी एड्जॉर्बिंग टेंडेंसी (अधिशोषण–प्रवृत्ति), के साथ–साथ उसके भार के अनुत्क्रमानुपाती (डाइरेक्टली प्रोपोशनल) होता है, जिस तरह पीएम2.5 में प्रयुक्त फिल्टर पेपर टेट्राफ्लोरोएथिलीन पॉलीमर (टेफलॉन) का बना होता है, जोकि एक प्लास्टिक है और हाइड्रोफोबिक प्रवृत्ति का होता है। अतः पीएम 10 की तुलना में पीएम2.5 आर्द्रता के प्रति रेसिस्ट / प्रतिरोधी है साथ ही इसका PM10 फिल्टर पेपर का सर्फस एरिया, पीएम2.5 फिल्टर पेपर की तुलना में 10 गुना से भी अधिक होता है। उपरोक्त सभी वजह से PM10 फिल्टर पेपर पर आर्द्रता की वजह से आने वाला विचलन पीएम2.5 फिल्टर पेपर की तुलना में हजार गुना अधिक तक भी हो सकता है।

एंबिएंट एयर क्वालिटी मॉनिटरिंग में प्रयुक्त PM10 फिल्टर पेपर सेल्यूलोज या ग्लास फाइबर्स के बने होते हैं। उपरोक्त प्रयोग के लिए सामान्यतः प्रयुक्त सेल्यूलोज निर्मित PM10 फिल्टर पेपर का प्रयोग किया गया। जिस तरह से हमने देखा कि पीएम2.5 फिल्टर पेपर का सामान्यतः भार में विचलन 10 माइक्रोग्राम तक था वही पीएम10 फिल्टर पेपर का विचलन उससे हजार गुना अधिक यानी 10,000 माइक्रोग्राम तक (अर्थात 10 मिलीग्राम) तक देखने को मिल सकता है। हालांकि भार में होने वाले यह अधिक विचलन का PM10 के (परिणाम पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है क्योंकि सामान्यतः PM10 की मॉनिटरिंग में प्रयुक्त डस्ट सैंपलर द्वारा प्रति मिनट ली जाने वाली वायु का आयतन पीएम2.5 की तुलना में हजार गुना अधिक होता है। (PM2.5 द्वारा लगभग 16.7 लीटर पर प्रति मिनट यानि लगभग 1000 लीटर एयर प्रति घंटे ली जाती है। वहीं PM10 द्वारा प्रति मिनट ली जाने वाली एयर का आयतन ही मीटर क्यूब यानि 1000 लीटर तक होता है, अतः पैरामीटर के रिजल्ट का कैलकुलेशन करने के दौरान हम जब भार को वॉल्यूम ऑफ एयर से डिवाइड करते हैं तब पीएम2.5 की तुलना में पीएम10 के वायु का आयतन भी बहुत अधिक होगा जिससे न्यूमैरेटर में उपस्थित भर की वैल्यू का अधिक डिवीजन मिनिमाइज हो जाएगा।)

4.3) ग्रेवीमेट्रिक पैरामीटर्स सोर्स एमिशन (eg चिमनी) के पार्टिकुलेट मेटर की सैंपलिंग में प्रयुक्त थिंबल के डेसीकेशन टाइम के साथ भार विचलन प्रयोग का विवरण :

 Fig : Blank Thimble Wt after one hour of Desiccation { Wt: 1.53977gm}	 Fig : Blank Thimble Wt after 4 hr of Desiccation { Wt: 1.53935gm}	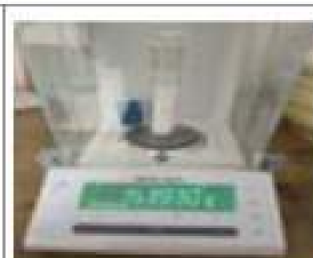 Fig : Blank Thimble Wt after (one day) Desiccation { Wt: 1.53930gm}	For Blank Thimble Wt Diff. = 1.53977 - 1.53930 = 0.00047 gm Or = 0.47 milligram Or = 470 micro gram -> contribution of this lowering of blank Thimble Intial Wt Cause of Dessication = Approx 500 micro gram

 Fig: Exposed Thimble Wt after one hr of Desiccation (Wt: 1.865720 gm)	 Fig: Exposed Thimble Wt after 4 hr of Desiccation (Wt: 1.864400 gm)	 Fig: Exposed Thimble Wt after (one day) Desiccation (Wt: 1.864340 gm)	For Exposed Thimble Wt Diff. = 1. 865720 - 1. 864340 = 0.00138 gm Or = 1.38 mg = Approx 1.4 mg Or = 1400 micro gram -> Maximum contribution of this lowering of exposed Thimble Final Wt Cause of Dessication = 1500 micro gram

Fig : Blank & Exposed Thimble weight after one & 4 hour of desiccation and four hour desiccation respectively.

डेसीकेशन टाइम के साथ–साथ ब्लैक थिंबल के भार में होने वाला मैक्सिमम विचलन 500 माइक्रोग्राम तक हो सकता है। सोर्स एमिशन मॉनिटरिंग में प्रयुक्त किए जाने वाले ग्लास फाइबर से बने हुए ब्लैंक थिंबल का भार लगभग 1.5 ग्राम से अधिक होता है अर्थात यह पीएम2.5 के टेफलॉन फिल्टर पेपर जिसका कि वेट पॉइंट 15 ग्राम होता है, से 10 गुना अधिक भारी होता है। अतः भार के प्रोपोर्शनल बढ़ने वाली ग्रेवीमेट्रिक भार में डेविएशन / अनसर्टेंटी में पीएम2.5 की तुलना में 10 गुना ज्यादा होगी। हमने देखा कि पीएम2.5 और TSS फिल्टर पेपर के डेसीकेशन टाइम के साथ–साथ भार में हुई कमी लगभग अधिकतम 50 माइक्रोग्राम थी। अतः डिसेकेशन टाइम के थिंबल में होने वाली अधिकतम त्रुटि उसके 10 गुना यानी 500 माइक्रोग्राम तक होनी चाहिए। उपरोक्त प्रस्तुत संलग्न चित्रों एवं प्रयोग से भी साबित हो पाया। वही एक्सपोज्ड थिंबल का वेट अधिक होने के कारण भार में विचलन / कमी तीन गुना बढ़कर अधिकतम 1500 माइक्रोग्राम तक हो सकता है।

अब यदि हम उपर्युक्त उदाहरणों के अनुसार विविक्त कणों (Dust Content) पर गौर करते हैं तब वे निम्नानुसार होंगे:

Dessication time	Exposed Thimble Wt	Blank Thimble Wt	Difference/ Dust Content	Statistical calculation of replicates for SD
01 hr	1.865720	1.53977	0.32595	Standard Deviation
4 hr	1.86440	1.53935	0.32505	= 0.00052
24 hr	1.86434	1.53930	0.32504	

अर्थात विभिन्न डेसिकेशन टाइम के साथ–साथ भले ही भार में परिवर्तन 1500 माइक्रोग्राम तक हो रहा हो किंतु उनके संगत इनिशियल वेट से डिफरेंट निकालने के बाद जो डस्ट कंटेन आया, उसकी वैल्यू दशमलव के 3 डिजिटल तक से थी, जैसाकि ऊपर के उदाहरण में है, हम क्नेज Content 0.325 gm को कांस्टेंट रूप से पाते हैं, विचलन केवल अंतिम दो डिजिटल में अधिकतम 0.90 मिलीग्राम यानी 900 माइक्रो ग्राम तक मिलता है। थिंबल से स्टैक मॉनिटरिंग के दौरान सोर्स (जैसे की चिमनी) से कम से कम 600 लीटर से 900 लीटर के बीच में आयतन की वायु पास आउट की जाती है। अतः डेसिकेशन टाइम के साथ–साथ आर्द्रता की वजह से आने वाला भार में विचलन की अधिकतम वैल्यू 1500 / 600 = 2 माइक्रोग्राम / लीटर तक हो सकती है।

	सोर्स इम्मीशन के पार्टिकुलेट मैटर मेजरमेंट हेतु प्रयुक्त थिम्बल के भार मापन को सीधे बैलेंसिंग पेन पर रखने की बजाए कामर्सिअली अवेलेबल एक "क्लोज्ड ग्लास मेड कंटनेर जिसे थिम्बल – होल्डर" कहा जाता है, में रखकर लिए जाने पर थिम्बल वेट / भार की बैलेंस – डिस्प्ले पर प्रदर्शित वैल्यूज की अनस्टेब्लिटी को थोड़ा कम किया जा सका है।	

Fig : Wt of Same thimble in thimble holder and in Beaker

4.4) ग्रेवीमेट्रिक पैरामीटर्स पीएम 2.5 एवं TSS & फिल्टर पेपर्स के भार में डेसीकेशन टाइम के साथ–साथ भार विचलन :

Fig (J) : Initial wt of Blank TSS Filter Paper After four One Hour Desiccation { Wt : 89470 µg }	Fig (K): Wt of Blank TSS Filter Paper After four hour Desiccation { Wt : Wt : 89460 µg}	Fig (L): Wt of Exposed TSS Filter Paper After One hour Desiccation { Wt : 90020 µg }	Fig (M) : Wt of Exposed TSS filter Paper After 4 hour Desiccation { Wt : 90040µg }

Fig (N): Initial / First wt of Blank PM 2.5 filter Paper Before Desiccation { Wt : 146030 µg }	Fig (O): Initial wt of Blank PM PM 2.5 filter Paper After four One Hour Desiccation { Wt : 146020 µg }	Fig (P): Wt of Blank PM PM 2.5 filter Paper After four hour Desiccation { Wt : 146010 µg }	Fig(Q): Wt of Blank PM 2.5 filter Paper After 24 hr Desi. { Wt:145990 µg }
Fig ®: First wt of Exposed PM 2.5 filter Paper Before Desiccation { Wt : 385560 µg }	Fig (S): Wt of Exposed PM 2.5 filter Paper After One hour Desiccation { Wt : 385510 µg }	Fig (T): Wt of Exposed PM 2.5 filter Paper After 4 hour Desiccation { Wt : 385510 µg }	Fig (U): Wt of Exposed PM 2.5 filter Paper After 24 hour Desiccation { Wt : 385510 µg

Fig .(N) to (U) : PM 2.5 Filter Blank & Exposed Paper Weight Direst, After One hour , Four & 24 hour desiccation respectively .

पीएम2.5 फिल्टर पेपर्स को यदि उनके मॉनिटरिंग स्टेशन से लाने के बाद यदि न्यूनतम 1 घंटे के समय अवधि के लिए भी प्रॉपर डेसीकेट कर दिया जाए, तो उसके कुल भार में अधिकतम 50 माइक्रोग्राम तक हो सकने वाले विचलन को कम किया जा सका। {कृपया देखें संलग्न चित्र क्र. (J & K), (L& M), (O, P & Q) एवं (S, T &U)}

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि पीएम2.5 एवं TSS – फिल्टर पेपर्स के भार में डेसीकेशन टाइम के साथ–साथ होने वाला परिवर्तन बहुत नेगलिजिबल है अर्थात 1 घंटे के डेसीकेशन टाइम के बाद जो भार प्राप्त हो रहा था वही 4 घंटे के डेसीकेशन टाइम के पश्चात, 8 घंटे के डेसीकेशन टाइम के पश्चात् यहां तक कि एक दिन के या उसके बाद भी TSS – फिल्टर पेपर्स एवम

पीएम 2.5 फिल्टर पेपर्स का भार मापन किया जाए सभी में दशमलव के चार स्थान तक एक समान भार बिना किसी त्रुटि के पाया जा सकता है। दशमलव के पांचवें स्थान में होने वाला विचलन भी प्लस माइनस 0.00002 से अधिक नहीं होगा। यानी किसी पीएम 2.5 फिल्टर पेपर एवं TSS – फिल्टर पेपर्स के भार मापन में डेसिकेशन–टाइम से उत्पन्न अधिकतम विचलन कुल 20 माइक्रोग्राम तक का पाया गया। {कृपया देखे संलग्न चित्र क्र. (J & K)] (L& M)] (O] P & Q) एवं (S] T &U)}

उपरोक्त ''भार का डेसीकेशन टाइम के साथ विचलन / डेविएशन'' के प्रयोग से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ग्रेवीमेट्रिक – विश्लेषण में प्रयुक्त संबंधित बीकर, थिंबल, फिल्टर पेपर्स, का इनिशियल वेट का 4 घंटे डेसीकेशन के बाद के आंकड़े भी अगर हमारे पास हो तो उनसे 4 घंटे बाद के फाइनल वेट का प्रयोग करके जो डाटा कैलकुलेट किया जाएगा वह ठीक पहले परिणाम का आइडेंटिकल रेप्लिकेट्स होगा। किसी भी बीकर, फिल्टर पेपर, थिंबल आदि का डेसीकेशन टाइम बढ़ाने के साथ–साथ उनके संगत भार के अंतिम डिजिट्स में क्रमशः निश्चित क्रम में विचलन / डेविएशन होती है। यदि किसी भी थिंबल, फिल्टर पेपर का प्रारंभिक भार भी उतने ही डेसीकेशन टाइम के साथ दो बार या उससे अधिक बार ले लिया जाए तो सैंपलिंग उपरांत उतने ही डेसीकेशन – टाइम के बाद प्राप्त होने वाली वैल्यू के कैलकुलेशन से जो रिप्लिकेटेड प्राप्त होंगे उनके स्टैटिकल डाटा कैलकुलेशन से किसी भी ग्रेवीमेट्रिक – विश्लेषण में प्रयुक्त पर्टिकुलर सैंपल में उत्पन्न होने वाली मॉइश्चर ट्रैप, भार मापन / वेइंग एवं पार्टिकल लोस्स की वजह से उत्पन्न रैंडम ऐरर को मिनिमाइज किया जा सकता है।

*****

प्रदूषण

आकाश गुलशन
डी.ई.ओ. अनुभाग साइट्स
वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो, मुख्यालय

प्रदूषण एक वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दा है जो पारिस्थितिकी तंत्र और मानव समाज दोनों की भलाई के लिए खतरा पैदा करता है। यह पर्यावरण में हानिकारक पदार्थों या प्रदूषकों के प्रवेश को संदर्भित करता है, जिसके परिणामस्वरूप जीवित जीवों और प्राकृतिक संसाधनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। प्रदूषण विभिन्न रूपों में मौजूद है, जिनमें वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण शामिल हैं। प्रदूषण के प्रत्येक रूप के अपने कारण, परिणाम और संभावित समाधान होते हैं। प्रदूषण को समझना और उसका समाधान करना हमारे ग्रह के संरक्षण और भावी पीढ़ियों के स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है।

वायु प्रदूषण :

वायु प्रदूषण, प्रदूषण के सबसे गंभीर और व्यापक रूपों में से एक है। यह तब होता है जब हानिकारक गैसें, कणिकीय पदार्थ और प्रदूषक तत्व वायुमंडल में छोड़े जाते हैं। वायु प्रदूषण के मुख्य स्रोतों में औद्योगिक

गतिविधियाँ, परिवहन, बिजली संयंत्र और जीवाश्म ईंधन जलाना शामिल हैं। कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और कणिका तत्व (Particulate Matter) जैसे प्रदूषक स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डाल सकते हैं। प्रदूषित हवा के लंबे समय तक संपर्क में रहने से श्वसन रोग, हृदय संबंधी समस्याएं, एलर्जी और यहां तक कि समय से पहले मौत भी हो सकती है। वायु प्रदूषण ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में वृद्धि और ओजोन परत को कम करके जलवायु परिवर्तन में भी योगदान देता है।

जल प्रदूषण :

जल प्रदूषण एक और महत्वपूर्ण पर्यावरणीय मुद्दा है, जो नदियों, झीलों और महासागरों जैसे जल निकायों को प्रभावित करता है। यह तब होता है जब औद्योगिक अपशिष्ट, मल (सीवेज) कृषि अपवाह और रसायनों सहित प्रदूषक जल स्रोतों को दूषित करते हैं। जल प्रदूषकों में भारी धातुएँ, कीटनाशक, उर्वरक, तेल रिसाव और सूक्ष्मजीवी रोगजनक शामिल हैं। जल

प्रदूषण न केवल जलीय पारिस्थितिकी तंत्र और वन्य जीवन को नुकसान पहुंचाता है बल्कि मनुष्यों के स्वास्थ्य के लिए भी गंभीर खतरा पैदा करता है। प्रदूषित पानी का सेवन या उपयोग करने से हैजा, पेचिश और गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल बीमारियां जैसी जलजनित बीमारियाँ हो सकती हैं। जल निकायों की रक्षा करना और सभी के लिए स्वच्छ और सुरक्षित पेयजल तक पहुंच सुनिश्चित करना आवश्यक है।

मिट्टी का प्रदूषण :

मृदा प्रदूषण, जिसे भूमि प्रदूषण भी कहा जाता है, हानिकारक पदार्थों या विषाक्त पदार्थों द्वारा मिट्टी के प्रदूषण को संदर्भित करता है। यह औद्योगिक गतिविधियों, अनुचित अपशिष्ट निपटान, कीटनाशकों और उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग और आकस्मिक फैलाव के कारण होता है। मृदा प्रदूषकों में भारी धातुएँ, औद्योगिक रसायन, रेडियोधर्मी पदार्थ और कृषि रसायन शामिल हैं। मृदा प्रदूषण मिट्टी की उर्वरता को प्रभावित करता है, फसल की पैदावार कम करता है और पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को बाधित करता है। ये प्रदूषक खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर सकते हैं, जिससे मानव और पशु स्वास्थ्य खतरे में पड़ सकता है। मृदा प्रदूषण को रोकने और कम करने के लिए मृदा संरक्षण प्रथाएं, जिम्मेदार अपशिष्ट प्रबंधन और संधारणीय कृषि पद्धतियां महत्वपूर्ण हैं।

ध्वनि प्रदूषण :

ध्वनि प्रदूषण को अक्सर नजर–अंदाज कर दिया जाता है लेकिन इसका मानव कल्याण और वन्य जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। यह अत्यधिक शोर के स्तर को संदर्भित करता है जो व्यक्तियों और पारिस्थितिकी तंत्र की शांति को बाधित करता है। ध्वनि प्रदूषण के स्रोतों में परिवहन, निर्माण गतिविधियाँ, औद्योगिक मशीनरी और शहरीकरण शामिल हैं। उच्च स्तर के शोर के लंबे समय तक संपर्क में रहने से तनाव, सुनने की क्षमता में कमी, नींद में खलल और अन्य स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं। ध्वनि प्रदूषण प्राकृतिक आवासों को भी बाधित करता है, जिससे वन्यजीवों के व्यवहार और संचार पद्धति (Pattern) प्रभावित होते हैं। ध्वनि प्रदूषण को कम करने के लिए शोर नियंत्रण उपायों को लागू करने, इमारतों में ध्वनि रोधन (sound Insulation) को बढ़ावा देने और शहरी नियोजन में शोर में कमी पर विचार करने की आवश्यकता है।

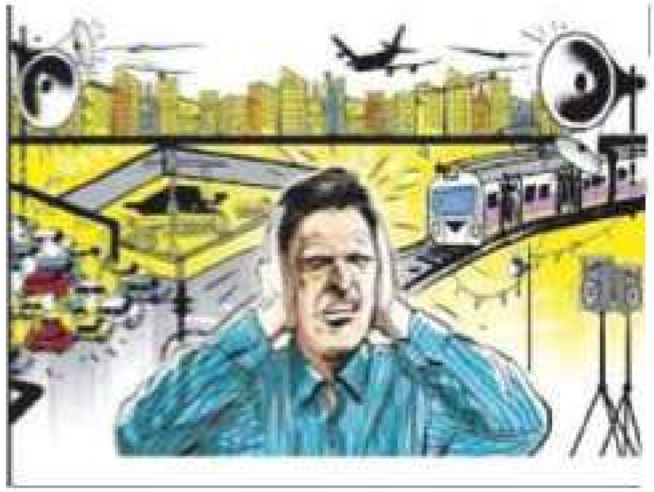

प्रदूषण के परिणाम :

प्रदूषण का पर्यावरण और मानव समाज दोनों पर दूरगामी परिणाम होता है। यह पारिस्थितिकी तंत्र को बाधित करता है, जैव विविधता में गिरावट लाता है और प्राकृतिक संसाधनों को नुकसान पहुंचाता है। वायु प्रदूषण न केवल मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करता है बल्कि जलवायु परिवर्तन, भूमण्डलीकरण (Global Warming) और ओजोन परत की कमी में भी योगदान देता है। जल प्रदूषण जलीय जीवन और मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा करता है, स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता को प्रभावित करता है और पारिस्थितिकी

तंत्र को खतरे में डालता है। मृदा प्रदूषण मिट्टी की उर्वरता को कम करता है, फसल उत्पादकता को प्रभावित करता है और खाद्य श्रृंखला को दूषित करता है। ध्वनि प्रदूषण मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करता है, तनाव, नींद में खलल और श्रवण हानि का कारण बनता है जबकि वन्यजीवों के व्यवहार में बाधा उत्पन्न करता है।

प्रदूषण का समाधानः

प्रदूषण से निपटने के लिए सरकारों, उद्योगों, समुदायों और व्यक्तियों के सामूहिक प्रयासों और सक्रिय उपायों की आवश्यकता है। उत्सर्जन को सीमित करने, औद्योगिक अपशिष्ट निपटान को नियंत्रित करने और संधारणीय प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिए सख्त पर्यावरणीय नियम और प्रवर्तन आवश्यक हैं। सरकारों को नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों में निवेश को प्राथमिकता देनी चाहिए, ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देना चाहिए और स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के उपयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए। उद्योगों को स्वच्छ उत्पादन प्रक्रियाएं अपनानी होंगी, अपशिष्ट प्रबंधन में सुधार करना होगा और अपने कार्बन पदचिह्न को कम करना होगा।

प्रदूषण से निपटने में व्यक्ति भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हम जिम्मेदार उपभोग का अभ्यास करके, संसाधनों का संरक्षण करके, अपशिष्ट को कम करके और पर्यावरण–अनुकूल आदतों को अपनाकर बदलाव ला सकते हैं। पुनर्चक्रण, जल संरक्षण, ऊर्जा–कुशल उपकरणों का उपयोग और संधारणीय परिवहन का विकल्प चुनने जैसी सरल गतिविधियाँ प्रदूषण के स्तर को कम करने में योगदान करती हैं। प्रदूषण से निपटने के लिए शिक्षा और जागरूकता महत्वपूर्ण है। प्रदूषण के कारणों, प्रभावों और निवारक उपायों के बारे में जनता को शिक्षित करना जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा दे सकता है और सकारात्मक कार्रवाई के लिए प्रेरित कर सकता है। स्कूलों में पर्यावरण शिक्षा को बढ़ावा देना, जागरूकता अभियान आयोजित करना और समुदायों को स्थायी पहल में शामिल करना आवश्यक है।

निष्कर्षः प्रदूषण पर्यावरण, मानव स्वास्थ्य और समग्र कल्याण के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा है। वायु, जल, मिट्टी और ध्वनि प्रदूषण सहित प्रदूषण के विभिन्न रूपों का पारिस्थितिकी तंत्र और समाज पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। हालाँकि, सामूहिक कार्रवाई, कड़े नियमों, संधारणीय प्रथाओं और व्यक्तिगत जिम्मेदारी के माध्यम से, हम प्रदूषण के प्रभाव को कम कर सकते हैं। पर्यावरण की सुरक्षा को प्राथमिकता देकर, सतत विकास को बढ़ावा देकर और पर्यावरण–अनुकूल जीवन शैली अपनाकर, हम वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक स्वच्छ और स्वस्थ ग्रह की दिशा में काम कर सकते हैं।

*****

धरती की व्यथा

आशा.एस.
अनुभाग अधिकारी
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय,
क्षेत्रीय कार्यालय, बेंगलूरु

भूमंडलीय ऊष्णीकरण से थरथराती धरती,
ग्रीन हाउस गैसों से बढ़ रही विपत्ति,
वायुमंडल हो रहा सारा ही विनाशकारी,
ग्लेशियर पिघल रहे व्याकुल है धरती।

उथल–पुथल है भीतर बतलाती धरती,
कहीं बाढ़ कहीं सूखा तो कहीं भूकंप तबाही मचाती,
खून के आंसू बहा रही है धरती,
जीने दो मुझे भी पुकारती धरती।

मानव ही है जो धरती पर कर रहा अत्याचार,
जुर्म करे कोई पर भुगत रही है धरती,
सभी की चाहत है खुशहाल धरती,
प्रकृति एवं पर्यावरण को बचा लो समझाती धरती।

वन्य प्राणियों की आश्रयदाता है धरती,
पृथ्वी का आभूषण है वृक्ष एवं वनस्पति,
इस अमूल्य धरोहर का संरक्षण हम सबका दायित्व,
प्रकृतिः रक्षति रक्षिता इस सत्य वचन से बचाएं धरती।

*****

एक नया जीवन या एक अंत

एक नया जीवन या एक अंत

करन कुमार
स्टेनोग्राफर–डी.
पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, नई दिल्ली
karankumar.01@gov.in

प्रकृति एक शब्द है, जो उस स्थान को परिभाषित करता है, जहां आप बैठते हैं, जहां पक्षी रहते हैं, जहां पानी बहता है, लेकिन अब 2024 है, जहां प्रकृति पर्यावरण की शुद्धता को परिभाषित नहीं करती है। बल्कि यह मानव की क्रूरता को परिभाषित करती है।

चलिए आज हम चलते हैं एक ऐसे देश में जहां आप आपके आस–पास के जीवन के साथ कुछ अलग करेंगे। ये कहानी है उस वक्त की जब जीवन जल से था, जब मानव संसाधन से ज्यादा पर्यावरण पर निर्भर था। वो देश खुशियों का था जब धरती पर जीवन और आसमान में सुंदर चहल पहल थी। वो दौर उन खुशियों का था, आसमान के परिंदों का था, खुले मैदान का था, रेस लगाते घोड़े थे, जहां जंगल में शिकारी कम, खुले शेर ज्यादा थे। एक ऐसा देश जहां इंसान इंसानियत को महत्व देता था। उस देश की बात ही निराली थी, उस देश में हर वक्त एक भरी प्याली थी वो प्याली सबके लिए सांझी थी, उसमें सबने मिलकर खुशियां डाली थी, वो खुशियां सुकून की थी, खुले आसमान की थी, स्वच्छ हवा और साफ पानी की थी। खेलते थे जहां नन्हें कदम आंगन में, ये बातें उस देश निराले की थीं।

अरे! अरे! ये बातें सारी आपके सपनों के उस सुंदर देश की थी जहां रहने की इच्छा सबकी है, पर कोशिश किसी की नहीं,

"ना होगी मेहनत इंसान से उस जमाने को लाने की,
ना करेगा कोशिश ये शहर सुंदर बनाने की,
चलो मान लिया कि एक दुनिया नई बनाना चाहता है,
पर क्यूं इंसान हर चीज मिटाना चाहता है,
एक रोज जब वो अपनी नई दुनियां सजाएगा,
अपने सपनों का शहर बनाएगा,
पर उसमें उसको कोई पेड़ नजर नहीं आएगा,
क्योंकि उनसे ही तो वो शहर बनाएगा।

इंसान हर रोज एक नया तरीका सीखकर आता है, फिर उन तरीकों को अपनाता है, उसमें ही खो जाता है। भूल जाता है कि ये संसार उसका नहीं है, इस जमीन का बंटवारा सिर्फ इंसानों में नहीं हुआ, इस बंटवारे के हिस्सेदार सारे वो जीव हैं जो इस जमीन पर रहते हैं, वो सारे पेड़ हैं जो हमें साँस लेने का मौका देते हैं, वो जल है जो हमारे जीवन का आधार है, वो पहाड़ हैं जो हमें आसमान को छूने की हिम्मत देते हैं। ये लोग बात करते हैं कि वे सुधार करेंगे, लेकिन सोच उनकी उसी तरह नहीं होती। वे कहते हैं कि वे पर्यावरणीय स्थिरता पर काम करेंगे, लेकिन इस शब्द का उनके लिए कोई मायने नहीं होता।

एक रुख करते हैं आज के इंसान की नई सोच पर, देखें क्या–क्या कर रहा है इंसान। एक नया रास्ता आजमाया जा रहा है, इंसान की तरफ से धरती पर पेड़ लगाया जा रहा है, पर उन पेड़ों को लगाने से ज्यादा

क्यूं इन्हें काटा जा रहा है। एक कहानी है, जब पीपल खड़ा था आंगन में तो उसने अमरूद से बोला मैं आज इनका सहारा हूं, क्या इंसान हमेशा मुझे रखेगा। अमरूद बोला एक बार भरोसा करके देखो क्या पता इंसान उसका मान रख ले अपने आंगन में तुम्हारे साथ तुम्हारे जैसे कई प्यारे भाईजान रख ले। पर उस दिन पीपल का भरोसा टूट गया, इंसान कुल्हाड़ी लेकर उसे तोड़ गया। इंसान बोला माफ करना पीपल पर मेरी भी मजबूरी है महंगाई की इस दुनिया में एक दुकान अपनी बहुत जरूरी है। उस दिन पीपल और अमरूद बहुत रोए। अब शायद उन्हें इंसान पर फिर कभी भरोसा न होए। पीपल ने अपनी जान गवा दी, इंसान ने अपनी दुकान बना ली। अब दुकान भी खूब चलती है पर इंसान अस्थमा का रोगी है। एक रात इंसान ने विचार लगाया उसने अपने घर पौधे वाले को बुलाया, उसने आंगन में 3 पौधों को लगाया, पर क्या फायदा, उनके बड़े होने तक इंसान कहां जी पाया। अब उसके बच्चों ने भी वही विचार दोहराया, पेड़ को रुलाकर एक नया घर बनाया, इस बार तो उन्होंने नया खेल रचाया, घर में अपने ए.सी भी लगवाया, अपनी जरूरत से बढ़कर उन्होंने समान मंगवाया अपने हँसते आंगन को सूना संसार बनाया। हर पीढ़ी इंसान की एक ही बात दोहराती है पहले पेड़ काटकर फिर पेड़ लगाती है।

इंसान ने एक नया चेहरा दिखाया सब ठीक करेगा बोलकर एक नया मुहिम चलाया। इस मुहिम को इंसान ने कुछ ऐसा बनाया वहनीयता (Sustainability) बोलकर इंसान ने फिर अपना रूप दिखाया। वहनीयता का अर्थ इंसान ने धरती से लेकर धरती को लौटाना बताया, और संसार में सबको इसे धरती का तोहफा समझाया।

अंत में सिर्फ इतना कहेंगे, आखिर कब तक हम यह खेल खेलेंगे। हर बात का मतलब तो हम गलत ही समझते हैं फिर कैसे हम अपनी मनमर्जी करते हैं, रोज एक नया तरीका अपनाते हैं पर धरती को तोहफे के रूप में खूब सारे पेड़ लगाते हैं। एक महीने तक बिना कोई पेड़ काटे रोज पेड़ लगाते हैं फिर देखते हैं आखिर कैसे न हम उस सपनों के सुंदर शहर में लौट जाते हैं। सपनों की दुनिया में सुंदर मौसम और खूब सारे पेड़ होंगे, हम भी सुकून से रहें और हमारे पेड़ भी हँस रहें होंगे, एक रोज फिर से पीपल हम पर भरोसा करेगा फिर कभी पीपल हम पर शक नहीं करेगा।

उस दिन ये देश इतना खुश होगा सुकून की छाया और हँसी का आलम होगा।

मैं कहानी लिखूं नए दौर की,
जहां मानव बना शिकार है,
मानवता का धर्म भूला,
इंसान बड़ा हैवान है,
हैवानों की नगरी में देखो कौन आया है,
इनका मालिक आज एक नया तरीका लाया है,
नए तरीके को ये वहनीयता कहते हैं,
इसके नाम पर ये धरती की कीमत लगाते हैं,
कहते हैं कि नया रूप देंगे इस संसार को,

आखिर क्या करोगे बता दो,
हम जानते हैं तुम हैवान हो,
सतत विकास के नाम पर तो इन्होंने पूरा जीवन ही पलट दिया,
मानो दीप जलाकर उसको धरती पर उलट दिया,
कहते हैं कि हम धरती से लेंगे फिर उसको वापस देंगे,
विकास के साथ धरती का ध्यान रखेंगे,
अरे! कैसी बड़ी–बड़ी बातें बनती हैं,
चलो देखें ये धरती को उसका रूप कैसे लौटाते हैं,
हर बात को ये एक नया रूप दिखाते हैं,
वहनीयता को ये अपने ही रूप में बनाकर बताते हैं,
कहते हैं एक हाथ से लेकर दूजे हाथ को देंगे,
पर क्या सच है ये इसमें कामयाब होंगे,
पहले देने के बाद कुछ लेने की इच्छा रखना,
आदान–प्रदान में अपना पूरा हिसाब रखना,
अगर सतत विकास का असली मतलब समझ जाओ तभी आगे बढ़ना,
नहीं तो मेरी माँ है धरती, इसको और खराब मत करना।

*****

प्रदूषण की समस्या के कारण एवं रोकने हेतु सुझाव

अनिल कुमार
सलाहकार (राजभाषा हिंदी)
वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो, त्रिकूट–1,
द्वितीय तल, भीकाजी कॉमा प्लेस,
नई दिल्ली–110066

प्रदूषण से तात्पर्य पर्यावरण में किसी भी पदार्थ की असंतुलित मात्रा में उपस्थिति से है। प्रकृति एवं मनुष्य का अटूट संबंध है। प्रकृति ने मानव के सुखी समृद्ध जीवन के लिए अनगनित सुविधाएँ प्रदान की हैं। मनुष्य का सुखी जीवन संतुलित प्राकृतिक पर्यावरण पर निर्भर करता है। मानव की बढ़ती जनसंख्या के कारण प्राकृतिक संतुलन असंतुलित हो रहा है। मनुष्य की बढ़ती हुई आवश्यकताएं प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ रही हैं। पर्यावरण में दूषित तत्वों की मात्रा आवश्यकता से अधिक बढ़ जाती हैं और आवश्यक तत्वों की कमी हो जाती है तो पर्यावरण प्राणियों के लिए हानिकारक हो जाता है। अतः पर्यावरण का असंतुलन ही दूसरे अर्थ में प्रदूषण है।

आधुनिक मानव सभ्यता की बढ़ती आवश्यकताओं के कारण प्राकृतिक संतुलन बदल रहा है तथा प्रदूषण बढ़ रहा है। मानव की आवासीय, औद्योगिक नगरीकरण, कृषि उत्पादन बढ़ाने की समस्याओं ने प्रकृति, संतुलन को बिगाड़कर प्रदूषण को बढ़ाया है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई से वातावरण में आक्सीजन की कमी तथा कार्बन डाई–आक्साइड की वृद्धि हो गई है। इसी प्रकार कूड़ा–करकट इधर–उधर फैंकने से जलवायु, भूमि प्रदूषण को बढ़ावा मिला। जोर से संगीत सुनने, हॉर्न बजाने से ध्वनि प्रदूषण बढ़ा। इस प्रकार किसी भी प्रकार के प्रदूषण को बढ़ाने में कहीं न कहीं मनुष्य का ही हाथ रहा है।

जल सभी प्राणियों एवं पेड़–पौधों के लिए जीवनदायक तत्व है। इसमें अनेक कार्बनिक, अकार्बनिक खनिज तत्व एवं गैसें घुली होती है। ये तत्व जब असंतुलित मात्रा में जल में घुल जाते हैं तो जल प्रदूषित होकर हानिकारक हो जाता है। प्रदूषित जल से हैजा, टायफाइड, पीलिया, आंत्राशोथ आदि रोगों को बढ़ावा मिलता है।

वायुमंडल में भी आवश्यक गैसें एक निश्चित अनुपात में मिश्रित हैं; परन्तु वायुमंडल में यदि आक्सीजन की मात्रा कम हो जाए और कार्बन डाई–आक्साइड, सल्फर डाई–आक्साइड, कार्बन मोनोआक्साइड की मात्रा बढ़ जाए तो वायु प्रदूषण बढ़ने लगता है। पेट्रोल और डीजल का धुआं वायु प्रदूषण को फैलाता है। अतः इन ईंधनों के स्थान पर सी.एन.जी. के प्रयोग को बढ़ाया जा रहा है। भारत में सामान्य परिस्थिति में 33 प्रतिशत वन होने आवश्यक हैं परन्तु इनकी प्रतिशतता केवल 19 प्रतिशत है। अतः वायु प्रदूषण की वृद्धि हो रही है। इसी प्रकार ध्वनि एवं भूमि प्रदूषण भी हमारे लिए हानिकारक है।

इसलिए व्यक्ति को गंभीर होकर यातायात के प्रदूषण को रोकना होगा, वृक्षारोपण बढ़ाकर वन संवर्धन करना होगा। ऊँची आवाज वाले वाहनों पर रोक लगानी होगी, पेयजल शुद्ध करना होगा, रासायनिक विस्फोट को रोकना होगा तथा अन्य उपाय करके मानव जीवन को प्रदूषण मुक्त बनाना होगा तभी मानव जीवन सुखमय हो सकता है।

प्रदूषण के कारण :

वाहनों का धुंआ, कोयला और कचरा जलाने से निकलने वाला धुंआ, पराली का धुंआ, सर्दी से बचने और ईंधन के रूप में जीवाश्म ईंधन जलाना, धूल इत्यादि प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं। भारत विश्व में तीसरा सबसे प्रदूषित देश है, बांग्लादेश पहले और पाकिस्तान दूसरे नंबर पर है।

1. बेकार पदार्थों की बढ़ती मात्रा और उचित निपटान के विकल्पों की कमी के कारण समस्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। कारखानों और घरों से बेकार उत्पादों को खुले में रखा और जलाया जाता है जिससे भूमि, वायु, जल, ध्वनि संबंधी प्रदूषण होता है। प्रदूषण विभिन्न मानवीय गतिविधियों के कारण और प्राकृतिक कारणों से भी होता है।

2. कीटनाशक का बढ़ता उपयोग, औद्योगिक और कृषि के बेकार पदार्थों के निपटान के लिए विकल्पों की कमी, वनों की कटाई, प्राकृतिक संतुलन का बिगड़ना भी मुख्य कारण है। वृक्षों को अंधाधुंध काटने से मौसम का चक्र बिगड़ा है। घनी आबादी वाले क्षेत्रों में हरियाली नहीं होने से भी प्रदूषण बढ़ रहा है।

3. सड़क की धूल, खुले में कूड़ा जलाना आदि जैसे अन्य कारक भी वायु प्रदूषण के कारण हैं।

4. अस्पतालों में श्वसन संबंधी बीमारियों से सबसे अधिक पीड़ित बच्चों और बुजुर्गों की भर्ती में वृद्धि की नियमित रिपोर्टें हैं।

5. वर्षभर यह स्थिति इतनी चिंताजनक है कि किसी सार्वजनिक स्वास्थ्य अस्पताल से कम नहीं है। यह दिल्ली के लोगों के जीवन के बुनियादी प्राकृतिक और भौगोलिक अधिकार का उल्लंघन है।

6. भारत आज वैश्विक मंच पर बढ़ रहा है, जबकि इसकी राष्ट्रीय राजधानी खराब गुणवत्ता से जूझ रही है।

प्रदूषण के स्रोत :

1. घरेलू बेकार पदार्थ, जमा हुआ पानी, कूलरों में पड़ा पानी, पौधों में जमा पानी।

2. रासायनिक पदार्थ जैसे–डिटर्जेंटस, हाइड्रोजन, साबुन, औद्योगिक एवं खनन के बेकार पदार्थ प्लास्टिक, गैसें जैसे–कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, अमोनिया आदि गंदा पानी, पेस्टीसाइड, ध्वनि, ऊष्मा, जनसंख्या इत्यादि को प्रदूषण का मुख्य स्रोत माना जाता है।

प्रदूषण को रोकने के उपाय :

देश में बढ़ते प्रदूषण पर रोकथाम के तमाम उपायों के बाद भी इस बार सर्दियों में दिल्ली और चंडीगढ़ के प्रदूषण स्तर में सुधार होता नहीं दिखा। दोनों ही शहरों में प्रदूषण स्तर में लगातार वृद्धि दर्ज की गई है। हालाँकि देश में वाराणसी ही एक मात्र ऐसा शहर है, जिसने लगातार सर्दियों के दो सीजन में पीएम2.5 के राष्ट्रीय मानकों को पूरा किया है। देश के अन्य चार शहरी राज्यों पटना, मुंबई, कोलकाता व लखनऊ में भी पहले की तुलना में पीएम 2.5 का स्तर घटा है। प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण है जनसंख्या का तेजी से बढ़ाना इन सभी कारणों की वजह से पिछले कई सालों में प्रदूषण का स्तर काफी बढ़ गया है। यह वायु, जल, मृदा, ध्वनि आदि सभी प्रकार के प्रदूषण को बढ़ाने के लिए जिम्मेदार है। प्रदूषण से हमें भूकंप, बाढ़, तूफान आदि जैसी प्राकृतिक आपदाओं का सामना भी करना पड़ रहा है। प्रदूषण को कम करने के लिए हमें ज्यादा पेड़ लगाने होंगे और अपने आस–पास साफ–सफाई रखनी होगी। इन्हीं छोटे–छोटे प्रयासों से ही हम प्रदूषण को कम करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे

सकते हैं।

1. बायोडिग्रेडेबल उत्पादों का उपयोग करें क्योंकि बायोडिग्रेडेबल कचरे का निपटान करना आसान है।
2. पॉली बैग और प्लास्टिक के बर्तनों और वस्तुओं के उपयोग से बचें क्योंकि किसी भी रूप में प्लास्टिक का निपटान करना मुश्किल है।
3. कागज या कपड़े की थैलियों का उपयोग करें।
4. अपने आसपास की जगहों को साफ–सुथरा रखें।
5. कीटनाशकों और उर्वरकों का सीमित उपयोग करें।
6. प्रकाश का अत्यधिक और जरुरत से ज्यादा उपयोग न करें।
7. यदि हम बेहतर जीवन जीना चाहते हैं और वातावरण में शुद्धता चाहते हैं तो वनों को संरक्षित करना होगा।
8. प्रदूषण हानि पहुंचाता है और अपने दोस्तों और रिश्तेदारों को इस बारे में जागरूक करना चाहिए।
9. प्रदूषण कम करने के लिए सड़कों पर वाहनों का दबाव कम करना जरुरी है।
10. सार्वजनिक परिवहन साधन बसों की संख्या बढ़े, मेट्रो की आवृत्ति बढ़ाने पर अत्यधिक जोर देना चाहिए।
11. सिविक एजेंसियों का कूड़ा प्रबंधन इतना मजबूत हो कि कूड़ा जलाने पर खुद ही अंकुश लग जाए।

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के लिए यह चिंता का विषय है। प्रदूषण कम करने के लिए किए जा रहे प्रयासों से खतरनाक, गंभीर और बेहद खराब गुणवत्ता वाले दिनों की संख्या पहले के मुकाबले कम हुई, फिर भी परिणाम ज्यादा उत्साहजनक नहीं हैं। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर) में प्रदूषण के कई कारण हैं। भौगोलिक व मौसमी परिस्थिति भी पश्चिमी देशों की तुलना में बिल्कुल भिन्न है। इसलिए राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में प्रदूषण को कम करने की चुनौतियां भी ज्यादा हैं।

प्रदूषण के खिलाफ जन जागरूकता अभियान खड़ा कर सकते हैं। प्रदूषण की रोकथाम के लिए कारगर नीति तैयार करने के लिए संसद में आवाज बुलंद कर सकते हैं। साथ ही यह भी ध्यान रखने की जरुरत है कि प्रदूषण कुछ दिनों में या दो–चार वर्षों में कम नहीं होगा। अमेरिका में भी जब ज्यादातर पॉवर प्लांट कोयले पर निर्भर थे, औद्योगिक इकाइयों में स्वच्छ ईंधन इस्तेमाल नहीं होता था, तब वहां भी प्रदूषण कम करने में करीब चार दशक का समय लगा। स्वास्थ्य पर प्रदूषण का असर एक दिन में नहीं होता। यह शरीर को धीरे–धीरे नुकसान पहुंचता है। बच्चे और गर्भवती व बुजुर्ग सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। इसलिए प्रदूषण नियंत्रण बेहद आवश्यक है।

राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन :

राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन के अंतर्गत यमुना को तीन हिस्सों में वर्गीकृत किया गया है। यमुनोत्री से हथिनीकुंड बैराज तक बिना प्रदूषण वाला, हथिनीकुंड से पल्ला तक मध्यम स्तर का और उससे आगे यमुना का पानी बेहद प्रदूषित है। इससे यमुना किनारे उगाई जा रही सब्जियों का सेवन करने से याददाश्त संबंधी परेशानी से ही फेफड़े, मस्तिष्क और पेट के कैंसर सहित अन्य स्वास्थ्य संबंधित गंभीर परेशानी हो सकती है।

यमुना की गुणवत्ता को नुकसान होने के दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं। जैव–विविधता को नुकसान पहुंच रहा है। कभी इस नदी और इसके किनारों पर कई प्रकार की मछली, अन्य जीव–जंतु एवं पौधे मिले थे। प्रदूषण के कारण सब समाप्त हो गए। पारिस्थितिकी तंत्र नष्ट हो रहा है। आर्द्रता में कमी आ रही है। जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए नदी

को बचाना जरुरी है। इससे तापमान नियंत्रित रहेगा। जैव–विविधता पार्क सबसे आदर्श उपाय है। इससे नदी का जल, भूमि संरक्षित होगी। भूजल स्तर में सुधार होने से पेयजल संकट भी दूर होगा।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रदूषण मानव जीवन के लिए अत्यंत खतरनाक है जो हवा, पानी, धूल आदि के माध्यम से न केवल मनुष्य अपितु जीव–जंतुओं, पशु–पक्षियों, पेड़–पौधों और वनस्पतियों को भी सड़ा–गलाकर नष्ट कर देता है। आज प्रदूषण के कारण ही प्राणियों का अस्तित्व खतरे में है। यही कारण है कि बहुत से प्राणी, जीव–जंतु, पशु–पक्षी, वन्य प्राणी विलुप्त हो गए हैं। यदि इसी तरह से प्रदूषण फैलता रहा तो जीवन बहुत ही असंतुलित होगा। ऐसी परिस्थितियों से बचने के लिए हमें पर्यावरण संरक्षण की ओर कदम बढ़ाने होंगे। जीवन को आराम परस्त बनाने की बजाय उपयोगी बनाना होगा। प्रदूषण की समस्या के प्रति सम्पूर्ण मानव जाति को सजग रहना होगा तभी हम अपने जीवन में सुखी एवं समृद्ध रह सकते हैं।

*****

हिमाचल प्रदेश में जल–मौसमिक आपदाएँ: समस्या, प्रभाव, और संभावित समाधान

साक्षी ठाकुर, राकेश कुमार सिंह, रेनू लता
गोविंद बल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान,
हिमाचल क्षेत्रीय केंद्र मोहल, कुल्लू
हिमाचल प्रदेश –175126
ई–मेल : sakshi94184@gmail.com

परिचय :

पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र में विविध प्रकार के महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन शामिल हैं और यह पृथ्वी की पारिस्थितिकी और आर्थिक प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में सबसे प्रचलित पर्यावरणीय चुनौतियों में से कुछ में वनों की कटाई, भूस्खलन, मिट्टी का क्षरण, मरुस्थलीकरण और ग्लेशियर झील में बाढ़ (GLOF) शामिल हैं। अत्यंत मौसमीय घटनाएं पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील और दूर स्थित कमजोर पहाड़ी क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर विनाश का कारण बन रही है। हाल के दशकों में विश्व स्तर पर जल–मौसम संबंधी आपदाएँ बढ़ी हैं, जो जलवायु–संबंधी खतरों की बढ़ती गंभीरता के स्पष्ट संकेत प्रदान करती हैं। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के परिणामस्वरूप इन आपदाओं की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि होने की संभावना है। हिमाचल प्रदेश, उत्तर भारत में स्थित एक प्रमुख पर्यटन स्थल है, जहां प्राकृतिक सौंदर्य और वातावरण संबंधी स्थितियों की समृद्धता अद्वितीय है। हिमाचल प्रदेश विविध खतरे संभावित राज्यों में से एक है। यह भूकंपीय खतरा क्षेत्र मानचित्र के अनुसार जोन III और IV के अंतर्गत आता है। हिमाचल प्रदेश का हिमालयी क्षेत्र भूस्खलन, बादल फटने, सूखा और बाढ़ जैसी जल–मौसम संबंधी आपदाओं के लिए अतिसंवेदनशील है। राज्य लगभग हर साल प्राकृतिक आपदाओं, अभूतपूर्व सूखे, अत्यधिक बारिश, बर्फबारी और बादल फटने के कारण आई बाढ़ आदि से बड़े पैमाने पर नुकसान का सामना करता है। हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिले में ब्यास बेसिन ऐतिहासिक रूप से ऐसी आपदाओं के लिए संभावित खतरे वाला क्षेत्र रहा है। वर्ष 1965 के बाद से कुल्लू क्षेत्र में कम से कम 66 बार बाढ़ आई है।

प्रमुख कारण:

भूमि और समुद्र के तापमान में लगातार वृद्धि और हिमालय का खड़ा भू–भाग इस क्षेत्र को आकस्मिक बाढ़ और भूस्खलन के प्रति संवेदनशील बनाता है। वनों की कटाई और भूमि उपयोग भूमि आवरण में परिवर्तन (LULC) के कारण भूमि कटाव, वनस्पति आवरण नष्ट हो रहे हैं। भूस्खलन और अचानक बाढ़ का खतरा भी बढ़ गया है, जिसके परिणामस्वरूप हिमालय का नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र अस्थिर हो गया है। नदी तट का कटाव और नदी तलों में गाद जमा होना भी बाढ़ के सामान्य कारणों में से एक है। इसके अलावा, नदी के किनारों के भीतर नदी के तेज प्रवाह को रोकने की अपर्याप्त क्षमता भी बाढ़ का कारण है। शहरीकरण और वनों की कटाई जैसी मानवजनित घटनाएं भी स्थानीय मौसम के पैटर्न को बदल सकती हैं और कुछ क्षेत्रों में बादल फटने की तीव्रता और आवृत्ति में योगदान देती है: भारत में बढ़ती अत्यंत मौसमीय घटनाओं में जलवायु परिवर्तन की भूमिका हर गुजरते साल के साथ मजबूत होती जा रही है।

प्रभाव :

हिमाचल प्रदेश में जल–मौसमिक आपदाएँ अक्सर अप्रत्याशित और भयंकर प्रभाव डालती हैं। इन आपदाओं के प्रमुख प्रभावों में जीवन की हानि, संपत्ति का नुकसान, और इंफ्रास्ट्रक्चर के नुकसान होते हैं। जल–मौसमिक आपदाओं से उत्पन्न होने वाली बाढ़, भूकंप, बर्फबारी, भूस्खलन, और हिमस्खलन से जीवन और संपत्ति को खतरा होता है। इन आपदाओं के परिणामस्वरूप घरों, सड़कों, पुलों और जल संरचनाओं को नुकसान पहुंचता है, जिससे आम जनता की जिंदगी पर भारी प्रभाव पड़ता है। 24 जून, 2023 को मानसून की शुरुआत के बाद से राज्य में अचानक बाढ़ की कम से कम 29 घटनाएं दर्ज की गई। इनमें से 50% से अधिक घटनाएं 8–10 जुलाई के दौरान हुईं। बारिश के कारण हिमाचल की लगभग सभी प्रमुख नदियाँ उफान पर थीं। कुल्लू, मंडी और बिलासपुर जिलों से होकर गुजरने वाली ब्यास नदी ने पिछले सारे रिकॉर्ड तोड़ दिए। इन घटनाओं से राज्य को भारी नुकसान हुआ। राज्य आपातकालीन परिचालन केंद्र के अनुसार 217 मौतें और 10,000 करोड़ रुपये से अधिक का नुकसान होने का अनुमान है और इस बीच, 11,301 घर आंशिक या पूरी तरह से क्षतिग्रस्त हुए।

संभावित समाधान :

- मजबूत प्रारंभिक चेतावनी प्रणालियों के महत्व पर जोर दिया जाना चाहिए क्योंकि यह बादल फटने और भारी वर्षा जैसी अति मौसमीय घटनाओं की भविष्यवाणी कर सकते हैं। समय पर अलर्ट से लोगों को तैयारी करने और जगहें खाली करने में मदद मिल सकती है जिससे जान–माल का नुकसान कम हो सकता है।
- पर्यावरण, आपदा या सामाजिक हितकारी अध्ययन के निष्कर्ष/सिफारिशों को संबंधित जिला प्रशासन सहित ग्राम पंचायत स्तर और प्रभावित क्षेत्र तक पहुंचाना चाहिए।
- बाढ़ और भूस्खलन की संभावना वाले उच्च जोखिम वाले क्षेत्रों में निर्माण कार्यों को रोकने के लिए उचित भूमि उपयोग योजना आवश्यक है। कड़े जोनिंग नियम जीवन और संपत्ति को खतरे में डालने से बचाने में मदद कर सकते हैं।
- आपदाओं ने समुदाय–आधारित आपदा तैयारियों और प्रतिक्रिया योजनाओं के महत्व को दिखाया है। स्थानीय समुदायों को सुरक्षा उपायों, निकासी मार्गों और आपातकालीन प्रोटोकॉल के बारे में शिक्षित करने से कई लोगों की जान बचाई जा सकती है।
- विकास योजना में व्यापक आपदा और जलवायु जोखिम प्रबंधन को शामिल करना चाहिए। राष्ट्रीय अनुकूलन योजनाओं और आपदा जोखिम न्यूनीकरण योजनाओं में जोखिम–केंद्रित तरीकों तथा जलवायु संबंधी जानकारी का उपयोग करने की आवश्यकता है।

चित्र 1. कुल्लू घाटी में बादल फटने से हुई तबाही के बाद के प्रभाव

निष्कर्ष :

हिमाचल प्रदेश में जल–मौसमिक आपदाओं की वर्तमान स्थिति चिंताजनक है और इसके प्रभावों को समझना और समाधान ढूंढना महत्वपूर्ण है। इन घटनाओं ने जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभावों के प्रति एक चेतावनी के रूप में काम किया है। इन आपदाओं ने प्रभावी सरकारी प्रतिक्रिया और समन्वय तंत्र की आवश्यकता पर भी प्रकाश डाला है। त्वरित और अच्छी तरह से समन्वित कार्रवाई क्षति को कम कर सकती है तथा बचाव और राहत प्रयासों को भी सुविधाजनक बना सकती है। आपदा–संभावित क्षेत्रों में रहने से जुड़े जोखिमों के बारे में सार्वजनिक जागरूकता बढ़ाना भी महत्वपूर्ण है ताकि निवासियों को संभावित खतरों और तैयारियों के महत्व के बारे में सूचित किया जा सके और उन्हें आवश्यक सावधानी बरतने के लिए सशक्त बनाया जा सके। आपदाओं के प्रभाव को कम करने के लिए कठिन प्रयास करने की आवश्यकता है। बदलते जलवायु पैटर्न के अनुकूल रणनीति विकसित करना आवश्यक है। इसके लिए, हमें विज्ञान, तकनीक, और सामाजिक उपायों का उपयोग करना होगा ताकि हम संभावित समाधानों को प्राप्त कर सकें।

*****

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय में राजभाषा नीति का कार्यान्वयन

मंत्रालय के राजभाषा प्रभाग का कार्य भारत के संविधान, राजभाषा अधिनियम, 1963 (यथा संशोधित 1967), राजभाषा नियम, 1976 (यथा संशोधित 1987, 2007 एवं 2011), वार्षिक कार्यक्रम और राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा समय–समय पर जारी आदेशों में विहित संघ की राजभाषा नीति का समुचित अनुपालन सुनिश्चित करना है। इसके तहत मंत्रालय में महत्वपूर्ण दस्तावेजों का अनुवाद कार्य और राजभाषा नीति का कार्यान्वयन शामिल है।

- **हिंदी सलाहकार समिति की बैठक:** माननीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री और राज्य मंत्री की अध्यक्षता में मंत्रालय की पुनर्गठित हिंदी सलाहकार समिति की वर्ष 2023 में दिनांक 04.01.2023, 20.06.2023 और 20.12.2023 को 03 बैठकें आयोजित की गईं। बैठकों में माननीय सांसदों सहित समिति के गैर–सरकारी सदस्यों, मंत्रालय की सचिव महोदया, अन्य वरिष्ठ अधिकारियों, नियंत्रणाधीन कार्यालयों के प्रमुखों आदि ने भाग लिया। बैठकों के दौरान मंत्रालय और इसके नियंत्रणाधीन कार्यालयों में राजभाषा के रूप में हिंदी के प्रयोग से संबंधित कार्यों की समीक्षा की गई। माननीय मंत्री और राज्य मंत्री तथा उपस्थित गैर–सरकारी सदस्यों ने हिंदी के काम में सुधार लाने के लिए अपने बहुमूल्य सुझाव दिए।

वर्ष के दौरान आयोजित मंत्रालय की हिंदी सलाहकार समिति की बैठकें

- **राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें** : वर्ष 2024 की प्रथम छमाही के दौरान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दो तिमाही बैठकें आयोजित की गईं जिनमें मंत्रालय के प्रभागों/अनुभागों के साथ–साथ मंत्रालय के दिल्ली–एनसीआर स्थित अधीनस्थ कार्यालयों में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की स्थिति की समीक्षा की गई।
- **हिंदी कार्यशालाएं**: इस अवधि के दौरान मंत्रालय एवं इसके नियंत्रणाधीन कार्यालयों के अधिकारियों और कर्मचारियों को अपना शासकीय कार्य अधिकाधिक हिंदी में करने में समर्थ बनाने हेतु प्रशिक्षण देने के लिए 02 हिंदी कार्यशालाएं आयोजित की गईं।
- **निरीक्षण**: 01 जनवरी, 2024 से 30 जून, 2024 तक संसदीय राजभाषा समिति ने मंत्रालय के 04 नियंत्रणाधीन/अधीनस्थ कार्यालयों का राजभाषा संबंधी निरीक्षण किया। मंत्रालय के राजभाषा प्रभाग के अधिकारियों ने भी 07 क्षेत्रीय/अधीनस्थ कार्यालयों का राजभाषायी निरीक्षण किया है। इनके अलावा राजभाषा प्रभाग के अधिकारियों ने मंत्रालय के 14 प्रभागों/अनुभागों का राजभाषा संबंधी निरीक्षण किया।
- **हिंदी माह का आयोजन**: मंत्रालय में दिनांक 01.09.2023 से 30.09.2023 तक मंत्रालय, एनएईबी और सीसीयू के कार्मिकों के लिए संयुक्त रूप से हिंदी माह–2023 का आयोजन किया गया। इस दौरान कार्मिकों के लिए 07 हिंदी प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। प्रतियोगिताओं के विजेताओं और हिंदी में टिप्पण–आलेखन हेतु प्रोत्साहन योजना के विजेताओं को 22 नवम्बर, 2023 को एक समारोह में संयुक्त सचिव (प्रशासन/राजभाषा) द्वारा प्रशस्ति–पत्र प्रदान किए गए।

संयुक्त सचिव (राजभाषा प्रभारी) से पुरस्कार प्राप्त करते हुए हिंदी माह, 2023 के पुरस्कार विजेता

- **पर्यावरण पत्रिका का प्रकाशनः** मंत्रालय की 'पर्यावरण पत्रिका' के 71वें अंक का विमोचन दिनांक 22 नवम्बर, 2023 को संयुक्त सचिव (राजभाषा प्रभारी) द्वारा हिंदी माह पुरस्कार वितरण समारोह के दौरान किया गया। मंत्रालय की हिंदी सलाहकार समिति की 20 दिसम्बर, 2024 को आयोजित बैठक में समिति के माननीय सदस्यों द्वारा पत्रिका की प्रशंसा करते हुए इसे वर्ष में दो बार निकालने की सलाह दी गई। माननीय मंत्री महोदय ने इस सुझाव को स्वीकार करते हुए यह निर्णय लिया कि पर्यावरण पत्रिका को छमाही आधार पर प्रकाशित किया जाए। तदनुसार, वर्ष 2024 से पत्रिका का प्रकाशन छमाही आधार पर किए जाने के प्रयास किए जाएंगे।

संयुक्त सचिव (राजभाषा प्रभारी) द्वारा पर्यावरण पत्रिका के 71वें अंक का विमोचन

पत्रिका की प्रशंसा करते हुए माननीय सदस्य

*****

मंत्रालय की हिंदी सलाहकार समिति की दिनांक 20 जून, 2023 और 20 दिसंबर, 2023
को आयोजित बैठकों से कुछ दृश्य

इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली–110003